R.N.I.No.-CHHHIN16015 डाक पंजीयन संख्या–छ.ग./बस्तर/28/2015–17

सुदूर आदिवासी क्षेत्र की लोक संस्कृति एवं आधुनिक साहित्य को समर्पित त्रैमासिक

ISSN 2456-2130 Bastar Paati

बस्तर पाति

संपादकीय कार्यालयः–

'बस्तर पाति'

सन्मति इलेक्ट्रीकल्स, सन्मति गली, दुर्गा चौक के पास,

जगदलपुर, जिला–बस्तर, छ.ग. पिन–494001

मो.–09425507942 ईमेल–paati.bastar@gmail.com

जल्दी ही इंटरनेट पर–www.paati.bastar.com

मूल्य पच्चीस रूपये मात्र•अंक–9+10,जून–नवंबर 2016

प्रकाशक एवं संपादक

सनत कुमार जैन

सह संपादक

श्रीमती उषा अग्रवाल 'पारस'

महेन्द्र कुमार जैन

शशांक श्रीधर

शब्दांकन

सनत कुमार जैन

मुख पृष्ठ

श्री सुरेश दलई

प्रभारी उत्तरप्रदेश

शिशिर द्विवेदी

प्रभारी छत्तीसगढ़

भरत कुमार गंगादित्य

सहयोग राशि:–साधारण अंकः पच्चीस रूपये एकवर्षीयः एक सौ रूपये मात्र, पंचवर्षीयः पांच सौ रूपये मात्र, संस्थाओं एवं ग्रंथालयों के लिएः एक हजार रूपये मात्र। सारे भुगतान मनीआर्डर व ड्राफ्ट ***सनत कुमार जैन*** के नाम पर संपादकीय कार्यालय के पते पर भेजें या स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के खाता क्रमांक **10456297588** में भी बैंक कमीशन 50 रूपये जोड़कर सीधे जमा कर सकते हैं।

प्रकाशक, मुद्रक, संपादक, स्वामी सनत कुमार जैन द्वारा सन्मति प्रिन्टर्स, सन्मति इलेक्ट्रीकल्स, सन्मति गली, दुर्गा चौक के पास, जगदलपुर से मुद्रित एवं जगदलपुर के लिए प्रकाशित

सभी रचनाकारों से विनम्र अनुरोध है कि वे अपनी रचनाएं कृतिदेव 14 नंबर फोण्ट में एवं एक्सेल, वर्ड या पेजमेकर में ईमेल से ही भेजने का कष्ट करें जिससे हमारे और आपके समय एवं पैसों की बचत हो। रचना में अपनी फोटो, पूरा पता, मोबाइल नंबर एवं ईमेल आईडी अवश्य लिखें। के प्रत्येक पेज में नाम एवं पता भी लिखें।

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से बस्तर पाति, संपादक मंडल या संपादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। रचनाकारों द्वारा मौलिकता संबंधी लिखित/मौखिक वचन दिया गया है। संपादन एवं संचालन पूर्णतया अवैतनिक और अव्यवसायिक। समस्त विवाद जगदलपुर न्यायालय के अंतर्गत।

लघुकथा/डॉ. शैलचंद्रा/1
पाठकों से रूबरू/2
पाठकों की चौपाल/7
कृष्ण शुक्ल विशेष
एक मुलाकात/कृष्ण शुक्ल/9
कहानी/कोई एक घर/11
कहानी/डरा हुआ महानगर/15
कहानी/एक लड़की की हत्या/19
समीक्षा आलेख/कहानियों पर/21
नक्कारखाने की तूती/59 पत्रिका मिली/60
साहित्यिक उठापटक/61
कविता कैसे बदले तेरा रूप/63
फेसबुक वॉल से/63
लघुकथाएं
नरेश कुमार 'उदास'/6
ओमप्रकाश बजाज/14
डॉ.सतीशराज पुष्करणा/बालकृष्ण गुरू/22
राज हीरामन/23
मधुदीप/24
रऊफ परवेज़/25
गजेन्द्र नामदेव/पवन तनय अग्रहरि/26
उषा अग्रवाल/27
दिनेश कुमार छाजेड़/अशफाक अहमद/28
डॉ. शैल चंद्रा/अहफाज अहमद/29
मोहम्मद जिलानी/30
महेश राजा/31
शिवेन्द्र यादव/आलोक कुमार सातपुते/32
मधु सक्सेना/शिशिर द्विवेदी/33
संतोष श्रीवास्तव 'सम'/देवेन्द्र मिश्रा/34
रचना/अखतर अली/35
अरविन्द अवस्थी/36
पूर्णिमा विश्वकर्मा/37
गोविन्द शर्मा/शिखा यादव/38
मोहम्मद साजिद खान/39
कृष्णचंद महादेविया/अंकुश्री/40
अखिल रायजादा/41
उर्मिला आचार्य/सुरेश तिवारी/42
छत्रसाल साहू/भरत गंगादित्य/43
कृष्णधर शर्मा/44
प्रवेश सोनी/45
के.पी.सक्सेना 'दूसरे'/मनजीत शर्मा/46
वीनू जमुआर/47
प्रहलाद श्रीमाली/48
कमलेश चौरसिया/विमल तिवारी/49
चंद्रकांति देवागंन/माधुरी राऊलकर/50
सुषमा झा/करमजीत कौर/51
हेमंत बघेल/अवधकिशोर शर्मा/52
अलका पाण्डे/अशोक 'आनन'/53
वर्षा रावल/अतुल मोहन प्रसाद/54
डॉ. सतीश दुबे/बकुला पारेख/55
रीना जैन/पूर्णिमा सरोज/56
शिवराज प्रधान/विष्णु कुमार/57
रजनी साहू/58

चर्चित कहानी ''सांता क्लॉस की वापसी'' सर्वप्रथम ''कहानीकार'' मासिक में सन् 1972 में प्रकाशित हुई थी। परन्तु प्रकाशन के समय संपादक महोदय ने कहानी का नाम अपने हिसाब से बदलकर ''धर्म के नाम पर'' कर दिया। यही कहानी राबिन शॉ पुष्प के संपादन में ''सन् 1972 की श्रेष्ठ कहानियां'' में पुनः नाम बदलकर ''बादलों का धुंआ'' के नाम पर प्रकाशित की गई।

लघुकथा एक पाठक के दृष्टिकोण से

उपन्यास, कहानी और लघुकथा तीनों के बीच कैसा संबंध ा है, यह मात्र एक पंक्ति से ही साफ हो जाता है–अनेक लघुकथायें मिलकर कहानी बनाती हैं और अनेक कहानियां मिलकर उपन्यास! इस एक पंक्ति से सबकुछ समझ आ जाता है कि लघुकथा का आकार, प्रकार, भाव, शिल्प और विषयवस्तु कैसी हो! उसका गठन कैसा हो!

सामान्य तौर पर लघुकथा अपने नाम के अनुरूप छोटी से छोटी होती है। कम से कम पंक्तियों में एक संदेश बाहर आता है। कम शब्दों में विशेष बात का कहना कठिन होता है, इसलिए सर्जक अपनी क्षमता के अनुरूप लघुकथा की परिभाषा से छेड़छाड़ करते हैं। जिसे जो अच्छा लगता है या फिर जैसा लिख पाता है, वह उसे ही परिभाषा मानता (मनवाता) है। परिश्रम की कमी ने भी लघुकथा की परिभाषा में बदलाव कर दिया है, तीक्ष्ण दृष्टि और भाषा में कमजोर पकड़ भी इसका महत्वपूर्ण कारण है। वैसे लघुकथा की परिभाषा को निर्धारित करना यानी उसे एक खांचे में फिट करके फैक्टरी का माल बनाना होगा। लघुकथायें दो–चार पंक्तियों में भी अपना असर छोड़ जाती हैं तो एक–दो पन्नों में भी वैसा ही मजा देती हैं। और आकार संबंधी यही फ्लैक्सीबिलिटी बने रहना भी आवश्यक है। एकरूपता नीरसता की जननी है। यह भौतिक स्वरूप की स्थूल परिभाषा है कि लघुकथा आकार में छोटी हो और उसके भीतर ज्यादा से ज्यादा घटनाओं का , दृश्यों का वर्णन हो तब तो अपना उद्देश्य पूर्ण कर लेती हैं साथ ही अपना नाम भी सार्थक करती हैं। लघुकथाओं का बारीक भौतिक विश्लेषण भी अति आवश्यक है जो स्थूल भौतिक स्वरूप को बनाये रखता है। इसके भीतर लघुकथा का शिल्प सौन्दर्य आता है।

हम लघुकथा क्यों लिखते हैं, क्यों पढ़ते हैं ? यह प्रश्न महत्वपूर्ण है। इसके भीतर घुसने का प्रयास करने पर हमें सारे जवाब मिलते जाते हैं। सबसे पहले हम यह सोचने समझने का प्रयास करते हैं कि हम लघुकथा क्यों पढ़ते हैं ? 'समय की कमी' एक तात्कालिक उत्तर बनकर उभरता है। क्या यह सच्चाई है ? एक दृष्टिकोण सही बताता है परन्तु ये सरासर गलत सोच है। क्या कहानियां नहीं पढ़ी जा रही हैं ? क्या उपन्यास नहीं पढ़े जा रहे हैं ? या फिर आलेख नहीं पढ़े जाते हैं ? ऐसे तमाम प्रश्न किये जा सकते हैं। लघुकथा का अस्तित्व जिसे नहीं मानना होता है, वे ही ऐसा उत्तर देते हैं। लघुकथा अपने आप में एक स्वतंत्र विधा है, इसे कहानी की तरह विस्तार दिया जा सकता है परन्तु अपने आप में पूर्णता लिए हुए होती है। संभावना तो क्षणिका के कविता बनने और कविता के महाकाव्य बन जाने की भी होती है। संभावनायें अनंत हैं। पेट तो किसी भी चीज को खाने से भरता है तो क्या सारी चीजों को एक मान लिया जाये ? हम चाहें तो अन्य विधा की भी खोज कर सकते हैं। लघुकथा के समकक्ष है चुटकुला या हास्य लघुकथा।

खैर वर्गीकरण करके कुछ विशेष हासिल नहीं होना है। लघुकथा में मारक क्षमता हो, यह आवश्यक है।

हम लघुकथा इसलिए पढ़ते हैं क्योंकि कुछ ही पंक्तियों में परिवेश के भीतर की विसंगति लेखक के कौशल से प्रगट होती है यह वैशिष्टय ही होता है जो लघुकथा को लघुकथा बनाता है। उत्सुकता मानव का वह स्वभाव है जो उससे दुनिया के सारे काम करवा लेती है और यही उत्सुकता लघुकथा में प्रगट होती है। जब–जब हम उसमें रहस्य का उद्घाटन पाते हैं नयापन, नयी सोच, नये माप, यही तो लघुकथा को पढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। हम अपने पास उपलब्ध समय के अनुरूप रचना का आस्वादन करते हैं। यह अलग बात है, किसी भी रचना को पढ़कर उसे समाप्त कर लेना, अंत जान लेना हर कोई चाहता है इसलिए अपनी सामायिक उपलब्धता के आधार पर रचना पसंद, नापसंद करता है।

अब प्रश्न का दूसरा हिस्सा सामने आता है कि हम लघुकथा क्यों लिखते हैं ? यह हर किसी का निजी मामला है। कई लोग जरा सी बात को घण्टों बताकर भी खत्म नहीं करते और कोई एक ही लाइन में उसी बात को कह देता है। संप्रेषण दोनों में होता है, दोनों तरह से सुनकर समझने वाले भी अलग–अलग होते हैं। कुछेक तो दोनों तरीकों को पसंद करते हैं। हम लघुकथा इसलिए लिखते हैं क्योंकि हम सपाट तरीके से बात कहना जानते हैं।, कटु बोलना जानते हैं, वह कटु जो सच्चा होता है बगैर लाग लपेट वाला।

स्पष्ट कहना लट्ठमार भाषा में होता है परन्तु ऐसा कहना भी वक्त पड़ने पर जरूरी होता है। गोलमोल जवाब कई बार असरहीन हो जाते हैं। हमने देखा है कि चुगली करते वक्त व्यक्ति नाना प्रकार से एक ही बात कहकर घण्टों एक ही विषय पर कह सकता है, जिसके नाम की चुगली चल रही होती है उसके विभिन्न रूप, विभिन्न समय में घटी घटनायें, उसके विभिन्न संवाद, विचार का बारीकी से, अतिश्योक्ति से वर्णन होता है। यह निन्दा रस किसे पसंद नहीं आता है।

और यही चुगली वही सुन ले जिसकी की जा रही है तब; तब क्या होता है ? सीधे–सीधे आरोप लगने शुरू हो जाते हैं। रट्ट–फट्ट आरोप–प्रत्यारोप का दौर होता है। यूं महसूस होता है कि हर कोई ये सोचकर फटाफट बोल रहा है मानो मौका न चूक जाये। इस झगड़े में भी वही चुगली

होती है परन्तु सीमित शब्दों में और तीक्ष्णता लिए हुये। लघुकथा में मारक क्षमता का होना अति आवश्यक है। वह तीक्ष्णता, कटुता, कठोरता ही इसे पहचान देती है। यही वह गुण है जो इसे लघुकथा बनाता है। यही तीखापन, चरपरापन लोगों को लघुकथा खोजकर पढ़ने के लिए प्रेरित करता है।

लघुकथा के विषय क्या हों, यह सोचना बहुत जरूरी है। जिस तरह भूखे को ही दाल–भात का स्वाद मिलेगा और भरे पेट वाले को तरह तरह के नवीन व्यंजन स्वादु लगेंगे। वैसे भी नवीनता की खोज दुनिया के विकास का कारण है, यह समझना, समझाना जरूरी नहीं है।

विसंगति का होना ही लघुकथा का मूल है। इस विसंगति के कई रूप हो सकते हैं। वैचारिक विसंगति, भौतिक विसंगति आदि। विसंगति से मिलता जुलता विषय है दुविधा, वैचारिक संघर्ष। ये घर्षण ही लघुकथा को उज्जवल बनाते हैं। दो घटनाओं के बीच तुलना का चित्रण, दो विचारों के तर्क का चित्रण, दोराहों पर ठिठकने का चित्रण, दिमाग के कुंद हो जाने की जकड़न का चित्रण ही लघुकथा है। एक ओर सीध ो–सीधे चले जाना तो पूर्ण विराम है, अंत है...विचार का....सोच का। वैचारिक घर्षण का चित्रण लघुकथा को श्रेष्ठ बनाता है। अनंत विषय हमारे परिवेश में तैर रहे हैं, उन्हें पकड़कर उनमें देखिए कहां पर वैचारिक दोगलापन टकराता है, वहीं है लघुकथा! हम जहां स्वयं को असहज पाते हैं वहीं है लघुकथा! जहां हम अपने स्वार्थ के चलते सच को झूठ साबित करते हैं वहीं है लघुकथा! सच को झूठ साबित करना जरा कठिन होता है परन्तु झूठ को सच साबित करने का प्रयास जरूर ही ऐतिहासिक होता है। सच और झूठ के बीच के झगड़े सदा ही लघुकथा के विषय होते हैं। वैचारिक कुंठा से ग्रस्त व्यक्ति आकर्षण का केन्द्र होता है क्योंकि वह ऐसे कार्य करता है जिसे समाज में मान्यता नहीं होती है। इन विषयों के संदर्भों को ढूंढने के लिए व्यक्ति को बारीक दृष्टि का स्वामी बनना होगा। दूसरों की गलती ढूंढने वाले व्यक्ति ऐसे काम में अपनी श्रेष्ठता साबित कर सकते हैं। हम चाहें तो एक रचनाकार की रचनाओं से उसका व्यक्तित्व जान सकते हैं। लघुकथाकार वास्तव में एक अनुभवी, समाज द्वारा प्रताड़ित और खुली विचारधारा का स्वामी होगा। उसके निर्णय लेने की क्षमता अत्याधिक सक्रिय होगी। उसे समाज में (अपने सर्किल में) स्वीकार करना जरा कठिन होगा परन्तु उसकी श्रेष्ठता मजबूर करेगी कि उसे स्वीकार करो।

नैराश्य बांटने वाले विषयों पर न लिखा जाये तो अच्छा हो। समाज का वर्तमान दौर वैसे ही बड़ा कष्टप्रद है इसलिए सुकून के पलों की जरूरत है। हम यदि आधे भरे गिलास को आधा खाली गिलास समझकर देखेंगे तो शायद ही कभी संतुष्ट हो पायें। सरकारी नौकरी, दफ्तर, कर्मचारी, सिस्टम और जनता का सामना अनंत लघुकथाओं को जन्म देता है। राजनीति, नेता, चमचे, चुनाव और जनता के बीच अनंत संभवनायें हैं। परिवार में न जाने कितनी लघुकथायें दृष्टिगोचर होती हैं।

वैचारिक दोगलापन सरकारी नौकरी में ज्यादा अच्छे से दिखता है क्योंकि रिश्वतखोरी का अनाज ईमानदारी की शिक्षा देता है, 'सदा सत्य की जीत होती है' के नारे उछालता है। सरकारी नौकरी की चाहत और सरकारी उपक्रमों के लिए घृणा इस सदी का सबसे बड़ा दोगलापन है, सबसे बड़ा झूठ है जो हम सब की आंखों के सामने खेला जा रहा है। आरक्षण, राजाशाही, छुआछूत, ऊंचनीच, भेदभाव, झूठसच सब कुछ तो इस सरकारी कारखाने से निकलता है। बड़ा अफसर इतना बड़ा होता है कि वह पेशाब लगने पर भी अपनी केबिन के बाथरूम में जाता है। सरकारी नौकरी का घमण्ड यूं है कि व्यक्ति अन्य लोगों को जो सरकारी नौकरी नहीं करते हैं उन्हें अपना नौकर मानता है, नीच मानता है। सर्वाधिक वैचारिक प्रदूषण तो यहीं से निकलता है।

शिक्षा का मंदिर, शिक्षक और छात्र ये त्रिकोण भी लघुकथाओं के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराता है। जो शिक्षक ले देकर शिक्षाकर्मी बने हैं वे किस तरह से अच्छी शिक्षा देकर भविष्य गढ़ेंगे ? ऐसी कमजोर शिक्षा व्यवस्था लागू करने के पीछे कौन लोग हैं ? क्या चाहते हैं ?

राजनीति की गंदगी में लोटते भ्रष्ट राजनेता और उनके चमचों की करनी अपने आप में ही लघुकथा भंडार है। हमें भी बस इसमें डुबकी मारकर कुछ मोती ढूंढने हैं।

नौकरी पेशा वर्ग और जनता के बीच खुल्लमखुल्ला गठबंधन है। कितना बड़ा दोगलापन है, देखें जरा– सरकार यानी, सरकारी कर्मचारी और नेता चुनाव से चुनी विधायिका। इसमें सरकारी कर्मचारी देश को लूट रहे हैं। घोर भ्रष्टाचार में डूबे हैं। अपने तुच्छ फायदे के लिए आम लोगों के जीवन का महत्वपूर्ण समय बरबाद कर रहे हैं। इसके बाद भी हम ऐसे भ्रष्टाचारियों को हटाने की बात करें तो उनके नातेदार ही विरोध में आगे आते हैं क्योंकि उनका स्वार्थ जुड़ा है। लाल विचारधारा तो धूप में सर पर टोकरी उठाकर मजदूरी करने वालों और एसी की हवा में टेबल कुर्सी तोड़ने वालों को समकक्ष रखकर आंदोलन करती है। ये बात अलग है कि मजदूर की मजदूरी कभी नहीं बढ़ती उन एसी वालों के अनुपात में। यही तो वैचारिक दोगलापन है। मार्क्सवाद वर्तमान का सबसे बड़ा वैचारिक दोगलापन है। वह साम्यवाद की आड़ में पूंजीवाद के फायदों को जीता है। पूंजीवाद का विरोध और पूंजीवाद से विकसित विकास के उत्पादों को

आसानी से आत्मसात कर लेता है। एक ओर सबके लिए नौकरी चाहता है और दूसरी ओर नौकरी पैदा होने के कारकों को पूंजीवादी मानता है। शोषण के विरूद्ध शंखनाद करता है और सरकारी शोषण उसे नहीं दिखता है। सरकारी शोषण के दमन के लिए अपनी आवाज नहीं उठाता है। लाल झण्डा जनता के खून से रंगा है। अपने को जबरन स्थापित करने के लिए इसने न जाने कितना खून बहाया है।

इसी तरह शिक्षा के क्षेत्र में भी हम वैचारिक गतिरोध पाते हैं। जिस हिन्दी के कारण हम एक दूसरे से जुड़े हैं उसे ही बोली में बदला जा रहा है। शिक्षकों में अब अपने पेशे के प्रति समर्पण नहीं रहा है। अब वे नैतिकता से परे हैं। माता पिता अपने बच्चे को वही कराना चाहते हैं जो वे चाहते हैं। आदि, आदि।

विषय हमारे आसपास ही हैं, जरूरत है हमें उन्हें पहचानने की और उसे एक ऐसे सांचे में ढ़ालने की जिसमें उबाऊपन न हो, बासीपन न हो, भाषा चुटीली हो, तीक्ष्ण हो और जरा हटकर हो। व्यंग्यबाण चलते हों वैसी भाषा शैली सर्वथा उचित है। शिल्प कैसा हो, यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए। वैसे एक बात ध्यान दें, हर व्यक्ति की भाषा शैली, परोसने की शैली भिन्न होती है इसलिए अन्य से अपनी तुलना न करें बल्कि अपनी स्वभाविक अभिव्यक्ति दें।

शिल्प यानी सजावट, किसी भी रचना को शाब्दिक रूप से उत्कृष्ठ बना सकती है। हम मुहावरों से, अलंकारो से और रोचक बिम्बों से अपनी लघुकथा सजा सकते हैं। पर ध्यान यह रखना है कि अनावश्यक बोझ सजावट के नाम पर न लादा जाये। अब हम कुछ उदाहरणों के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं।

लघुकथा की सामान्य या यूं कहें सर्वमान्य शैली है तुलनात्मक शैली (द्वंदात्मक शैली), किसी भी दो घटनाओं की तुलना करके कथा लिख देना; हमारे साहित्यकारों की पसंदीदा शैली है। ज्यादातर यहीं से शुरूआत होती है और इसे ही अपनाकर लेखन किया जाता है। इस शैली में वास्तव में द्वंद छिपा है, वैचारिक द्वंद। लेखक स्वयं समझने का प्रयास कर रहा होता है कि सच्चाई क्या है ? दो घटनाओं की तुलना में एक विचार के अर्थ को अनर्थ में बदलते दिखाने का काम है द्वंदात्मक शैली का। द्वंद भी दो तरह का होता है– मजबूरी से उत्पन्न और बेशर्मी से उत्पन्न! ये दोनों उदाहरणों से आप ही आप समझे जा सकते हैं।

व्यंग्यात्मक शैली–द्वंदात्मक शैली के बाद इस शैली का प्रयोग होता है। वैसे भी कटाक्ष करके अपनी बात कहना, संप्रेषण की दृष्टिकोण से ज्यादा सुगम होता है। ऐसी बात लोग तेजी से ग्रहण करते हैं। यहां व्यंग्य को हास्य में बदलने से रोकना होता है वरना लघुकथा चुटकुले में बदल जाती है, व्यंग्य के तीर भोथरे हो जाते हैं। देखिए कैसे–

''हट्टी कट्टी तो लग रही हो। चलो घर के बर्तन मांज दो। पैसे देती हूं, खाना भी खिलाऊंगी।''

''पागल हो गई हो क्या बाई ? मैं ऊंचे कुल की तुम्हारे घर के जूठे बर्तन मांजूंगी ?''

या फिर–

''हट्टी कट्टी सुन्दर दिख रही हो। आज यहीं रूक जाओ, नये कपड़े और पैसे भी दूंगा।''

''पागल हो क्या ? मैं तुम्हे धंधेबाज औरत लगती हूं ?''

या फिर–

''हट्टी कट्टी तो लग रही हो। चलो घर के बर्तन मांज दो। पैसे देती हूं, खाना भी खिलाऊंगी।''

''पागल हो क्या बाई ? हाथ गंदे करने का काम कौन करेगा ?''

या फिर–

''हट्टी कट्टी तो लग रही हो। चलो घर के बर्तन मांज दो। पैसे देती हूं, खाना भी खिलाऊंगी।''

''पागल हो गई हो क्या बाई ? सब काम बाहर के लोग कर देंगे तो तुम क्या करोगी ?''

देखा न आपने व्यंग्य को हास्य में बदलते! यह हास्य चुटकुले में भी बदल सकता है। यदि यही भिखारन कहे–

''चलो हम दोनों भीख मांगते हैं तुम भी खाली और मैं खाली।''

या फिर कहे–

''एक बार मुझ जैसे भीख मांगने हाथ फैला कर देखो, पूरी जवानी और हट्टा–कट्टापन खत्म हो जायेगा।''

इतने सारे अंत के साथ आप ही निर्णय लें कि कौन अंत मारक है और व्यंग्य की पराकाष्ठा है।

शिक्षात्मक शैली–यह शैली नये नवाड़ियों के कलम थामते ही निकलने वाली रचनाएं हैं। जब व्यक्ति हर किसी को शांति के साथ जीने का उपदेश देना चाहता है तब ऐसी ही रचनाएं जन्म लेती हैं। सीधे सपाट उपदेश देने वाली रचनाओं को लोग तेजी से पढ़कर तेजी से आगे बढ़ जाते हैं या यूं कहें कि ऐसी रचनाएं दिमाग को, मानव मन को चोट नहीं पहुंचाती हैं, अतिसाधारण श्रेणी की होती हैं ये रचनाएं। इनका संदेश होता है सदा सत्य बोलो, धोखा मत दो, प्यार से रहो, शिक्षा ग्रहण करो, शिक्षक महान आदि।

वह पढ़ना चाहती थी पर मां मर गई बचपन में, बाप दारूबाज था, शिक्षक ने फीस भरी। आज आई ए एस है सलाम शिक्षक।

कहानी है, विशिष्टता है परन्तु प्रस्तुतिकरण को दोष न दें,

ये शिक्षात्मक शैली की कमी है।

सपाट शैली–घटना का हूबहू चित्र वह भी ब्लैक एण्ड व्हाइट रंगों से, पाठक पर शून्य असर डालता है और लेखक के खजाने में एक नया कांच का टुकड़ा जोड़ता है। जब तक घटना के वर्णन में तीखापन नहीं उभरेगा तब तक रचना असरकारी नहीं होगी। सपाट बयानी रचना को कमजोर करती है। देखें जरा–

''राघव स्कूल जाना है। चलो उठो नौ बज गये।''

''मम्मी अच्छा नहीं लग रहा है।''

''जल्दी उठो, नखरा नहीं।'' कहकर मम्मी ने उसकी चादर को खींचा तो उसके चेहरे पर हाथ लग गया। चेहरा तप रहा था। उसे तुरंत याद आया कि कल उसने बरसते पानी में ब्रेड लाने भेजा था।

यही अगर इस तरह से हो तो–

स्कूल का समय हो चुका था। मां डरते–डरते बच्चे को उठाने का प्रयास कर रही थी। उसने प्रेम से राघव के चेहरे को छुआ, वह तप रहा था। उसे खुद पर खीज हुई कि बरसते पानी में ब्रेड लेने राघव को क्यों भेजी, घर में पराठे ही बना लेती।

बोझिल शैली–इस शैली में लेखक अनावश्यक रूप से लघुकथा में उन घटनाओं को डाल देता है जिसका मूल कथा से कोई लेना देना नहीं होता है। लेखक कई बार (हमेशा) ये मानकर चलता है कि पाठक बेवकूफ है। शायद इसलिए वह घटनाओं को कुछ ज्यादा ही स्पष्ट करता है, उनमें तारतम्य स्थापित करने का बोझिल प्रयास करता है। पाठक निरा बेवकूफ नहीं है भैया! उसके पास भी दिमाग है, वह सोच सकता है कि सीढ़ियों से उतर कर ही कोई नीचे आयेगा या दरवाजे खोलकर ही बाहर निकल सकता है। कई बार एक ही बात बार–बार लिखी जाती है, जो पाठक को रचना न पढ़ने को पर मजबूर करती है। देखें जरा–

मैं आज कुछ ज्यादा ही बोरिंग महसूस कर रहा था। कुछ देर छत पर खड़ा होने के बाद नीचे घर की चौखट पर कुर्सी डालकर बैठ गया। तभी एक तंदुरूस्त और सुंदर सी औरत मेरे घर की चौखट के सामने आ खड़ी हुई। उसके कंधे पर एक पोटली थी। कपड़े उसके अच्छे और साफ सुथरे थे। मेरे चेहरे पर प्रश्नचिन्ह मढ़ा था। तभी उस औरत ने हाथ फैलाया और कहा–''कुछ खाने को मिले भैया! इस भूखे तन को पालना है। दो दिनों से कुछ खाया नहीं है।''

अब मेरे चौंकने की बारी थी। उसकी इन बातों से मैंने उसे गौर से देखा। वह कहीं से भी गरीब नज़र नहीं आ रही थी। अच्छी भली तंदुरूस्त औरत थी वह। मेरे मुंह से बेसाख़्ता निकल गया–''हट्टी–कट्टी तो जवान औरत हो, यूं भीख मांग रही हो, शर्म नहीं आती ? काम करो कुछ। मेहनत की आदत डालो। यूं भीख मत मांगों।''

''कोई काम भी तो नहीं देता। इस जवान औरत की जवानी ही देखते हैं लोग। भूखा पेट नज़र नहीं आता है।'' उस औरत ने अपना पेट उघाड़ कर दिखा दिया, साथ ही चेहरे पर बेचारगी ओढ़ ली।

मैं उसकी इस हरकत से अचकचा गया। खुद को संभालकर बोला–''चलो घर के बर्तन मांज दो। मैं तुम्हें खाना और कपड़े सबकुछ देता हूं।'' मेरे यूं कहते ही मानों बम फूट गया हो। क्या मैंने कुछ गलत कह दिया ? मैं उस औरत को रात बिताने तो नहीं कहा, जो वह तिलमिला कर बोली।

''किसी भूखे को खाने नहीं दे सकते तो उसका मजाक मत उड़ाओ। उसका सम्मान तो बनाये रखो। मैं ऊंचे जात की औरत तुम्हारे घर के जूठे बर्तन मांजूं ? तुम्हें जरा भी शर्म है या नहीं ?'' ऐसा कह कर वह पांव पटकती चली गई।

मैं सोच में पड़ गया कि मैंने क्या गलत कहा ? भीख मांगना सम्मान की बात है और बर्तन मांजना अपमान! मैं दरवाजे के भीतर जाकर सोफे में धंस गया।

दो पंक्तियों की लघुकथा को आधे पन्ने तक खींच कर लेखक क्या बताना चाह रहा है ? यहां पाठक परले दरजे का बेवकूफ है या फिर लेखक...!

कई लोग विषयानुसार भी लघुकथाओं को भी वर्गीकृत करते हैं जो कि मेरे दृष्टिकोण से अनुचित है। विषय तो दुनिया में अनंत हैं, कहां तक वर्गीकृत किया जा सकता है ? लेखन शैली के आधार पर उपरोक्त वर्गीकरण अपने आप में पूर्ण है।

इन शैलियों के अलावा एक शैली और होती है और वह है नकारात्मक शैली। इस तरह की शैली के लेखक मेरी नज़र में खुद ही हीन भावना से ग्रसित होते हैं इसलिए दुनिया को भी नकारात्मक दृष्टिकोण से ही देखते हैं। नकारात्मक शैली की सभी लघुकथाओं में और अन्य शैली की लघुकथाओं में एकरूपता नज़र आती है क्योंकि समस्त लघुकथाएं समाज का नकारात्मक पक्ष ही इंगित करती हैं, वही दिखाना चाहती हैं पर देखिए अंतर, कितना गंभीर अंतर होता है। नकारात्मक शैली की लघुकथाओं से समाज में भी नकारात्मकता फैलती है। देखें जरा–

वह दौड़ पड़ा, इतनी तेजी के बाद भी उसे लग रहा था कि उसे कोई पकड़ न ले। अपनी बस्ती से काफी दूर आ चुका था। फिर भी इस कदर डरा हुआ था मानों उसे पकड़ लेगा कोई न कोई आकर।

हांफता हुआ रूका था, एक साथ हर ओर देख रहा था। कितना अधिक सावधान था वह, तब भी डरा हुआ।

आखिर भाग क्यों रहा है वह ? कुछ पल शांति के साथ बिताने के बाद वह सोचा।

''मेरे पिता ही तो हैं वो। क्या मेरी स्थिति इतनी खराब है कि उनके इलाज के लिए पैसे नहीं दे सकता ? बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिए कितने पैसों की जरूरत होगी ? वैसे भी जब वो अपने गांव से मेरे पास रहने आये थे तो मैंने उन्हें कितने भारी मन से रखा था। मेरी पत्नी यानी उनकी बहू रोटी बना कर नहीं दे पा रही थी। पंद्रह दिनों के बाद का रिजर्वेशन था और वे आठ दिनों में ही चले गये थे। वो चले क्या गये थे, भगा दिये गये थे मेरे और अपनी बहू के द्वारा। उन्होंने मुझे पढ़ाया–लिखाया, नौकरी लगवा दी। मैं अपने गांव से दूर हूं और घर की पूरी जवाबदारियों से पूरी तरह दूर। उन्होंने गांव की जमीन और घर में भी मेरा हिस्सा मेरे नाम कर रखा है। तब क्यों मैं भाग रहा हूं ?''

''बड़ी मुश्किल से कमाया है मैंने, मैं नहीं दूंगा पैसा! कोई कैसे ढूंढेगा मुझे। मैं तो निकल लिया हूं अपने घर से। मेरी वापसी तभी होगी जब सबकुछ निपट जायेगा।''

अब आप ही सोचिये क्या इतनी नकारात्मकता फैलाकर क्या मिलेगा। माना कोई न कोई ऐसा ही होगा समाज में, पर क्या पूरा समाज ऐसा ही है ? क्या भारतीय समाज ऐसा है ? अपवाद स्वरूप दुनिया में क्या–क्या नहीं है, पर क्या समाज का सामान्य नियम ऐसा है ? समाज के लगभग हर परिवार ऐसी ही सोच रखते हैं ? इतनी नकारात्मकता परोस कर कहीं हम अपने दिशाहीन होते समाज को गलत दिशा पर तो नहीं हांक रहे हैं ?

जैसा कि मैंने पहले कहा व्यक्ति का व्यक्तित्व उसकी रचनाओं में साफ तौर पर झलकता है, चाहे हम इस बात को कितना भी नकार लें। वर्तमान में एक सोच समाज में महामारी की तरह फैली है कि हमें व्यक्ति के लेखन से उसका सम्मान करना चाहिए न कि उसके व्यक्तित्व को देखना चाहिए। कैसी दोहरी सोच है उन बुद्धिजीवियों की एक ओर उनका दावा है कि वो अपने साहित्य से समाज को बदलने में सक्षम हैं और दूसरी ओर खुद ही अपने साहित्य से अछूते हैं। अपनी नंगई को छिपाने के लिए पूरा संसार हमाम बनाने को आतुर विद्जन! हम यूं नकारात्मक तभी लिख सकते हैं जब हम खुद को जस्टीफाई कर रहें हों, जब हम उस तरह का जीवन जी रहे हों। हमारी केवल लिखने के लिए ही ऐसा नहीं लिख सकते, जब तक हम भीतर से ऐसे न हों। हमने देखा कि लघुकथाएं हमारे जीवन के पलों की दास्तान हैं। हम किस तरह जीवन को देखना चाहते हैं किस तरह का जीवन बनाना चाहते हैं, यह खुद हम पर ही निर्भर होता है। नकारात्मक, सकारात्मक, बोझिल, सपाट कैसा हो जीवन ? लघुकथा के विभिन्न रंग हैं उन रंगों से जीवन रंगीन बने, यही कामना है।

बाढ़

नरेश कुमार 'उदास'
आकाश–कविता निवास
मकान नं.–54, गली नं.
–3, लक्ष्मीपुरम, सेक्टर
बी–1 (चनौर)
पोस्ट बनतलाब,
जिला–जम्मू–181123
मो. 9418193842

सुखिया की खपरैल की झुग्गी का नामों निशान मिट चला था। बुढ़िया इस दुनिया में अकेली थी। उसका एकमात्र पुत्र गत वर्ष दरिया की निर्मम लहरों में खो गया था। बहकर आती लकड़ी को पकड़ने के चक्कर में। वह सोचता था, लकड़ी लाकर मकान बनायेगा।अब रह गई थी सुखिया। इस साल बाढ़ ने कहर ही बरपा दिया। बुढ़िया के बर्तन तक बाढ़ की भेंट चढ़ गये। वह रोती–बिलखती पगलाई सी रह गई। देखते–देखते पल भर में सब बह गया था।

सरकार राहत बांट रही थी। गांव का मुखिया सरकारी कारिन्दे को साथ लिए घूम रहा था।

''सुखिया! यहां अंगूठा लगा दे। सरकारी आदमी आया है तुम्हें पांच सौ देगा।'' बुढ़िया ने सिर पर दुपट्टे का घूंघट खींचकर चुपचाप मुखिया के आदेशानुसार अंगूठा लगा दिया।

बुढ़िया क्या जाने कि उसने 500 रूपये लेकर एक हजार की रकम पर अंगूठा लगा दिया था।

विचार विमर्श

दो साथी आपस में विचार–विमर्श करते–करते गर्मागर्मी पर उतर आये थे। एक साथी ने कहा–''सारा दोष हमारी संकीर्णता का है हम पिछले साठ वर्षों में जात–पात के चक्करों से छूट नहीं पाये तो तरक्की क्या करेंगे भला?''

दूसरे ने जोश में भरकर कहा–''यही विविधता तो हमारी पहचान है।''

पहले ने प्रश्न दागा था–''जात–पात, ऊंच–नीच के भेद खत्म होने चाहिए। हमें मात्र भारतीय कहलाने में फख्र अनुभव होना चाहिए न कि जातिमूलक शब्द जोड़कर।''

दूसरे ने भड़क कर कहा था–''यह हमारी प्राचीन संस्कृति का चलन है। हमारे वंशजों का गुणगान निहित है। इन उच्च जातियों के सम्बोधन में।''

''यही भेदभाव हमें पीछे ले जा रहे हैं। हम पिछड़ रहे हैं, जबकि जापान, चीन बहुत आगे निकले जा रहे हैं।'' पहले ने पुनः उसे तर्कसंगत भाव से समझाया।

''तुम मुझे हिन्दू ही नहीं लगते ?'' दूसरा आग उगलने लगा था।

''हां.....हां, मैं न हिन्दू हूं, न मुसलमान हूं, और न ही ईसाई। मैं तो मात्र एक इंसान हूं। सच्चा भरतीय।'' पहले साथी ने भावावेग से भरे–भरे कहा था।

पाठकों की चौपाल

भाई सनत जी, नमस्कार

आपकी भेजी पत्रिका मिली। आभारी हूं। आप पत्रिका की साज सज्जा पर भी विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं। यह सराहनीय प्रयास है। रचनाओं का स्तर भी थोड़ा सुधारें। कविताओं और गजलों को बाक्स में देंगे तो रचनाओं में सुन्दरता बढ़ेगी। आप पत्रिका निकालकर एक श्रेष्ठ कार्य कर रहे हैं। इसके लिए आपको बधाई।

नरेश कुमार उदास, वनतलाब, जम्मू, 9419768718

नरेश कुमार जी, नमस्कार

सर्वप्रथम आपके पत्र व फोन का धन्यवाद। आप जैसे पाठक व लेखक ही ऊर्जा स्रोत हैं बस्तर पाति के। जम्मू जैसी दूरस्थ जगह से हमें आपने याद किया धन्यवाद। आपके समस्त सुझावों पर अमल किया जायेगा मेरा आश्वासन है।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

सनत जी, नमस्कार

आदिवासी क्षेत्र से साहित्य की मशाल जलाए रखना एक कठिन काम है। आपने अपनी सम्पादकीय टीम के साथ यह बीड़ा उठाया है। बहुत बहुत साधुवाद।

पद्मश्री मेहरून्निसा परवेज़ पर केन्द्रित अंक पढ़कर अच्छा लगा। आवरण पृष्ठ का चित्र देखकर मन गदगद हो गया। चित्रकार ने रंगों का अच्छा संयोजन किया है। चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' बहुत अरसे बाद पढ़ने को मिली। पद्मश्री धर्मपाल सेनी पर केन्द्रित अंक पढ़कर अच्छा लगा। ऐसे व्यक्तित्व के बारे में जानकारी प्रकाशित कर हम पाठकों का ज्ञानवर्धन किया। एक सत्पुरूष को समाज से रूबरू कराया है। ऐसे व्यक्तित्व को प्रणाम। डॉ सुदर्शन प्रियदर्शनी की कहानी खाली हथेली, अनुपम रचना है जो दिल को छू गई। लेखिका को साधुवाद। डॉ. शुभ्रा श्रीवास्तव की कहानी एक महिला के अंतर्द्वंद का चित्रण करती है। कविताएं बेटी का ब्याह, तुम ईश्वर की प्रतिभा हो, अनुभवों का प्रश्न जैसी रचनाएं पाठकों को जरूर जागृत करेंगी।

दिनेश कुमार छाजेड़, रावतभाटा, राजस्थान

दिनेश जी, नमस्कार

आपके द्वारा भेजे गये दो पत्रों को एक साथ प्रकाशित किया जा रहा है। आपका धन्यवाद जो आपने प्रतिक्रिया स्वरूप पत्र लिखा। पद्श्री ध र्मपाल सेनी जी से जब आप मिलेंगे तो आपको पता चलेगा कि वे कितने सरल स्वाभाव के हैं। जितना सरल उनका व्यक्तित्व है उतना ही गहरा उनका ज्ञान है। उनकी कविताओं में जबरदस्त दर्शन है। उनके ऊपर केन्द्रित अंक निकाल कर हम लोगों स्वयं को गौरवान्वित किया है। ऐसे सरल व्यक्ति को सादर नमन।

डॉ. सुदर्शना प्रियदर्शनी जी की कहानी जब मैंने ई मेल पर पढ़ी तब ही मैंने मान लिया था ये कहानी मील का पत्थर साबित होगी। और वही हुआ कई फोन और ईमेल प्राप्त हुए। फिर एक दिन सुदर्शना जी का फोन आया। उनकी शुद्ध हिन्दी सुनकर विश्वास ही न हुआ कि वे यूएसए में रहती हैं। उन्होंने पत्रिका की तारीफ की और आश्वासन दिया कि वे रचनात्मक और आर्थिक सहयोग करेंगी।

शुभ्रा जी की कहानी अगले अंक में और आने वाली है। उनकी रचनाओं में जबरदस्त बात है। रचनाकारों के लिए पत्र आता है और मैं खुश हो जाता हूं। पूरा योगदान रचनाकार का ही है फिर भी न जाने क्यों हमें भी खुशी होती है।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

संपादक जी, नमस्कार

बस्तर पाति का एक अंक अचानक कहीं से प्राप्त हुआ। मैंने पढ़ा और उसमें कहानी प्रतियोगिता के बारे में सूचना पढ़ी। मैंने अपनी कहानी भेजी और मुझे उस प्रतियोगिता में द्वितीय पुरूस्कार प्राप्त हुआ। उसके पश्चात मैं नियमित रूप से पत्रिका पढ़ रही हूं। इसके आलेख और कहानियां प्रभावित करते हैं। रचनाओं का स्तर काफी ऊंचा है। विषय भी सटीक हुआ करते हैं। श्रेष्ठ संपादन हेतु बधाई।

श्रीमती बकुला पारेख, इंदौर, म.प्र. 9826952602

बकुला जी, नमस्कार

आपको साधुवाद जो आपने कितनी सरलता से अपनी बात कह दी। हम लोगों की व्यस्तता के चलते आपको उस कहानी प्रतियोगिता का प्रमाणपत्र नहीं भेजा जा सका है। आपकी कहानी को पुरूस्कार मिलना ही था क्योंकि आपकी सरलता आपकी कहानी में भी तो थी। पत्र हेतु ध न्यवाद।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

संपादक जी, नमस्कार

कई पत्रिकाओं के साथ बस्तर पाति का अंक भी प्राप्त हुआ। परन्तु पहले बस्तर पाति को पढ़ना शुरू किया क्योंकि इससे पुराना संबंध है। बहस(कहानी के तत्वः नाटकीयता और बुनावट) पूरा पढ़ गया। कहानी और उसके आवश्यक तत्व नाटकीयता पर मुझे इससे पूर्व इतना विशद वर्णन पढ़ने को नहीं मिला था। मन विभोर हो गया। जैसी कि आदत है, लेखक को बधाई देने को सोचा, लेख के आगे पीछे, पत्रिका के अंदर सब तरफ खोजने की कोशिश की, कहीं बहस के लेखक का नाम नहीं मिल पाया। अस्तु संपादक जी के माध्यम से ही उन्हें साधुवाद देता हूं। पद्श्री धर्मपाल सेनी जी पर केन्द्रित इस अंक में उनसे संबंधित मुलाकात, आत्मकथन, और कविताएं अच्छी लगीं तथा ज्ञानार्जन भी हुआ। नरसिंह महांती के बनाए चित्र अच्छे लगे। ***अंकुश्री, रांची, झारखण्ड***

अंकुश्री जी, नमस्कार

आपको आपके विश्लेषणात्मक पत्र के लिए धन्यवाद। बहस कॉलम किनके द्वारा लिखा जा रहा है, कई लोगों ने जानना चाहा। कई तो सीध ो–सीधे मुझे ही बधाई दे देते हैं जबकि ये विद्वतापूर्ण लेखन मेरा नहीं है। ये लेखन जिन महानुभाव का है उन तक आपकी बात पहुंचा दी गई है। उनके पास कहानी के संबंध में हजारों पन्नों का मैटर है। उनसे बात करने बैठना यानी दो से तीन घण्टा यूं ही बीत जाना होता है। वे मेरे गुरू भी है। उनका ही आशीर्वाद है इस पत्रिका का मूर्त रूप में आना। उन्होंने ही मुझे सबसे पहले बताया था कि कहानी में 'दिखाना' और 'बताना' में क्या अंतर होता है। इस पंक्ति में कही बात समझने में ही मुझे साल भर लग गया था और वे इस समझाईश के बहाने न जाने कहानी के क्या–क्या पहलू बताते गये। कहानी लिखने वाला उन पहलूओं को कभी सोच भी पाता होगा, इसका मुझे विश्वास ही नहीं है। धीरे–धीरे उन्होंने अपनी कही बातों को लिपिबद्ध किया है। शायद बस्तर पाति के बीस अंकों के बाद उनके उन आलेखों पर केन्द्रित पुस्तक ही आ जाये।

नरसिंह महांती जी ऐसे कलाकार हैं जो अपनी कृतियों को अपने परिजनों को यूं ही बांट देते हैं, शायद इसलिए ही उनकी कूची और रंगों में सरस्वती का निवास है। वे एक महान चित्रकार हैं। अपने प्रचार और प्रसार से दूर। वे हमारे बस्तर की शान हैं।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

सनत जी, नमस्कार

पद्मश्री धर्मपाल सेनी जी से मुलाकात काफी दिलचस्प है। डॉ. सुदर्शना प्रियदर्शनी जी की कहानी 'खाली हथेली' तो अंक की जान है। इतनी अच्छी कहानी आपने बस्तर पाति में प्रकाशित की, उसके लिए आपको बहुत–बहुत धन्यवाद। नारी मन की परत खोलने वाली कहानी ने सचमुच दिल को छू लिया। डॉ. सुदर्शना प्रियदर्शनी जी को ढेर सारी बधाईयां देती हूं। डॉ.अर्चना जैन जी का दुष्यंत कुमार जी की ग़ज़लों पर आलेख विवेचनात्मक है। डॉ शुभ्रा श्रीवास्तव की कहानी 'सजा' अच्छी कहानी है। कविताएं भी श्रेष्ठ हैं। आगामी अंकों के लिए अग्रिम बधाईयां।

माधुरी राऊलकर, नागपुर, महाराष्ट्र

माधुरी जी, नमस्कार

आपके द्वारा भेजी गई बधाईयां मैंने सुदर्शना जी को स्केन करके यूएसए भेज दी हैं। और उनसे हुई बातचीत में भी मैंने आपका जिक्र किया था। मैं एक बात के लिए क्षमाप्रार्थी हूं कि व्यस्तता के चलते आपके ग़ज़ल संग्रह की समीक्षा नहीं लिख पाया हूं। नागपुर से ही कमलेश चौरसिया जी का कविता संग्रह भी मिला था उसे भी पढ़कर रख दिया हूं समीक्षा नहीं लिख पा रहा हूं। पत्रिका प्रकाशन टोटली शौकिया है अतः अपनी जीवनचर्या और व्यापार के बाद ही काम कर पाता हूं।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

भाई सनत कुमार जैन

आपके भेजे बस्तर पाति के अंक पढ़ जान कर प्रसन्नता हुई। प्रदेश के आखिरी कोने से आप साहित्य की मशाल जलाये हुए हैं और नये सिरे से अंचल की साहित्यिक प्रतिभाओं और वरिष्ठों को भी जोड़ने–संभालने और संगठित करने का प्रयास कर रहे हैं। एक अंक आपने लाला जगदलपुरी पर केन्द्रित किया था, अच्छा लगा। नसीम आलम नारवी जी को विशेष स्थान दिया है, और इसी संदर्भ में उनके परिचय में लिखे मेरे आलेख को भी आपने प्रकाशित किया है। शुभकामनाएं व साधुवाद।

लोकबाबू, भिलाई, 9977030637

लोकबाबू जी, नमस्कार

छत्तीसगढ़ के साहित्यिक आसमान के आप लोग तो स्तंभ हैं। सर आप लोगों की प्रेरणा कहीं न कहीं काम करती है, तब तो लोग अपने उत्साह को कायम रख पाते हैं। आपके इस पत्र के बाद आपकी लम्बी कहानी बस्तर पाति के अगले अंक में प्रकाशित हुई थी। आप लोगों ने छत्तीसगढ़ में अनेक लोगों को साहित्य से जोड़ने का जमीनी कार्य किया है। थानसिंह वर्मा जी से मुलाकात होने पर वे हमेशा आप जैसे विद्वानों की चर्चा करते थे। वैसे वे खुद भी साहित्य के जमीनी कार्य से जुड़े हुए हैं। यहां वे बीजापुर में काफी समय तक पदस्थ थे। हम लोग उनके सानिध्य में कई बार कार्यक्रम निर्धारित किया परन्तु किसी न किसी कारणवश वे नहीं आ पाये। एक बार प्रभात मिश्रा जी भी राजनांदगांव से जगदलपुर पधारे थे। सभी सीनियर साहित्यकारों में एक बात कॉमन पायी मैंने कि सभी लोग एकदम से सरल स्वाभाव के हैं। उन्हें देखकर, मिलकर, जानकर लगता ही नहीं कि हम ऐसे विद्वान के साथ खड़े हैं। अब एकबार आपसे भी मुलाकात करना है। आप आईये जगदलपुर। हम लोग एक बड़ा सा कार्यक्रम रखते हैं, पुस्तक विमोचन या वैचारिक सम्मेलन का जिसमें आपको सादर आमंत्रित करेंगे।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

संपादक जी, नमस्कार

विख्यात शायर जगदलपुरी जी, मेहरून्निसा परवेज, रऊफ परवेज, खुदेजा खान जैसे साहित्य को नई दिशा देने वाले शहर जगदलपुर जिसकी बस्ती में आज भी रचनात्मक गूंज कायम है, से बस्तर पाति का निकलना परम्परा को सींचते रहना है। आपके सौजन्य से जो भी अंक प्राप्त हुए वे इस तथ्य के साक्ष्य हैं कि आपने हर विधा की रचनात्मक खुशबू से पाठकों को परिचित कराया है।

डॉ. सतीश दुबे, 766–सुदामा नगर, इंदौर, 9406852341

सतीश जी, नमस्कार

आपने ध्यानपूर्वक पत्रिका पढ़ी और उसमें प्रकाशित सामग्री पर अपने विद्वतापूर्ण टिप्पणी दी, धन्यवाद। आपने अपने पत्र में साहित्य जगत के उन नामों का जिक्र किया है जो वास्तव में हमारे क्षेत्र के विद्वान जन हैं। इन नामों में एक नाम आपने खुदेजा खान का लिखा है, वह नाम वाकयी में इस क्षेत्र के लिए विशिष्ट है। वे अपनी ग़ज़ल, कविता, कहानी, आलेख के माध्यम से अपनी विशिष्ट पहचान बना चुकी हैं। बस्तर पाति का अगला अंक उन पर ही केन्द्रित है। हम चाहते हैं कि बस्तर पाति का हर अंक हमारे क्षेत्र के महान साहित्यकारों पर केन्द्रित हो।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

माननीय सनत जी,

आपके द्वारा भेजी बस्तर पाति प्राप्त हुई। आपको सहस्र धन्यवाद। इस अंक में आपने पद्मश्री धर्मपाल सेनी जी के सम्पूर्ण लाइफ फीचर, उनके साहित्यिक और सामाजिक योगदान की विस्तृत जानकारी, बहुमूल्य व प्रेरणास्पद लगी। साथ में आपके विद्वतापूर्ण सम्पादकीय काफी रोचक व विचारोत्तेजक लगा। दुष्यंत कुमार की गज़लों के ऊपर केन्द्रित लेख बहुत ही अच्छा है। इसी अंक में मेरे द्वारा अग्रेसित कहानी 'खाली हथेली'(डॉ. सुदर्शना प्रियदर्शनी, ओहयो यूएसए) को भी पढ़ने मिला। आपको बहुत बहुत धन्यवाद।

शिवराज प्रधान, दुस्सीपाड़ा चाय बागान, रामझोडा, प. बंगाल, 9734042876

शिवराज जी, नमस्कार

आपका साधुवाद जो आपने हमें डॉ. सुदर्शना प्रियदर्शनी की कहानी 'खाली हथेली' उपलब्ध कराई। इस कहानी से हमारी बस्तर पाति को एक विशिष्ट पहचान मिली। मेरा ख्याल है कि पत्रिका समस्त सदस्यों को यह कहानी पसंद आई है। वैसे भी पत्रिका अपनी रचनाओं से पहचानी जाये ये महत्वपूर्ण होता है वरना देश में तो अनेक पत्रिकाएं उपलब्ध हैं। श्रेष्ठ रचना पत्रिका को भी श्रेष्ठता प्रदान करती है। आपके माध्यम से एक प्रसिद्ध व योग्य लेखिका से हमारा संपर्क हुआ। धन्यवाद। आपने उनकी एक कहानी और भेजी है। वह अगले किसी अंक में आयेगी। आप अहिन्दी भाषी होते हुए भी हिन्दी में रचनाएं लिखते हैं, ये हम हिन्दी भाषियों के लिए प्रेरणा की बात है। और विचार करने की भी।

आप के पास तो अपने क्षेत्र की अनेक ग्रामीण रचनाएं होंगी, आपके अनुभव होंगे उन्हें कहानी रूप देकर प्रकाशन हेतु प्रेषित करें। ये काम सबको पसंद आयेगा। वैसे भी रचनाएं, खासकर कविताएं तो गांव के हवापानी में ही होती हैं। वहां वे आप ही आप दिमाग में उभर आती हैं। हमें तो बस अपनी कलम पकड़नी होती है। रचनाएं पन्नों पर अवतरित होती जाती हैं। शेष शुभ।

सनत कुमार जैन, सम्पादक बस्तर पाति

एक मुलाकात : कृष्ण शुक्ल

'एक मुलाकात' व 'परिचय' श्रृंखला में इस पिछड़े क्षेत्र बस्तर से जुड़े हुए और क्षेत्र के लिए रचनात्मक योगदान करने वाले व्यक्ति के साथ बातचीत, उनकी रचनाएं, रचनाओं की समीक्षा और उनके फोटोग्राफ अपने पाठकों के साथ साझा करेंगे।

कृष्ण शुक्ल बस्तर क्षेत्र का वो नाम है जो अपने समय में बहुत चमका और वर्तमान में लगभग गुम हो गया। यह हमारे क्षेत्र के वर्तमान साहित्यकारों की कमजोरी ही मानी जायेगी जो अपने अग्रजों का काम और नाम भी सहेज न पाये। देश के प्रत्येक हिस्से में वहां के साहित्यकारों का साहित्य सहेजा जा रहा है, उन साहित्यकारों के नाम पर पुरूस्कार आरंभ किये गये हैं जिनके माध्यम से उन साहित्यकारों का नाम वर्तमान पीढ़ी के सामने है। खैर! ये शायद समय का ही दोष माना जा सकता है, वर्तमान तो दूसरों की लाश पर खुद को स्थापित करने वाला है।

कृष्ण शुक्ल जी वो व्यक्ति हैं जो किसी नाम की चाहत में अपना रचनाकर्म नहीं करते बल्कि समाज को और स्वयं को दिशा देने में रचनारत रहते हैं। बगैर मोह माया के एक साधु की तरह, एक योगी की तरह। हमारी वर्तमान पीढ़ी को यह ही नहीं मालूम था कि हमारे ही छोटे शहर में एक ऐसा कहानीकार मौजूद है जो हमारे दुर्गम क्षेत्र से बैलगाड़ी युग में अपनी कहानियों को देश भर की समस्त पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित करवा कर अपना लोहा मनवा चुका था। उनकी कहानियां उस वक्त की श्रेष्ठ पत्रिकाओं कादिम्बनी, सारिका आदि में प्रकाशित हो चुकी थीं। उनके बारे में लगातार खोजबीन करते हुए पता चला कि वे तो मेरे घर से जरा सी दूरी पर ही रहते हैं। यह जानकर और भी दुख हुआ। न जाने कितने ही साहित्यकारों से लगातार बातें होती रहीं पर किसी ने न बताया उनके बारे में न ही उनके मित्रों ने न ही मेरे मित्रों ने। साहित्य की इस वर्तमान बेरूखी और बेदर्दी का यह साक्षात दर्शन साहित्य के भविष्य की भयावह तस्वीर दिखाता है। उस तस्वीर में कोई पुराना नहीं है सब के सब नये चेहरे हैं। कृष्ण शुक्ल जी का संकोची स्वाभाव और लाइमलाइट से दूर रहने की चाहत के चलते वे बस्तर पाति के सातवें अंक बदले नौवें अंक में आ पाये हैं। उनका साहित्य के प्रति समर्पण देखिए, उनके पास अनेक साहित्यकारों की तस्वीरें हैं परन्तु खुद की एक भी नहीं है। उनके पास पुराने जमाने की यादों का जखीरा है। पुराने साहित्यकारों बस्तर की सांस्कृतिक धरोहर लाला जगदलपुरी, डॉ. धनंजय वर्मा, कहानीकार शानी, समरलोक पत्रिका की सम्पादिका मेहरूनिन्सा परवेज़, ग़ज़लकार रऊफ परवेज़, लक्ष्मीचंद जैन, पूर्णचंद्र रथ आदि प्रसिद्ध लोग तो हैं ही इसके अलावा भी अनेक साहित्य प्रेमियों की सूची दिमाग में संलग्न है। सूची के साथ उनके साथ बिताये गये वक्त की ताजा यादों की खुशबू फैल जाती है। आइये हम उनसे कुछ प्रश्नों के उत्तर जानने के बहाने उनसे बातें कर नजदीक बैठने की कोशिश करते हैं।

सनत जैन–हिन्दी का पाठक पत्रिका/पुस्तक क्यों नहीं खरीदता है? कहीं ऐसा तो नहीं है कि उसकी पसंद के विपरीत सामग्री जबरन परोसी जा रही है ? मोटे उपन्यास जिन्हें लुगदी साहित्य कहा जाता है वे तो बहुत बिकते हैं।

कृष्ण शुक्ल–आज का युग कम्प्यूटर एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया से अधिक जुड़ा हुआ है। पाठक के पास समयाभाव के कारण पढ़ने में रूचि कम होती जा रही है। रही बात मोटे उपन्यासों की तो वह लाइब्रेरी में ही जमा होकर रह रहे हैं। प्रारंभ से बच्चों की शिक्षा अंग्रेजी मीडियम से होने के कारण भी हिन्दी के साहित्य एवं पत्रिकाओं में रूचि किशोरावस्था से कम होती जा रही है।

सनत जैन–प्रकाशक अपनी पत्रिका का खर्च कैसे निकाले ? वास्तविक पाठक तक कैसे पहुंचे ? उन्हें कैसे जोड़ें ?

कृष्ण शुक्ल–पूर्व काल में धर्मयुग, सारिका, कहानी, नई कहानियां, नई सदी आदि पत्रिकाओं के पाठक थे अतः बेचने के बाद बुक सेलर पैसे भी भिजवाता था। वर्तमान में पाठक तक पहुंचना एक टेढ़ी खीर है।

सनत जैन–वर्तमान साहित्य परिदृश्य के बारे में टिप्पणी।

कृष्ण शुक्ल–कुछ लेखक तो मोबाइल में ही अपनी रचना उकेरने लगे हैं।

सनत जैन–हिन्दी लेखन में पाठकों की कमी का क्या कारण नजर आता है ?

कृष्ण शुक्ल–सही है हिन्दी के पाठकों की संख्या वर्तमान में सीमित होती जा रही है। प्रारंभिक शिक्षा अंग्रेजी में होने कारण, जैसाकि मैंने पहले कहा हिन्दी की ओर सोच कम होती जा रही है। विशेषकर युवा पीढ़ी की।

सनत जैन–आजकल उत्तरआधुनिकता के नाम पर इंटरनेट से कट एण्ड पेस्ट रचनाएं आ रही हैं, क्या इनसे साहित्य का भला हो सकता है ?

कृष्ण शुक्ल–उत्तर आधुनिकता के नाम पर इंटरनेट से कट एण्ड पेस्ट से साहित्य तो समृद्ध होने से रहा और पाठकों के अभाव में साहित्य का भला होने से रहा।

सनत जैन–वर्तमान में नया साहित्यकार कहां से साहित्य की शुरूआत करे ? क्या पढ़े, पुराने स्थापित साहित्यकारों को या फिर नये साहित्यकारों को ? लेखन में मेहनत से सुधार होता है या फिर पढ़ते–लिखते आ जाता है ?

कृष्ण शुक्ल–नया साहित्यकार की पैदाइश ही पठन से शुरू होती है। जितना अधिक पढ़ेगा उसकी साहित्यिक चेतना उतनी ही जागृत होगी। रही बात पढ़ने की वह सब कुछ पढ़े जो उपलब्ध हो। कोई भी रचना अच्छी या बुरी नहीं

होती। नहीं तो सआदत हसन मंटो आज भी अग्रणी कहानीकारों में शुमार नहीं होते। सच कहूं पढ़ना जरूरी है पर लेखन बहुत हद तक मेहनत पर निर्भर होता है।

सनत जैन–कहानी में क्या महत्वपूर्ण है भाषाशैली, कथ्य, संदेश, एजेण्डा या फिर पाठक का मूड ?

कृष्ण शुक्ल–कहानी में सबसे महत्वपूर्ण 'कथ्य' ही है। हां भाषाशैली ऐसी हो जो आम पाठक के पल्ले पड़े। रहा सवाल संदेश, एजेण्डा का तो उसे राजनीतिक पार्टी और ध ार्मिक पार्टी के लिए छोड़ देना चाहिए।

सनत जैन–आप साहित्य की कौन सी विधा को खुद के लिए अनुकूल मानते हैं ?

कृष्ण शुक्ल–मेरा जवाब है मैं साहित्य में कहानी लेखन को पसंद करता हूं। हालांकि मैं रेडियो के नाटक, लेख आदि भी लिखता रहा हूं, परन्तु कहानी मेरी अंतरात्मा से जुड़ी है।

सनत जैन–क्या साहित्य में टोटके होते हैं ?

कृष्ण शुक्ल–मैं टोटके को नहीं जानता।

सनत जैन–क्या साहित्य में गॉडफॉदर का होना जरूरी है ?

कृष्ण शुक्ल–मैंने किसी को अपना गॉडफॉदर नहीं बनने दिया। सबसे बड़ा गॉडफॉदर उसका अध्ययन है।

सनत जैन–साहित्य के कब तक जिन्दा रहने की संभावना है ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्य शाश्वत है। हां, उसका स्वरूप परिवर्तित होता रहता है। हमको इसे स्वीकारना भी चाहिए।

सनत जैन–साहित्य की वर्तमान परिपाटी में 'तू मेरी थपथपा, मैं तेरी थपथपाता हूं' कहां तक सही है ?

कृष्ण शुक्ल–मैं नहीं मानता। हां, यह चलन में दिखाई पड़ता है।

सनत जैन–क्या साहित्य में सफलता के लिए किसी विशेष गुट से जुड़ा होना जरूरी है ?

कृष्ण शुक्ल–मैंने कभी किसी गुट विशेष को तरजीह नहीं दिया। कलाकार का लेखन ही उसे गुटों से जोड़ता है।

सनत जैन–साहित्य में लगातार छपने वाला ही साहित्य सुधि है या फिर गुमनाम पाठक ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्यिक सुधि लेने वाला सबसे बड़ा है पाठक। इस संबंध में एक स्थानीय व्यक्ति का उल्लेख करना चाहूंगा स्व. सोमनाथ रथ का। मैंने उन्हें हमेशा पढ़ते हुए पाया। मेरी कहानियों के भी वे पाठक थे साथ ही आलोचक भी। जिससे मैं हमेशा सही लेखन की ओर बढ़ा।

सनत जैन–वर्तमान साहित्य काल्पनिक है या वास्तविक ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्य हमेशा वास्तविक ही होता है पर उसमें कल्पना की कोटिंग की जाती है।

सनत जैन–वर्तमान साहित्य वर्तमान का सही ढंग से दस्तावेजीकरण कर पा रहा है ?

कृष्ण शुक्ल–वर्तमान साहित्य भी कुछ न कुछ आनेवाले समय में अपनी छाप छोड़ेगा ही।

सनत जैन–सदा ही मुख्य अतिथि, विशिष्ट अतिथि बनने बनने वाला ही सच्चा साहित्यकार है ?

कृष्ण शुक्ल–मुख्य अतिथि और विशिष्ट अतिथि बनने वाले कुछ पेशेवर लोग ही होते हैं। साथ ही वे आसानी से उपलब्ध भी हो जाते हैं।

सनत जैन–साहित्य किसके लिए लिखा जाता है ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्य लिखा जाता है उन सामान्य लोगों के लिए जिनकी जिन्दगी से रचना बनती है। पर आज के समय में शायद ही वे उसे पढ़ पाते होंगे।

सनत जैन–साहित्यिक वरिष्ठता उम्र होती है या फिर उसका रचा साहित्य होता है ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्यकार की वरिष्ठता उम्र नहीं बल्कि उसका रचित साहित्य होता है। नहीं तो श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी एक कहानी से अमर नहीं हो जाते।

सनत जैन–अध्ययन से साहित्य रचा जाता है या फिर आप ही आप होता जाता है ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्य अध्ययन तो मांगता ही है पर कुछ हद तक कुछ लोगों में आप ही आप होता है। क्योंकि मैं अपने बारे में ही सोचता हूं कि परिवार में किसी को साहित्य से मतलब नहीं था। बचपन में पत्रिकायें मांग–मांग के पढ़ता था।

सनत जैन–पुराने लोगों द्वारा रचित साहित्य पढ़ने से किस तरह ज्ञान में वृद्धि होती है ? साहित्यिक योगदान में मात्र रचना ही होता है या फिर पढ़ना, पढ़ाना ?

कृष्ण शुक्ल–पुराना साहित्य, नया साहित्य कुछ नहीं है। सभी साहित्य है और सबकुछ पढ़ना है। लिखना एक गौण विषय है, पढ़ना जरूरी है। सबसे बड़ा साहित्यकार पहले एक अच्छा पाठक ही होता है।

सनत जैन–हम साहित्य के विस्तार में किस तरह से योगदान दे सकते हैं ?

कृष्ण शुक्ल–साहित्य का विस्तार समय के साथ अपने ढंग से ही होगा।

कोई एक घर

शनिवार होने के वजह से स्कूल आधे दिन का था। वैसे भी मिसेस मेहता का मन काम में नहीं लग रहा था। छुट्टी की घंटी बजते ही वे स्कूल से निकल गई।

शायद रवि आ गया हो ? आज ही तो आने को कह गया था। घर पर पहुंचकर उन्होंने दालान पर चावल साफ कर रही नौकरानी से रवि के आने के बारे में पूछा लेकिन नौकरानी का नकारात्मक उत्तर सुनकर वे पास पड़े मोढ़े पर बैठ गयी और रवि का प्रतीक्षा करने लगीं।

'खाना लगाऊं दीदी ?' नौकरानी ने उनसे पूछा।

'नहीं, अभी कुछ देर में रवि आ जाएगा तब साथ ही खा लेंगे।' उन्होंने अनमयस्कता से कहा। वैसे भी खाने के कौर पिछले दो तीन दिनों से उन्हें कांटे की तरह चुभते रहे है।

—— रवि आज आने को कह गया था फिर अबतक आया क्यों नहीं ? शायद ट्रेन लेट गयी हो। उन्होंने अपने मन में उठे प्रश्न का उत्तर स्वयं ही दे दिया था। समय गुजारने के उद्देश्य से वे घर का निरीक्षण करने लगी। दीवारें सूनी थीं। कुछ फर्नीचर बेतरतीबी से यहां वहां फर्श पर बिखरे थे। इस घर में आये पूरा सप्ताह भी नहीं गुजरा था। शायद इसीलिए वे इससे पूरी मानसिकता से सम्बद्ध नहीं हो पायी थी। वैसे भी किसी नये घर से सम्बद्ध होने के लिए एक लम्बे समय की आवश्यकता होती है। घर का दालान, कमरे, खिड़कियां, दरवाजे से लेकर सीढ़ियां तक हर अंग अपने आप में अजनबीपन लिए होते है। पास पड़ोस के अनजान चेहरों से तादात्म्य स्थापित करने में लम्बा अवधि लगती है। फिर भी सारी बातें उनके लिए विशेष महत्व नहीं रखतीं क्योंकि यह उनका अपना घर है।

अपना घर– शायद इसे अपना कहने के लिए उनके पास बहुत कुछ था। इस घर के निर्माण में उनकी बरसों की उत्कट इच्छा समाहित थीं। जिसे बनाने में उन्होंने अपनी कमाई लगा दी है। गृहविहीन होने का कलंक उन्होंने हमेशा के लिए अपनी जिंदगी से मिटा डाला था। जिसका उन्हें महज अहसास ही नहीं था वरन् जिंदगी के नाजुक मोड़ में जिसे वे भोग भी चुकी थीं।

उन्हें लगा, जैसे रवि कुछ देर में आकर उनसे जाने के पूर्व छोड़ गए प्रश्न का उत्तर मांगेगा और जबरन आसमान से मांस के लोथड़े पर झपट्टा मारती चील की तरह उनके इस घर को ले उड़ेगा। तब इस घर को अपना कहने के लिये उनके पास कुछ नहीं बचेगा। वे उसी स्थिति में पुनः पहुंच जायेंगी, जिस स्थिति में वे कुछ दिनों पूर्व थीं।

उन्होंने दलान पर सूप में चावल फटक रही नौकरानी की ओर देखा। जिसके सामने कुछ हटकर एक गौरैया टुकुर–टुकुर उसकी ओर देख रही थी। वह कुछ आगे बढ़ने की कोशिश करती लेकिन सूप की फटकार के साथ फिर उड़कर पीछे जा पहुंचती थी। उन्हें अपनी स्थिति गौरैया की तरह लगी। वे जितना आगे बढ़ने का प्रयत्न करतीं, समय की फटकार उन्हें उतना ही पीछे धकेल देती थी।

उन्होंने प्रवेश द्वार की चौखट की ओर देखा जिसमें नवगृह प्रवेश के दिन लगाया आम के पत्तों का तोरण अभी भी सूखकर लटका हुआ था। फिज़ा में लोबान की महक अभी तक समायी हुई थी।– सब कुछ पिछले इतवार की बात तो थी। जब नवगृह प्रवेश के दिन जलपान के लिये आए मेहमानों से, जिसमें रिश्तेदार, जूनियर अध्यापिकाएँ और शहर के गणमान्य लोग थे, सारा घर उल्लासमय हो गया था। बच्चों के रोने, चीखने और कमरों में पैरो की धमक से सारे घर में अजीब वातावरण निर्मित हो गया था। उनके लिए सब एक ऐसा नया अनुभव था जो पिछले वर्षों की शिक्षिका की नौकरी और स्कूल के सैकड़ों बच्चों के बीच रहकर भी उन्हें न हो पाया था।

रवि ने भी उस दिन जाने कितनी दौड़धूप की थी। अपने कुछ दोस्तों के साथ मिलकर उसने सारे मेहमानों की खातिर में कोई कसर नहीं छोड़ी थीं। किसी को भी शिकायत का कोई अवसर नहीं दिया था। उन्हें लगा जैसे रवि ने सारी दौड़धूप सिर्फ मेहमानों के लिए नहीं वरन् मां के वर्षों बाद सच हुए सपनों के लिए की थी।

अपना घर– मिसेज मेहता का सपना ही तो था, जो उनकी आंखें की पुतलियां में, उसी तरह के वर्षों से स्थिर था, जिस तरह किसी मरे हुए सांप की आंखों में मारने वाले की तस्वीर जो उसकी आखों में मरने से पहिले उतर आती है। शायद यह सपना उन्होंने उस दिन देखा था, जिस दिन पति का घर छोड़कर वे एक ऐसे चौराहे पर आकर खड़ी हो गयी थी। जिसकी एक सड़क उनके पिता के घर और दूसरी पति के घर की ओर जाती थी। लेकिन दो सड़कों के बारे में उन्हें कुछ भी मालूम नहीं था। वे इतना भर जानती थीं कि तीसरी सड़क के किनारे उनकी एक सहेली है जो किसी शिक्षण संस्थान में काम करती है। उन्होंने अपने कदम उधर ही बढ़ा दिये थे।

आश्रय के लिए क्षणभर को उन्हें पिता की याद भी आयी थी। लेकिन अग्नि को साक्षी देकर सारा जीवन साथ निभाने को संकल्प करने वाले पति ने जब साथ नहीं दिया तो कन्यादान के पश्चात् भारमुक्त महसूस होने और पति के घर को स्वर्ग समझने की सलाह देने वाले पिता कब तक सहारा दे सकते थे। लिहाज़ा पिता अथवा किसी अन्य रिश्तेदार के

आश्रय की जूठों पत्तलों की ओर न ताकना ही उन्हें उचित जान पड़ा था।

जबतब वे सहेली के घर नहीं पहुंच गई, तब तक उनके मन में एक दहशत सी बनी रही। उन्हें लगता जैसे कोई रीछ पीछे से आकर उन्हें और रवि को घसीट कर पुनः उसकी खोह में ले जायेगा जहां से वे किसी तरह मुक्त होकर आयी थीं। रीछ के बारे में उन्होंने बचपन में न जाने कब सुन रखा था कि–रीछ जंगल में इक्की दुक्की औरत को पाकर अपनी खोह में उठा जे जाता है और फिर उसके तलवे चाटकर जख्मी कर देता है ताकि वह चल फिर न सके।

पति का घर––रीछ की खोह की तरह ही तो था। जिसमें वे रीछ के द्वारा बलात न ले जायी जाकर माता पिता की मर्जी से डोले में बिठाकर बाजे गाजे के साथ भेज दी गई थीं। तब उनकी आंखों में पति का प्यार, रूठने मनुहारने के सैकड़ों सपने बसे हुए थे। लेकिन कुछ ही दिनों में सारे सपने उसी तरह सिमट गये थे, जिस तरह मकड़ी का जाला उसकी मुंह से सिमट जाता है। उन्होंने जब देखा कि पति की जीवन–संगिनी की नहीं वरन् समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए एक ऐसी औरत की जरूरत थी जो लेागों की जुबान बंद रखने के लिए ताले की तरह प्रयुक्त हो सके। पति ने उन्हें कुछ दिया तो वे थी निरन्तर–उपेक्षाएँ–क्योंकि उसके मन में पत्नी के स्थान पर कोई और प्रतिष्ठित थी।

घर के सदस्यों द्वारा डाले गये मोटी तहों वाले पर्दे और कमरों की दीवारों को भेदकर सारी बातें उन तक पहुंचने में समय लगा था। शायद इसीलिए शुरू में उन्होंने पति द्वारा बरती जा रही उपेक्षाओं को विशेष तूल नहीं दिया था। लेकिन ऐसी बातों को ढंककर रखा जा सकता हैं ? पर्दे की तहें कुछ ही दिनों में झिलझिली और दीवारें पोली हो गई थीं।

उन्हें जबतक सारी बातें स्पष्ट हुई, तब तक उनकी गोद में रवि आ चुका था। एक ऐसे पिता का पुत्र जिसे पिता की गोद कभी नसीब नहीं हुई। पिता ने जिसे कभी चुमकारा नहीं। जिसकी पेशानी बाप के होंठों के स्पर्श से सदा वंचित रही।

परिवार के लोगों ने भी उसी तरह के व्यवहार किये, जिस तरह पति के द्वारा उपेक्षित पत्नी से किया जाता है। भद्दी से भद्दी गालियां और ताने सुनना उनकी दिनचर्चा में शामिल हो गये थे। भोजन के नाम पर कुछ रूखा सूखा डाल दिया जाता और सारे दिन नौकरानी की तरह काम लिया जाता था। जिस पर भी वे न कभी रोयीं न चिल्लायीं और न किसी से शिकायत की। किसी बंधी नदी के जलाशय की तरह हमेशा ही शांत रहीं।

लेकिन जलाशय का पानी उस दिन खौलने लगा और बांध की दीवारों के परखच्चे उड़ गये थे। तब रवि बीमार था। ज्वर की तपन में छटपटाते और भुने मांस के लोथड़े की तरह झुलसते रवि की देह को वे सारी रात सीने से लगाये पड़ी रही परंतु परिवार की किसी सदस्य ने उनकी ओर न तो आंखें उठाकर देखा और न ही किसी चिकित्सक को बुलाकर रवि को दिखाया।

सुबह होने पर वे स्वयं उसे लेकर सरकारी अस्पताल न गई होती तो आज तक रवि की नाजुक हड्डियां किसी मरघट की मिट्टी की तह में दबी गल चुकी होतीं। अस्पताल से लौटती हुई वे मन में घर छोड़ने का निश्चय कर चुकी थीं। रवि के स्वस्थ होने पर जब वे घर छोड़ने लगी थीं तब उनकी आँखों में समायीं दृढ़ता को देखकर कोई भी उन्हें रोकने का साहस नहीं कर पाया था।

शायद औरत होने की वजह से उनकी सहेली ने उनके दुख को अच्छी तरह समझा था। उसने न केवल उन्हे सांत्वना दी वरन् जीविका – उपार्जन के साधन प्राप्त होने तक अपने घर में आश्रय भी दिया। तत्पश्चात् जिस शिक्षा संस्थान में वह शिक्षिका थीं, वहीं शिक्षिका की नौकरी प्राप्त करने में उन्हें मदद भी की।

नौकरी और शिक्षा संस्थान की ओर मिले दो कमरों के छोटे से क्वार्टर से उनकी गुजर बसर एवं आवास की चिंता हल हो गयी थी। घर के काम और पुत्र की देखभाल के लिये उन्होंने एक नौकरानी तय कर ली थी। जिसके पास दिन में पुत्र को छोड़कर वे स्कूल जातीं और शाम को भरा हुआ सीना लिये लौटती तो पुत्र को सीने से चिपटा लेती थीं। सीने से पुत्र को लेकर अंर्तद्वन्द हमेशा उनके अचेतन में चलता रहता था और मन रस्से पर चलती नटिनी की तरह अनिश्चय की डोर में दांयें बांये डोलता रहता था।

––रवि से उन्हें बेहद मुहब्बत थी क्योंकि उन्होंने अपनी कोख में उसे नौ महीने खून पिलाया था। रवि से उन्हें सख्त नफरत थीं क्योंकि वह एक ऐसे कमीने आदमी की औलाद थी, जिसने उन्हें किसी बाजारू औरत की तरह खेलकर छोड़ दिया था। फिर अय्याश आदमी की तरह पलट कर भी नहीं देखा कि उसके शरीर का कतरा किस गटर में पड़ा हैं। ऐसे अवसर पर रवि के चेहरे में वे क्या देंखती कि उनकी भरी हुई छातियां सूख जाती थीं। उन्हें अपनी देह के हर हिस्से से घृणा की लहरें उठती हुई महसूस होती थीं और रवि उस बच्चे की तरह घृणित लगने लगता था, जिसे कोई कुंवारी मां लोगों की आंखे बचाकर अनजान चौखट पर डाल जाती है।

रात के अर्न्तद्वन्दों की छाप उन्होंने कभी दिन पर नहीं पड़ने दी। हर सुबह के साथ उनके जीवन में संघर्ष का एक दिन शुरू होता था। वे सारे दिन कक्षाओं में मेहनत से बच्चों को पढ़ातीं और खाली समय शैक्षणिक योग्यता बढ़ाने के लिए

अध्ययन करती थीं। कुछ वर्षों की लगन एवं परिश्रम से उन्होंने शिक्षा, इतिहास और हिन्दी साहित्य में स्नातकोतर उपाधियां अर्जित कर लीं। जिस शिक्षण संस्थान की प्रायमरी कक्षाओं में अध्यापन से उन्होंने अपना नवजीवन प्रारंभ किया था, वहीं वर्षों में वे हाईस्कूल की प्राचार्य हो गई। चेहरे में हमेशा मुस्कुराहट लिए मेहता दीदी से गंभीर, अल्पभाषी मेहता मैडम हो गई। जिनसे दृष्टि मिलाने का साहस पुरानी अध्यापिकाएँ भी नहीं कर पाती थीं। दो कमरे वाले छोटे से क्वार्टर छोड़कर प्राचार्य के बंगले में आ गयीं।

रवि की ओर से भी इस अवधि में वे कभी उदासीन नहीं रही। उन्होंने उसकी शिक्षा का विशेष ध्यान रखा। कोई उसे बिना बाप की औलाद न कहे इसलिए मांग में सिंदूर और हाथों में चूड़ियां सहेजे रखा। ज्वर से पीड़ित रवि को गोद में लेकर मन में जो संकल्प कभी उन्होंने किया था, उसे पूरा किया। फलस्वरूप कल का नवजात रवि आज शहर का प्रसिद्ध बाल – विशेषज्ञ डाक्टर रवि मेहता हो गया था।

समय ने जहां उन्हें इतना कुछ दिया, वहीं उन पर कुछ छाप भी छोड़ी थी। उनके स्याह वालों में कई स्थानों पर सफेदी उतर आयी थी। आंखों में मोटे फ्रेमवाला चश्मा चढ़ गया था। माथा, गाल और गले की चमड़ियों में झुर्रियां पड़ गयीं थी और पीठ पर छोटा सा कूबड़ आया था।

उनकी जीर्ण अवस्था को देखकर एक दिन रवि ने उनसे कहा– मां, अब मैं कमाने लगा हूँ। तुम्हें नौकरी छोड़कर आराम करना चाहिए। पुत्र के मुंह से इतना सुनना उनके लिए आंशिक तृप्ति का क्षण भर था। एक क्षीण मुस्कान उनके चेहरे पर क्षणभर के आयी। न जाने कितने वर्षों से इन शब्दों को सुनने के लिए उनके कान आतुर थे। लेकिन कुछ ही पल में चेहरे पर उभरा सुकून लोप हो गया था।

दूसरे दरजे में लम्बी यात्रा कर चुके यात्री से जिसे मंजिल में पहुंचने के लिए कुड घण्टे औश्र शेष हों, कोई कहे कि आप बहुत थक गए हैं, अब आप प्रथम श्रेणी में आ जाइये, तब लम्बी यात्रा के दौरान दूसरे दरजे में व्यवस्थित हो चुका यात्री, जिस तरह की असुविधा महसूस करता है कुछ उसी तरह की असुविधा उन्होंने रवि की बातों से महसूस की थी। पुत्र को उन्होंने हां अथवा ना में स्पष्ट उत्तर देने की बजाय इतना ही कहा था कि बेटे अध्यापन मेरे लिए मात्र रोजी कमाने के जरिया ही नहीं वरन् एक साधना भी है और कोई भी साधना बीच में नहीं छोड़ी जाती। रवि निरूतर हो गया था।

एक दिन उन्होंने रवि से घर बनवाने के संबंध में अपनी इच्छा व्यक्त की। एक बड़ी राशि उन्होंने अपनी भविष्य निधि से निकालकर बैंक में जमा कर ली थीं। 'मां, मैं जिस तरह की नौकरी में हूँ, उसमें न जाने भविष्य में कहां कहां भटकना पड़े। ऐसी स्थिति में तुम्हें अकेली तो मैं छोड़ूंगा नहीं, अपने साथ लिये जाऊंगा। फिर मकान बनाने की झंझट में क्यों पड़ती हो।' उनसे रवि ने कहा था। फिर उनकी आंखों में उसे न जाने क्या दिखा था कि वह चुप हो गया था।

'कुछ कार्यों के पीछे महज उद्देश्य न होकर वर्षों की भावनाएं भी हुआ करती हैं बेटे।' उन्होंने रवि से कहा था। कुछ दिनों के पश्चात् स्वयं रवि ने एक बिकाऊ जमीन के बारे में उन्हें बताया जिसे उन्होंने खरीद लिया। फिर घर बनाना प्रारंभ हुआ और इसके साथ ही उनकी दिनचर्चा में हर सुबह बन रहे घर को देखने जाना और जुड़ गया। नींव की खुदाई से लेकर छत पर क्रांकीट डालने के कार्य के बीच शायद ही दिन ऐसा गया हो, जब वे वहां से अनुपस्थित रही हों।

घर के बनने और नवगृह प्रवेश के बीच के समय में शायद एक दिन भी ऐसा नहीं गया था जब उन्होंने रवि से उसकी सज्जा, आंगन में लगाये जाने वाले पौधे आदि को लेकर बातचीत न की हो। सूनी रातों में वे घंटो अकेली जागकर नवगृह प्रवेश के दिन आमंत्रित किये जाने वाले मेहमानों की सूची बनाती रही थीं ताकि कोई परिचित छूट न जाए। उनके मन की तहों में सोयी वर्षों पुरानी परम्परायें उन दिनों जाग गई थीं। उन्होंने पूजा–हवन आदि के न जाने कितने कार्यक्रम तय कर रखे थे। जिसकी व्यवस्था की जिम्मेदारी रवि पर थी। आधुनिक परिवेश में रवि को कभी कभी लगता, जैसे मां के द्वारा किये जा रहे ये सारे खर्च अनावश्यक हैं लेकिन उनकी सम्मोहित आंखों को देखकर वह कुछ भी कहने का साहस मन में बटोर पाता था।

नवगृह प्रवेश का दिन बीते दो दिन हो चुके थे। पिछले दिनों की शारीरिक एवं मानसिक थकान से कुछ स्वस्थ महसूसती मिसेज मेहता लान पर कुर्सी डालकर संध्या में बैठी हुई थीं। तभी उल्लासित सा रवि आया।

'क्यों क्या बात है। आज बहुत खुश हो ?' उन्होंने रवि की ओर देखकर पूछा।

'माँ, मैं ही नहीं तुम भी खुश होगी यदि यह जान लोगी कि बच्चों की बीमारियों से संबंधित सेमिनार में मैं कल दो दिनों के लिए दिल्ली जा रहा हूँ। पूरे प्रान्त का हमारे अस्पताल के ही दो लोग प्रतिनिधित्व कर रहे हैं''। रवि ने कहा था।

'निश्चय ही खुशी की बात है। तेरे साथ दूसरा कौन जा रहा हैं ?'

'अपने अस्पताल की ही डाक्टर है अंजली शाह। तुम उससे मिलेगी मां ?'

'हाँ––हाँ––तुम कहोगे तो जरूर मिल लूंगी। क्या वह भी बच्चों की डाक्टर है ?'

'हाँ, वैसे देखने में वह खुद बच्ची लगती है। मुझे विश्वास है कि उससे मिलकर तुम जरूर खुश होगी। अभी अस्पताल में ही होगी। मैं फोन से कह देता हूँ कि तुमने उसे रात में खाने पर बुलाया है। यहां आने पर कल के बारे में उससे बातें भी हो जायेंगी।'

'माँ तुम्हें वह कैसी लगी ?' रात में डाक्टर अंजली के जाने के बाद रवि ने उनसे पूछा था।

'अच्छी है।'

'हमारी ट्रेन सुबह करीब चार बजे जाती है। और.....माँ, मैंने अंजली से विवाह करने का निश्चय किया है। तुमसे आशीर्वाद मैं दिल्ली से आकर लूंगा।'

'.....'

'अच्छा मां गुड नाइट।'

'गुडनाइट––'उन्होंने धीरे से कहा और अपने कमरे में जाकर सोने का प्रयत्न करने लगी। नींद सारे दिन की थकान के बावजूद उनकी आंखों से दूर थी। रवि जब प्रातः घर से जा रहा था तब भी वे जाग रहीं थीं। लेकिन वे कमरे से बाहर नहीं निकली। उन्हें उनींदी आंखों में देखकर कहीं वह चिंतित न हो जाये। वैसे भी वे मन में उभरी उदासीनता से रवि को अवगत कराना नहीं चाहती थीं।

रवि चला गया था और उसके साथ ही उनके मन का सुकून और आंखों की नींद भी चली गई थी। वे बार बार सोचती रहीं कि रवि को आने पर क्या कहेंगी। यदि वे रवि को विवाह के लिये मना करती है तो हो सकता है रवि उनकी बात नहीं माने तब वह उन से दूर हो जाएगा और स्वीकृति देने पर उनका यह घर रवि और अंजली का हो जायेगा। तब वे अपने घर में ही मेहमान हो जायेंगी और उनके मन में समाया अपना घर खंड खंड होकर बिखर जायेगा। रवि ने उन्हें समझने की कोशिश क्यों नहीं की ? उन्हें अपनी समझ पर हंसी आने लगी थी–आखिर लोग सुनेंगे तो क्या सोचेंगे। बाल बच्चों की ब्याह शादी की बातों से तो मां बाप खुश होते हैं। फिर उनके मन में इस तरह की भावनायें क्यों आ रही हैं ?

वे अपने प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं तलाश पातीं। उन्हें लगता है, जैसे अचानक कोई अंधड़ आकर घर की क्रांकीट की छत उड़ा ले जायेगी और दीवारों को भरभरा कर गिरा देगी। तब अपना कहने के लिये घर के नाम पर खाली जमीन और उसमें पड़ा मलबा भर रहा जायेगा। जिस खोह से कभी वे जान–बचाकर भाग आयी थीं, उसी खोह का रीछ रवि की खाल ओढ़े उन्हें ढूंढता हुआ आ पहुंचेगा और खुले मैदान से उन्हें घसीटता हुआ पुनः अपनी खोह में ले जायेगा और पैरों के तलवे चाटकर फिर कैद कर लेगा।

चावल साफ करने के बाद नौकरानी अंदर चली गयी थी। कुछ टूटे चावल फर्श पर बिखरे पड़े थे। उस क्षण की प्रतीक्षा में न जाने कब से खड़ी गौरेया चावल के दानों की ओर लपकी। उसने चावल के कुछ दाने चुगे और उड़कर पास के एक पुराने वृक्ष में बने घोंसले की ओर जा उड़ी। कुछ देर के लिये गौरये के बच्चों के शोर से दोपहर की खुश्क खामोशी भंग हुई। बच्चों को दाने खिलाकर गौरेया पुनः लौटी और चावल के कुछ दाने चुगने के बाद फिर घोंसले की ओर जा उड़ी। घोंसले से बच्चों को शोर उभरा। उन्हें लगा, जैसे गौरेया का सारा अस्तित्व घोसले में दुबके बच्चों में सिमट गया है। गौरेया–बच्चे–रवि सब कहीं से आकर एक जगह इकट्ठे हो गए थे।

अचानक उन्हें क्या सूझी कि नौकरानी से मुट्ठी भर चावल मंगाकर फर्श पर बिखरवा दिये और तन्मयता से गौरेया की ओर देखने लगीं, जो दाने चुगती, घोंसले में जाकर बच्चों की खिलाती और लौट आती थी। उनकी आंखों में पिछले दो दिनों से समाया रीछ कहीं अदृश्य हो चुका था। उन्हें लगा, जैसे गौरेया के मासूम चेहरे में रवि का चेहरा उभर आया है और आंखों में सारा घर सिमट गया है। पिछले दिनों के तनावों से मुक्त महसूसती वे बेकली से रवि की प्रतीक्षा करने लगीं।

लघुकथा विशेषांक

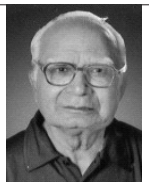

ओमप्रकाश बजाज
विजय विला
166–कालिन्दी कुंज
पिपलिहाना, रिंग रोड,
इंदौर–452018
मो.–9826496975

समाधान

फेमिली डॉक्टर की सलाहानुसार पत्नी को एक विशेषज्ञ के पास कन्सलटेशन हेतु ले गया था। पत्नी ने अपना हाल बताने के लिए मुंह खोला ही था कि विशेषज्ञ महोदय की मेज पर रखा फोन घनघना उठा। डॉक्टर साहिब ने लपक कर चोंगा उठाया और बात करने लगे। काफी देर तक बात चली।

डॉक्टर साहिब ने चोंगा रखा ही था और मेरी पत्नी ने अभी गिने चुने कुछ शब्द मुंह से निकाले ही थे कि फोन फिर बज उठा। पुनः डाक्टर साहिब ने फोन का चोंगा उठाया और बात करने लगे।

ऐसा–बिल्कुल ऐसा, तीसरी बार और फिर चौथी बार हुआ। मैं तो असमंजस में था कि क्या करें और क्या न करें कि मेरी पत्नी चलने के लिए उठ खड़ी हुई और बोली–''चलिए, हम लोग बाहर चलें और फोन पर ही डाक्टर साहिब को कन्सल्ट कर लें।''

डरा हुआ महानगर

सुबह की शोरगुल से वह जाग पड़ा था। अलसाई आंखों से उसने खिड़की के बाहर झांका। जो सारी रात खुली रह गईं थी और कोट की सिलवटें ठीक करने लगा। उसने सामने की बर्थ पर अखबार पढ़ रहे व्यक्ति से पूछा–––कौन सा स्टेशन है।

जी, खड़गपुर। आज कुछ देर हो गई है।

उसने पास से गुजरते चाय वाले को आवाज लगाई। चाय के कुछ घूंट पीकर उसने प्याला लौटा दिया। चायवाले को देने के लिये उसने कोट की जेब में हाथ डाला। रेजगारी के साथ मधु का पत्र भी निकल आया था। जिसे उसने रात में पढ़कर जेब में डाल दिया था। पैसे उसने चाय वाले को दिये और पत्र फिर पढ़ने लगा।

'जब भी रायगढ़ तक आयें तो कलकत्ते जरूर आना। कई वर्ष हो गये हैं तुमसे मिले हुये। कलकत्ता इन दिनों बहुत बदला हुआ है। लेकिन यहां की कुछ स्मृतियां मन पर ऐसी जमीं हैं कि लगता है जिनसे बिलगाव जीवन भर संभव नहीं होगा। अलबता तुम आओगे तो ताजी अवश्य हो उठेंगी। घर में नही आना तो अच्छा है। नहीं तो तुम प्रतीक्षा करते ऊब जाओगे आजकल रात में घर लौटने का मेरा कोई निश्चित समय नहीं रह गया हैं। वैसे भी मुझे मालूम है कि तुम घर पर रूकना नहीं चाहोगे। हावड़ा में ही किसी होटल में ठहर जाना। वहां से दस मिनट के अन्दर ही टेक्सी से रविन्द्र सारिनी तक पहुंच जाओगे। उसके पास ही हमारा दफ़्तर है। बड़ा सा लाल रंग को बोर्ड लगा हुआ है। पता लिख रही हूं। किसी से भी पूछोगे तो बता देगा। बस।' वह अन्तर्दशीय लिफाफे को मोड़कर लिखे पते को पढ़ने लगा।

–– मधु का दफ़्तर। आजकल वह नौकरी करने लगी है। न जाने उसकी थीसीस का क्या हुआ, हो सकता है पूरी हो गई हो। तीन साल के अंदर शायद वह उसका तीसरा अथवा चौथा पत्र था। जिसमें उसने कभी कुछ साफ नहीं लिखा। उसे इतना भर मालूम हुआ कि वह इन दिनों किसी दफ़्तर में सर्विस कर रही है।

बाम्बे हावड़ा रेल चलने लगी थी। शायद उसे इसी से लौटना पड़े अथवा एक दो दिन रह ले। बंगाल की सोंधी ध ारती से उठती महक नथुनों में समाने लगी थी। कलकता खड़गपुर से ही दरअसल शुरू हो जाता है, करीब डेढ़ दो घंटे का रास्ता और था। मेल के एक अथवा दो छोटे स्टापेज जीवन के इतने वर्षों का अंतराल कहीं सिमट गया था। सारे परिचितों के बीच उसे मधु भर का पत्र इस बीच मिलता रहा था। बाकी सबने परिचय का दामन उसके नागपुर जाते फाड़ दिये थे।

वह खिड़कियों से बाहर देखने लगा था। ठिगने खजूर के पेड़ सारे रास्ते खड़े थे। भागते गांवों के झांकती सामंतशाही के चिन्ह ताड़ के पत्तों अथव टीन से ढंकी झोपड़ियों के बीच एकाध बड़ी हवेली अब भी सर उठाये हुये थी। सिंग्नल न मिलने से ट्रेन किसी छोटे से कस्बे के पास रूक गई थी। वह बाहर की ओर देखने लगा था। छोटे छोटे पोखरों वाला गांव। पोखरों पर आम अथवा पीपल की छांव थी। पोंखरों के पास बैठे लोग पान के पत्तों को तोड़कर टोकरियों में जमा रहे थे। एक बड़ी सी हवेली के बारजे पर खड़ी औरत अपनी लटों को संवार रही थी। शायद घर की मालकिन थी।

कालेज के दिनों में सोशल वर्क में कालेज की ओर से वह कई बार इस तरह के गांवों में आ चुका था। मधु ऐसी औरतों को देखकर जब वापस कैम्प लौटती तो शरत की किसी नायिका की तरह उसके सारे हाव–भाव की नकल किया करती थी। 'बंगाल कभी नहीं बदलेगा मालूम, कभी नहीं। चाहे सारी दुनिया बदल जाये। यह हमेशा एक अजायबघर रहेगा।' वह कहा करती थी। इन दिनों उसी मधु ने लिखा था

–– यहां हर दिन, हर घंटे परिवर्तन हो रहा है। वह दूर दूर तक फैले छोटी–छोटी क्यारियों वाले खेतों को देखने लगा था। कोहनियों तक लटकती सूती कनियाहनें पहने भू–स्वामी जहां चहल–कदमी कर रहे थे। फटेहाल मजदूर, पोखरों से बह आये पानी को उलीच कर खेतों को सींच रहे थे। कहीं महुए के वृक्षों के नीचे झरे हुये फूल थे। वह सोचने लगा था––महुए के फूलों की महक जब कभी बदलेगी तभी यहां परिवर्तन होगा। शायद कोई सामयिक परिवर्तन होगा। जिसका मधु ने उल्लेख किया था।

ट्रेन चलने लगी थी। उसकी गति छोटे छोटे स्टेशनों के अस्तित्व को नकारती जा रही थी। नालपुर स्टेशन। गति कुछ धीमी होने पर उसने किनारे खड़े क्रांकीट के बोर्ड की ओर देखा। पंद्रह मील के करीब और रह गया था। करीब बीस मिनट की राह बच गई थी। संकराल, बस मील के करीब था। दूर फैक्टरियों से उठते धुयें उसे दिखने लगे थे।

हावड़ा तक पहुंचते हुये उसे लगा, इस बीच कुछ नये कलकत्ते के विस्तार को कुछ और बढ़ा दिया था। जिनका गाढ़ा सिलेटी धुंआ आकाश को रंग रहा था। स्टेशन के आसपास की इमारतों पर खून के रंग से रंगे विभिन्न पार्टियों के स्लोगन एवं नेताओं के चित्र बने थे। जिनमें कुछ देशी थे, कुछ विदेशी। सब कुछ हाल हुये ऐतिहासिक चुनाव प्रक्रिया को उद्‌बोधित कर रहे थे।

उसे स्टेशन पर भीड़ कुछ अधिक लगी थी। बाहर वह भीड़ को छीलता टेक्सी स्टेंड की ओर बढ़ गया था। रिक्शे में बैठना उसे कमी भी अच्छा न लगा था। सूखी हड्डियों वाले

जुते हुये इंसान पर सवारी करते हुये उसे मन में ग्लानि हो जाया करती थी। टैक्सी स्टेंड के पीछे एक पुरानी बस्ती पड़ी थी। जिस पर मेले कुचेले कपड़े पहने बच्चे खेल रहे थे।

टेक्सी की प्रतीक्षा करते हुये वह सामने डगमगाती हुई हावड़ा पुल की ओर बढ़ती ट्राम को देखने लगा था। लदे हुये, गुंथे हुए लोग। स्टेंड पर एक पुलिस वाला टैक्सियों के लिये प्रतीक्षारत लोगों को क्यू में जमा रहा था। वह ऊब चुका था। टैक्सी की प्रतीक्षा में और पैदल ही चलने लगा था। स्टेशन से करीब तीन चार फर्लांग उसे पैदल चलना पड़ा था। अपनी अटेची हाथों में दबाये वह सामने कतारों में बने होटलों को देखता एक के अंदर चला गया था। मैनेजर के कमरे में पड़े रजिस्टर में खानापूर्ती कर सामने खड़े केयर टेकर के साथ वह कमरे की ओर बढ़ गया था।

खाना खाकर जब वह दोबारा होटल के बाहर निकला तब कलाई की घड़ी तीन बजा रही थी। सामने डोलता हुआ हावड़ा खड़ा था। उसने करीब से गुजरती एक टैक्सी को रूकवाकर उस पर बैठ गया। 'रविन्द्र सारिनी' टैक्सी अपनी गति पकड़ चुकी थी। हावड़ा पुल को पार करते हुये वह वहां पड़ी छोटी बड़ी नौकाओं को देखने लगा था।

'सर, रविन्द्र सारिनी के सामने ही रोक दूं कि पीछे की गेट की ओर ले चलूं।' वहां भी फेयर लाई पीस की विशाल इमारत पार हो चुकी थी। फुटपाथ पर छोटा सा बाजार लगा हुआ था। टैक्सी रूक गई थी। उसने मीटर की ओर देखकर दो का एक नोट ड्राइवर के हाथों में थमा दिया था।

वह मधु के लिखे पत्र को हाथों में रखकर पास से गुजर रहे एक दफ़्तर के प्यून के मधु के दफ़्तर का पता पूछने लगा था। वह मधु के बताये लाल बोर्ड की ओर खोजती निगाहों से देखने लगा था। सामने चौराहें से चितपुर की ओर जाती ट्राम कुछ देर रूककर आगे बढ़ गई थी। वह दाहिने ओर की इमारत की ओर संकेत कर चला गया था। सामने भीड़ लगी हुई थी। वह करीब चला गया था।

दफ़्तर की इमारत का सामने वाला गेट बंद था। लोगों के हाथों में बड़े बड़े पोस्टर और बैनर पड़े हुये थे। जिसकी आड़ में दूर से दफ़्तर का बोर्ड नाम चीख पड़ा था। शायद हड़ताल हुई थी। दफ़्तर की इमारतों में ताला पड़ा हुआ था। पोस्टर पर लिखे स्लोगन्स को लोग तीखी आवाजों में दोहरा रहे थे। उसकी खोजी आंखों में मधु को ढूंढ निकाला था। हाथों में एक बड़ा सा पोस्टर लेकर मधु उसी तरह चिल्ला रही थी जिस तरह कालेज की स्ट्राइक के दिनों चीखा करती थी। वह उसके लापरवाही से बधे जूड़े और उसके तम–तमाये मुंह को दूर से देखता रहा था। फिर उसने करीब जाकर उसे आवाज दी थी–मधु। वह जैसे नशे से चौंकी थी।

'तुम, तुम कब आये। मुझे, खबर क्यों न दी। कब तक रहोगे।' उसे लगा वह तेजी से उसे निपटा देना चाह रही थी। कहां उसने सोचा था कि अपनी इस हालत में उसे सामने देखकर वह चौंकेगी। लेकिन उसने उसके चेहरे पर ऐसा कुछ न देखा।

'कुछ घंटे बीते आया हूं। खाना खाकर सीधे, तुम्हारी और चला आ रहा हूं।'

'काफी दिनों में आये हो। कलकत्ते घूम लो। मैं तुमसे फिर मिल लूंगी। कहां रूके हो ?' उसने होटल का नाम बता दिया था। भीड़ की आवाज कुछ अधिक तेज हो गई थी। उसने भीड़ की ओर देखा और उससे कहने लगी–'तुम इस वक्त जाओ। अभी मैनेजर निकलने वाला है। भीड़ में कुछ भी हो जाने की संभावना है। शायद उसके पाले हुये गुंडे कुछ गड़बड़ी भी मचायें। मैं तुम से मिल लूंगी।'

'शाम को आओगी– होटल की और तुम कि मैं ही घर पर तुमसे मिल लूं।'

'घर पर मत जाना। मां और नानी मामा के पास गांव चली गई हैं। छोटा भाई चुनाव के कुछ दिन पहले गिरफ्तार हो गया है। इन दिनों मैं अकेली रह रही हूं। अभी शायद घेराव करना पड़े। रात में मीटिंग है। न जाने कितनी देर हो जाये। तुम देख रहे हो न व्यवस्था किस तरह हमें जकड़ती जा रही है। हमें इसे बदलना ही होगा मानस। नहीं तो आने वाली पीढ़ी हमें कभी माफ कर पायेगी ?' वह भीड़ के सामने जा खड़ी हुई थी।

उसे और कुछ देखने की इच्छा नहीं हो रही थी। वह वापस होटल की ओर चलने लगा था। लोग दफ़्तरों से निकलने लगे थे। सड़क पर भीड़ कुछ अधिक बढ़ गई थी। एक बड़ी सी बिल्डिंग की दीवार पर हाल में किसी बड़े नेता की हत्या से हुये कलकत्ता बंद से सम्बंधित सूचनायें लिखी हुई थीं। एक इमारत की छत से लड़के पुलिस वैन पर पत्थर फेंक रहे थे। जो कुछ युवकों को बिठाकर ले जा रही थी। वैन रूक गई थी। टीयर गैस के फायर होने शुरू हो गये थे। कुछ ही देर में भीड़ से पटे रास्तें में ग्रैमयार्ड की खामोशी बिछ गई थी। दुकानों के फाटक बंद हो गये थे। वह दूर 'शाहा टी' स्टाल के अहाते में घुस गया था। बाहर सड़क से आती आवाजें अब भी आ रही थीं।

देखो भाग रहे हैं। पीछे से घेरो। भागने न पायें। दौड़ो। पुलिस वालों की तेज आवाजें सन्नाटें को तोड़ रही थीं। खोज और परेशानियों से भरे स्वर। शायद ऐसे ही किसी मौके पर मधु का छोटा भाई गिरफ्तार कर लिया गया होगा। आवाजें आनी बंद हो गई थी। टी स्टाल में काम करने वाला लड़का गली के मुहाने तक देख आया था और बता रहा था–– पेड़

और नानू बाबू में पढ़ने वाले लड़कों को पुलिस ने पकड़ लिया है। बाकी सब भाग गये हैं। वह उत्सुकता नहीं दबा पाया था और गली के मुहाने तक आकर झांकने लगा था। पुलिस वैन धीरे धीरे सरकने लगी थी। मिलिट्री की मशीनगनों से लैस अभी आई जीप उसके पीछे लग गई थी। दुकानें खुल गई। सड़क पर भीड़ फिर जमा हो गई थीं। वह चलते लोगों के चेहरे की ओर देखने लगा था। खिंचे, खिंचे आक्रोशित, भयभीत, क्रोधित। वह दूर बहुत दूर सीधी सड़क पर जाती मिलिट्री की जीप को हिकरात से घूरता रहता था। उसके मन में समाया भय अब घृणा में परिवर्तित हो रहा था।

––किसके लिये हैं ये मशीनगनें। कहां बनी हैं इनकी गोलियां। ये गोलियों को बनाने वालों ने सोचा भी न होगा कि ये घर पर ही चलेंगी। और इन्हें चलाने वाले––। उसे लगा, गोलियों का परीक्षण किया जा रहा है ताकि शत्रु देशों के मुकाबलें में उनकी उपयोगिता सिद्ध हो सके। अमेरिका भी तो अपने शस्त्रों का परीक्षण किया करता है दूर वियतनाम में। अपनी भाषा में जिसे अमेरिकन वियतकांग कहा करते हैं। उनके किये अनुपरीक्षण से न जाने कितने जलचर प्रशांत की छाती में खून उगलते हैं। वह अधिक कुछ सोचना नहीं चाह रहा था। उसके सोचने की शक्ति लुप्त होनी लगी थी। वह एक पान की दुकान के सामने खड़ा हो गया था।

––एक सिगरेट देना। सिगरेट लेकर वह उसे पास के खम्बे में बंधी नारियल की जलती रस्सी की शेर से जलाया और लम्बे लम्बे कश लेने लगा। दिन भर में वह पहली सिगरेट पी रहा था। दुकान के पास ही एक ठेलेवाला, जो कुछ देर बीते अपना सामान उठा कर भाग गया था, अपना सामान फिर से जमा रहा था।

'––इंदिरा की सरकार बनने वाली है। अजय मुखर्जी मुख्यमंत्री बन रहा है। सरकार कोई आये कोई जाये पर लोगों को दोनों समय का खाना तो दे।' वह पास खड़े एक आदमी से बात कर रहा था। वह ठेले के किनारे खड़ा होकर धूप के चश्मे देखने लगा था।

––क्या दाम लोगे।

––जो भी दोगे बात से लूंगा। वैसे आठ रूपये का है।

––पांच रूपये में वे रहे हो।

––ले लो बाबू, कुछ तो बेचना ही है। आज सुबह ही कोई कोर्ट में ग्यारह रूपये का जुर्माना पटा कर आ रहा हूं, फुटपाथ पर दुकान लगाने के लिये। गरीबों की सरकार है। राष्ट्रपति का शासन है। इससे जुर्माना कम लिया है न नौकरी देते हैं और जो कमातें है उसमें भी टैक्स, जुर्माना, न जाने क्या लगा देते हैं। उसने पांच रूपये पर्स से निकालकर उसे दे दिये थे और चश्मे को आखिरी बार जांचने की दृष्टि से देखने लगा था।

'कितने आदमी तो ले गये हैं।' उसे अपने पीछे से फुसफुसाती हुई आवाज सुनाई पड़ी थी।

'दो हैं। यह जमाना ही खराब है। बदमाशी कोई करता और पकड़ के किसी को ले जाते हैं। अब सारी रात बेचारे न सो पायेंगे–––। कल आयेंगे। जमानत में।'

'जमानत होगी तो जरूर आयेंगे। कहीं मां काली की कृपा हो गई तो बगैर जमानत के ही छूट जायेंगे।–––हमेशा के लिये।' खिसियाई डरी हुई हंसी उसे अपने कानों तक टकराती हुई लगा। वह दूसरे सिरे तक जलती सिगरेट को फेंककर आगे बढ़ गया था। अपनी दाहिनी ओर वाली फुटपाथ पर। पेट्रोलिंग करती सेना की हाफटन उसकी बांयी ओर से निकल गई थी। जब कोई गाड़ी उसे अपनी ओर आती दिखती तो वह और लोगों के साथ फुटपाथ के दूसरे किनारे की ओर सरक जाया करता था। गाड़ियों के निकल जाने पर वह लोगों के चेहरे की ओर देखने लगता था। जिन पर भय एवं शंका के निशान स्लाइड की तरह उभर कर लुप्त हो जाया करते थे। ––दूसरे शहर मे अचानक कहीं दगती गोलियों की गिरफ़्त में वह आ जाये तो लाश तक को कोई पूछने वाला न होगा। मधु शायद पता लगाने की कोशिश करे भी। लेकिन समय का उसे भी तो अभाव है। गाड़ियों के गुजर जाने पर कोई कह रहा था,–––डर से व्यवस्था कब तक बनी रहेगी। अब और सब कुछ नहीं चलने वाला है। उसने कहने वाले की ओर देखना चाहा था। लेकिन इस बीच वह कहीं भीड़ में उभर कर गुम हो गया था।

हावड़ा के आने का अहसास उसे बंगाल सागर को भेदकर हुगली की राह आती तेज हवाओं ने ने करा दिया था। जो उस पर तेजी से गुजरती हुई आराकान की पहाड़ियों की ओर बढ़ गई थीं। पुल को उसने तेजी से पार किया था। पार करते हुये वह सोच रहा था–––पुल के दोनों छोर पर कहां दो मशीनगनें लगा दी जावें तो हुगली में कूदने के अतिरिक्त कोई दूसरी राह नहीं है। पुल पार करने के बाद कुछ अंशों में वह सामान्य हो गया था। ट्रामों एवं बसों में लटके उन असंख्यक लोगों की तरह जो जलजला उठते ही दुबक जाते हैं और फिर निर्भीक होकर चलने लगते हैं। वह दूर से दिखने वाले हुगली में लंगर डाले स्टीमरों की ओर देखने लगा तो शांत निश्चय खड़े थे। तूफान से आने के पहले ही शांति––––।

सामने के बस स्टाफ में एक लड़का रजनीगंधा के हार बेच रहा था। उसने एक हार खरीद लिया। रजनीगंधा को देखकर उसे लगा था कि रात हो गई है। वह अपने इर्द–गिर्द फैली बिजली की रोशनी को देखने लगा था। एक कटकटाती ट्राम उसके पास से होकर कुछ आगे रूक गई थी। वह चौंक गया। रजनीगंधा के हार को वह उसी तरह जेब में ठूंसकर

आगे बढ़ गया।

होटल तक पहुंचते हुये रात कुछ अधिक गाढ़ी हो गई थी। होटल के बीस खाटों वाले कामन रूम में दिन की शिफ्ट से काम करके आये लोगों को सोता देखता वह अपने कमरे की ओर बढ़ गया था। उसे लगा, अस्पताल के जनरल वार्ड में वह मरीजों को छोड़ आया है। महानगर के कई पीड़ित मरीज। अपने कमरे में पहुंचकर उसने बिजली आन किया और निढाल सा सोफे में जा गिरा था। रजनीगंधा के हार को पेंट की जेब से बाहर निकालकर उसने पलंग की ओर उछाल दिया था। दरवाजे पर थपकी सुनाई पड़ी और होटल का केयर टेकर कमरे के अंदर आकर फैन के स्वीच को आन कर दिया। उसे गर्मी का अहसास फैन के चलने के साथ ही हुआ था। फैन की कटर–कटर की आवाज कमरे में गूंजने लगी थी। उसने अपने बदन से शर्ट को बाहर निकालकर दीवार पर गड़े हेंगर पर टांग दिया।

'साहब खाना अभी आयेगा कि बाद में।' वह पलंग पर पड़े रजनीगंधा को देखकर मंद मंद मुस्कुरा रहा था।

'ले आओ भाई भूख लगी है।'

'अकेले साहब ?' वह प्रश्नवाचक की तरह उसकी ओर देखने था।

'फिर रजनीगंधा किसके लिये लाया है।'

'अपने लिये।'

उसे लगा कि उसने कुछ झूठ कहा है। मधु कभी रजनीगंधा के हार को कितना पसंद किया करती थी। उसे लगा, उसके अचेतन ने ही उससे रजनीगंधा खरीदवा लिया है। वह सोचने लगा था – आखिर वह यहां क्यों आया है। मधु से मिलने ? आखिर कौन सा रिश्ता है उससे। कुछ वर्षों की पहचान। कुछ दिनों की मित्रता। इतना ही होता तो क्या वह अपने व्यस्त क्षणों में उसके लिये कुछ समय न निकाल लेती। शायद उसने यही सब उसे दिखाने के लिये उसने बुलाया था कि उसके जाने के बाद भी वह कितना व्यस्त रह लेती है। वापस लौटता हुआ केयर टेकर फिर लौट आया था।

'साहब कुछ ड्रिंक्स लेगा ?'

'क्या पिलायेगा ?'

'जिन, ब्रांडी, व्हिस्की, बीयर, देशी और इम्पोर्टेड सब है आप जो कहेगा।'

'ब्लड पिलायेगा ?'

'क्या साहब ?' वह चौंक गया था।

'ब्लड, सड़कों और नालियों में बहने से अच्छा है कि उसे पी लिया जावे।'

'समझा साहब, आप रम की बात कर रहें हैं। असली थ्री एक्स रम है। एक दम खून के माफिक लाल।'

वह जब लौटा तो खाने की ट्रे के साथ रम की एक बोतल लेता आया था सामने टेबिल पर पड़ी जार से वह ग्लास में कुछ पानी डाल रहा था। कार्क खोलकर उसने ग्लास को तीन चौथाई के करीब भरा और मेरी और बढ़ाया। जब तक वह ग्लास पूरी हलक के नीचे नहीं उतार गया, वह उसे घूरता रहा था।

'क्या नाम है तुम्हारा ?'

'रेड्डी सर।'

'आंध्र के रहने वाले होगे। यहां कैसे आये ?'

'पेट के लिये सर।' वह फिर जार से ग्लास में पानी डालकर उसके रम मिलाने लगा था। वह सामने पड़ी प्लेट से किसी जानवर की बोटियां काटने में लगा था। उसने ग्लास दूसरी दफा भर दिया था। इस बार शायद रम कुछ कम पिलाया था। रंग कुछ फीका सा लगा।

'रेड्डी इसका रंग फीका कैसे हो गया है ?'

'साहब आजकल आम आदमियों का खून सफेद होता जा रहा है।' उसने कहा। वह उसे नशे में समझने लगा था।

'फिर बोतल का रंग इतना गाढ़ा क्यों है ?' उसे लगा सचमुच रम कुछ कुछ असर करने लगा है।

'जमा हुआ खून है साहब। जी जमकर गाढ़ा हो जाता है।'

वह बाहर चला गया था। अपने सामने रखे ग्लास को उसने एक ही बार में खाली कर दिया था।

सब और परिवर्तन है। सिर्फ इस कमरे में कोई परिवर्तन नहीं था। जिसमे वह रह रहा था। उसे लगा, कमरे में टियर गैस का धुंआ फैल गया है। बिजली की रोशनी कमजोर होती जा रही है। कहीं आवाज उभर रही थी।

हमारा खून, हमारा खून––––––। इन्हें बेकार मत बहाओ। नहीं तो कोलतार की सड़कों पर जमकर काली हो जायेंगी। नहीं, नहीं ये बेकार नहीं बहेंगी।

बोतल में बची सारी रम वह गटक गया। और आवाजें दूर हो गई थी। दू––––––र बहुत दूर। एक बहुत बड़ा फासला आवाजों के और उसके बीच हो गया था।

मनुष्यता, मित्रता, पहचान, थिसिस तीन वर्षों में पूरी करने वाली मधु, रजनीगंधा सब कहीं दब गये थे। बची रह गई थीं। मशीनगनें, जली हुई बसें, टियरगनें, सेना की दौड़ती राहें, पोस्टर हाथों में ली हुई मधु का तमतमाया चेहरा, सड़कों पर जमा खून, डरे हुये चेहरे। टीयरगन की धुंध में सब कुछ खो गये थे।

दो चेहरे रह गये थे, खून पीने वाला का और दूसरा पिलाने वाले का।

एक लड़की की हत्या

चिन्नी के रिजल्ट निकलने के बाद से ही घर में मां उस पर विशेष ध्यान देने लगी है। अब वह स्कूल में पढ़ने वाली साधारण लड़की न रहकर घर की अहमियत रखने वाली सदस्या हो गई है। जो घर के हर छोटे–बड़े काम में दखलअन्दाजी कर सकती है। छोटी से छोटी बातों में मीन मेख निकाल सकती है। यह प्रवृति इन दिनों उसमें कुछ इन दिनों उसमें कुछ अधिक बढ़ भी गई है।

घर में भविष्य की एक ओर कमाऊ सदस्या, जबकि अब तक उसकी नौकरी कहीं लग न पाई है। एम्प्लायमेन्ट एक्सचेंज में उसका नाम दर्ज कराया जा चुका है। टेस्टेमोनियल्स की कापियाँ बनाकर रख ली गई हैं। कुछ एम.एल.ए., एम.पी. और भूतपूर्व मिनिस्टर भी है जिन्होंने उसे निहायत काबिल और शरीफ खानदान की लड़की लिखकर अपनी मोहरें लगाई हैं।

दफ़्तरों में कुछ टाईप किये, कुछ हाथों से लिखें एप्लीकेशन्स भिजवाये जा चुके हैं। आज दिन है प्रतीक्षारत इन्टरव्यू का। वैसे इस सब के पीछे मां की दौड़–धूप अधिक है। अधिक नहीं कुछ दिनों में चिन्नी जरूर किसी फर्म या दफ्तर में कोई न कोई नौकरी पा लेगी। बेकारी चाहे जितनी हो।

मैंने माँ से उसे आगे पढ़ाने के लिये कहा था। लेकिन माँ के तर्क के आगे घर में किसी चली भी तो नहीं है। 'तू कौन से बी.ए.करने के बाद किसी दफ़्तर में अफसर हो गई है। क्लर्की जब शुरू करनी है तो मैट्रिक के बाद ही क्यों न की जायें ? मुफ़्त में पैसे खराब करने के अलावा उसमें और क्या है।'

'मां इन दिनों बेकारी अधिक बढ़ गई है। हजारों लोग हैं जो बेकार बैठे हैं वर्षों से।' मैंने उन्हें समझाना चाहा था।

'बेकार रहते हैं वे, जिन्हें बेकार रहना होता है। नौकरी हर ओर पड़ी है। आदमी की जहालत है जो उसे बेकार बनाये रखती है।

इससे आगे मैं माँ से और कोई तर्क नहीं कर सकती हूं। क्योंकि सही मायने में मां को नौकरी ढूंढनी ही नहीं, उसे प्राप्त करना भी आती है। चिन्नी भी अधिक दिन बेकार नहीं रह पायेगी। कुछ दिनों की बात है। कहीं न कहीं उसे भी वह किसी नौकरी में खपा कर ही दम लेगी।

कुछ नहीं हुआ तो ट्यूशनें हैं ही। दो–चार ट्यूशनें ही करवा देगी। पैसे कहां से ओर कैसे बटोरना, माँ की अच्छी तरह आता है। कभी न भी आता रहा हो पर अब सीख गई है, अच्छी तरह। पति के शराबीपने ने उसे बहुत कुछ सिखा दिया है। नहीं तो सौ–डेढ़ सौ के मनीआर्डर में इतने बड़े घर को कैसे चलाया जा सकता हैं ? ट्यूशनों के नाम पर–पिछले कुछ वर्ष मैंने भी ट्यूशनें की हैं। दिन भर दफ़्तर ओर शाम को ट्यूशनों के नाम से मन कांप जाता है। क्योंकि वहां साल न बीतते–बीतते लाख प्रिकाशन लेने पर भी ऐसा कुछ हो जाता कि दफ़्तर से दो–तीन महीने गायब रहना पड़ता था। उस समय–लगता मुझसे शादीशुदा औरतों अच्छी हैं तो तीन–चार महीने डंके की चोट पर मैटर्निटी लीव पर चल देती हैं। लौटने पर उन्हें सन्देह करती घूरती आंखों का सामना तो नहीं करना पड़ता है।

ऐसे मौके पर मां अक्सर नाराज हो जाया करती है और घंटों मेरी गैर–जिम्मेदाराना हरकतों पर लेक्चर दिया करती है। फिर बाद में सब कुछ करने की जिम्मेदारी खुद ही ओढ़ लेती हैं।

इसी सबसे वह बड़ी से बहुत पहले ही नाराज है। जो अपने दफ़्तर के सेक्शन इन्चार्ज को घंटों अपने कमरे में घुसाये रहती हैं।

यद्यपि प्रत्यक्ष वह उसके आने पर कुछ कहती नहीं। मिलती है बड़े प्यार से। आव–भगत में कोई कसर नहीं रखती। बड़ी यदि घर में न हो तो कमरे में मुझे भिजवा देती है। चाय के साथ खाने का समय होता तो साथ बिठाकर खाना भी खिलायेगी।

लेकिन लगता है इस ओर खाने का अलग ही हिसाब रहता है। अधिक खिलाया महीने में दो–चार दिन खाना और बीस–पच्चीस प्याली चाय। एवज में वह जितना उससे वसूल लेती है वह तीन–चार गुना अधिक ही होता है। कभी पूरी फैमिली के सिनेमा का खर्च। कभी डालडा का टिन और कभी बाजार में ब्लैक से बिकने वाली जापानी साड़ी। बड़ी के लिये जो कुछ वह खर्च करता है वह अलग।

फिर आजकल लड़कों का रोना। नौकरी करने वाली लड़कियों की झंझटें आदि का ब्यौरा अलग रहता है। जिसे वह बेचारा किसी उपदेशक के मुंह से भरे हुये वाक्यों सा पोता रहता है। कभी–कभी मां के उपदेश इस सीमा तक बढ़ जाते हैं कि मुझे कमरा छोड़ना पड़ जाता है। छिः––चेहरे को कितना मार्मिक बनाकर वह सारे आख्यान कहती रहती है।

ऐसा नहीं है कि समझता नहीं। जानता नहीं। पर मालूम नहीं क्यों उस समय वह चेहरे पर उत्सुकता दर्शा कर सारी बातें सुनता, सहता रहता है।

कभी–कभी मन में इच्छा उठती है कि चीख कर कहूं– मां वह तुम्हारे उपदेश सुनने नहीं आया है। तुम्हारा लड़की के साथ कमरे में घंटे दो घंटे सोने आया है। उसे बता दो कि वह किस कमरे में है और यदि नहीं है तो कब तक आयेगी। नाहक बेचारे को बोर करती बैठी हो।

मेरे उठने पर मां मुंह बिदका देती हैं। उससे क्या, सच्चाई

हमेशा सच्चाई रहती है। चाहे उसे ढंकने के लिये आगे–पीछे कितना भी बड़ी भूमिका बांधो। धर्म के बड़े–बड़े वार्डरोब में उसे कैद करने की कोशिश करो। फिर उसे जिस रूप में अंगीकार करना है, उसी तरह क्यों न कर लिया जायें।

इतना सब नहीं होता तो पिता क्यों घर छोड़कर हजारों मील दूर जा बैठता। वहां से सौ–डेढ़ सौ के मनीआर्डर भेजकर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेता। मां कुछ है भी वैसी। नहीं तो पिता के मुंह में शराब न छुड़ा पाती। खुद उसके लच्छन अच्छे होते तो क्या वह बाजारू औरतों के पीछे इतने रूपये लुटाता फिरता। इतने रूपयों से तो अब तक बड़ी ओर मैं कहीं अच्छी जगह ब्याही जा सकती थीं।

चिन्नी के मेडिकल में दाखिले के लिये फीस भरी जा सकती थी। चिन्नी भी देखते ही देखते कितनी बदल गई है। दो–तीन साल पहले जब ग्रुप्स चेंज करने के बारे में स्कूल में पूछा गया था तो उसने मेडिकल ग्रुप्स को कितना प्रिफेन्स दिया था। डाक्टरनी जो बनना था। वही अब मां के बहकावे में इस तरह आ गई है कि किसी किसी फर्म की क्लर्की के लिये बड़ी फक्र से एप्लाई करती है।

नौकरी के बाद क्या होगा ? दफ़्तरों की मनचली लड़कियों की दोस्ती। जो कुछ किन्हीं मजबूरियों के वश होकर नौकरी करती है। वे यहां के माहौल में कुछ इस तरह खप जाती हैं कि मजबूरियाँ उच्छंदताओं में बदल जाती हैं। नये फैशन और डिजाइनों के बीच उनकी पारिवारिक जिम्मेदारियां सिमट जाती हैं। जरूरतें बढ़ जाने पर उसे पूरा करने के लिये कई गलत–सही काम करने लगती हैं।

चिन्नी भी शायद उस माहौल में उसी तरह हो जायेगी। छोटी उम्र में नासमझी कुछ इस तरह समाई रहती है कि बुरा–भला सोचने की कूबत भी तो नहीं रह जाती। मैं कुछ कहूं तो शायद मुझे भी बुरा–भला कह बैठेगी। यह उम्र ही ऐसी होती है कि हर ओर दुश्मन नजर आता है। हर आदमी नवजवान आदर्शों का मखौल उड़ाता लगता है।

इस सब का अन्त भी क्या होगा ? सिवाय किसी साथ काम करने वाले लड़के के साथ कुछ दिन घर आने के। किसी घर के लायक बेटे को नालायक ठहराकर किसी दूसरे शहर में जाकर सिविल मैरिज करने के बाद फिर वही रोजमर्रा की बातें शुरू हो जायेंगी।

इन दिनों शायद इसी से मां मुझसे नाराज रहती है। इतने दिनों के बाद भी मैं अपना भविष्य अब तक निश्चित न कर पाई हूं। मैं क्यों किसी फलते–फूलते घर में आग लगाने जाऊँ बीबी के ठीकरे में हमेशा पुलाव ही तो नहीं बँटा करता। कहीं कुछ सही का गलत हो गया तो उस समय माँ तो आगे आगे आने से रही। नाराज होती तो होने दो। उसकी नाराजगी और खुशी से क्या ? जब इतने दिन कट गये हैं तो बाकी दिन भर कट जायेंगे।

वैसे लड़कों की कमी नहीं है। एक बार आँखें उठाकर देख लूं। मजाल क्या जो कोई बच जाय। यही तो एक ऐसा अस्त्र दिया है स्त्री को प्रकृति ने। जिसके प्रभाव से बड़े–बड़े नहीं बच पाये। सिकन्दर का गुरू अरस्तू तक नहीं बच पाया। जिसे सिकन्दर की प्रेमिका घोड़ों की तरह हाथों पैरों से खड़ा कराकर सवारी किया करती थी। फिर इन कल के छोकरों की क्या बिसात!

शायद आज चिन्नी का कहीं इन्टरवयू है। तभी न मां सुबह से उसकी कंघी करने बैठी हैं। आज यह उसे लेकर साथ ही जायेगी। इन्टरव्यू तो करीब बारह बजे होगा। लेकिन चिन्नी को केवल इन्टरव्यू भर नहीं देना है। उसे सलेक्ट भी होना है। और माँ जानती है नौकरी कैसे मिलती हैं ?

अब तक माँ ने पता लगा लिया होगा कि इन्टरव्यू कौन सा आफीसर लेने वाला है। पहले उसके बंगले पर जाकर हाजिरी देनी होगी। फिर मां वहां जाकर अपना दुखड़ा, पति का दुखड़ा सब रो आयेगी। कुछ इस तरह सब ठहराव कर आयेंगी कि किसी भी ढंग का आदमी हो इंकार न कर सकेगा। मां के मुंह पर इन्कार कर ही नहीं सकता। वापसी में शाम को रिजल्ट के बारे में यदि आफिसर के घर पर मिलने की सम्भावना न दिखने लगी तो वह उससे इतना अवश्य पूछ लेगी कि वह शाम कौन से मित्र के घर या किस होटल में गुजरता है–

खुद मेरा भी इन्टरव्यू इसी तरह का था, जब शाम को मैं मां के साथ रिजल्ट के बारे में पता लगाने गई थी उस समय बंगले में अफसर अकेला था। उसके बीबी–बच्चे शायद सिनेमा देखने गये हुये थे– भेज दिये गये थे। मां मुझे वहीं बिठलाकर आवश्यक काम से बाजार चली गई थी। अब वह वापस लौटी उस समय तक सलेक्शन कार्ड मेरे हाथों में था। जिसे मैं कांपते हाथों से थामे हुए थी।

आज भी उस दिन का निशान मेरे पीठ पर पड़ा हुआ है। एक बड़े दाद के चकते के रूप में। कहते हैं दाद छूत की बीमारी है। उस अफसर के कंधो पर भी तो एक बड़ा सा दाद था। काली झुर्रियों वाला। मुझे तो उसे देखकर उबकाई होते होते बची थी। न मालूम क्या था उस दिन की सब सहती गई थी। एक काले कुत्ते के साथ वह हमें गेट तक छोड़ गया था। आज भी उसकी शक्ल याद आने पर उस कुत्ते की लपलपाती जीभ दाद को चाटती हुई लगती है। फिर वहां से रिक्शे के स्टैंड तक आते हुये मुझे कुछ ऐसा लगा था जैसे मीलों का सफर तय कर आई हूँ। तब से सेक्शन में जब भी मेरा प्रमोशन होता है मेरा हाथ इस दाद पर अवश्य पड़ता है जो हर

प्रमोशन के साथ कुछ बढ़ा हुआ होता है।

चिन्नी आज कितनी सुन्दर लग रही है। फूल वायल की महीन साड़ी में। साड़ी वह कभी–कभी तो पहनती ही है। स्कूल के दिनों की स्कर्ट पहनने की आदत उसकी अब तक नहीं छूटी है। वैसे उतनी सुन्दर तो नहीं हैं। चेहरे–मोहरे में मुझसे अभी भी कम है। पर उम्र की चमक में रंग दब जाता है। दूसरें दिनों की अपेक्षा आज वह कुछ लम्बी भी लग रही है। शायद साड़ी की कसावट और जुड़े की उठान के कारण।

सफेद गुलाब का फूल बड़ी का पर्स लाकर मां ने उसे दे दिया है। पर्स हाथों में थामे हुए उसने गुलाब जूड़े में खोंच लिया। स्कूल के दिनों में लगातार पैरों में मोजे डाँटे रहने के कारण उसके पंजे मुलायम लगने लगे हैं। हाई–हील की सैंडिलों में एड़िया कुछ ऊपर उठ गई हैं।

शायद वे जाने वाली हैं। मां भी आ गई है। हल्का सा मेकअप करके। मैं चाहती हूं, चिल्लाकर चिन्नी को रोक लूं। चिन्नी तू न जा। हम दो बहिनें जितना कमाती हैं, उसी में सब रह लेंगे। लेकिन मां को उसके साथ निकलते हुये देखकर चुप ही हूं। जीभ तालू में जाकर चिपक गई लगती है।

मुन्ना कटोरे में दही लाकर चम्मच से चिन्नी को देने लगा है। मां शुभ–अशुभ का कितना ध्यान रखती है। मुन्ने के हाथों कटोरा ही छूट जाता तो अच्छा होता।

वे कोर्टयार्ड के बाहर निकलने को है। चिन्नी को कोर्टयार्ड के गेट पर बने आर्च को पार करने के लिये थोड़ा झुकना पड़ रहा है। इन दिनों उसका शरीर किस तेजी से बढ़ने लगा है। पूरी औरत लगने लगी है वह। नहीं, अभी पूरी कहां.....। अभी अधूरी है। सलेक्शन कार्ड लेकर रात गये जब लौटेगी तब एक पूरी औरत हो चुकी होगी। और तब एक लड़की की जवान चीख किसी चाहरदीवारी में घुटघुटकर दम तोड़ रही होगी।

आप सभी 'बस्तर पाति' के प्रेमियों का बहुत बहुत धन्यवाद जो आप सभी ने अपना रचनात्मक सहयोग प्रदान किया। लघुकथा अंक के लिए इतनी रचनाएं भेज दीं कि अगला अंक भी लघुकथा अंक ही होगा। हमने कोशिश की समस्त रचनाकारों की लघुकथायें प्रकाशित हो जावें, इस हेतु इस अंक में न तो लोकप्रिय कॉलम 'बहस' दिया जा रहा है न ही कविताएं हैं। कहानियां और आलेख भी नहीं हैं। रेखाचित्र को भी अंत समय में नहीं लिया गया। इसके बावजूद लघुकथाएं भरपूर हैं। निवेदन है कि जिन रचनाकारों की लघुकथाएं प्रकाशित हो रहीं हैं उन्हें छोड़कर अन्य रचनाकार अपनी लघुकथाएं प्रकाशन हेतु प्रेषित करें। जिनकी लघुकथाएं नहीं प्रकाशित हो पायी हैं उनसे करबद्ध क्षमायाचना।

कृष्ण शुक्ल जी की कहानियां पढ़ते हुए ऐसा महसूस होता है मानों सच्चाई का सामना हो रहा है। तीनों कहानियां समाज और देशकाल के अलग– अलग पहलू उजागर करती हैं। इन कहानियों में उस वक्त का वर्तमान एकदम सही ढंग से उजागर हुआ है। जो एक कहानीकार का कर्तव्य के प्रति जिम्मेदारी के साथ निर्वहन दिखाता है। कहानीकार सदा से ही विषयवस्तु अपने आसपास से उठाता है। और उसमें अपनी कलम से पच्चीकारी करके पाठक तक पहुंचाता है। उनके कहे अनुरूप ही उनकी कहानियां पाठक के जेहन तक पहुंचकर चोट करती हैं। इनकी कहानियों में पठनीयता का होना शानदार एप्रोच है। कहानी पढ़ना शुरू करने के बाद बंद करना नामुमकीन है। अपने शब्दों की जादूगरी से वे पाठक को अपने साथ कहानीलोक में प्रविष्ट कराने में सफल होते हैं।

कहानी में ज्यादा क्लिष्टता जानबूझ कर भरने की अपेक्षा साधारण और बोलचाल में प्रयुक्त शब्दों का चयन कर कहानी को सामान्य जन के लिए रचा है। वरना कहानियां पढ़ना भी एक काम की तरह हो जाता है।

'कोई एक घर' कहानी स्त्री के जीवन की कठिनाईयों को दर्शाती है जो अपने पूर्व जीवन के कठिन दौर के चलते अपने भविष्य के प्रति भी शंकित हो उठती है। अपने बच्चे के लिए उसके मन में कैसे–कैसे विचार आते हैं। वह भी इसलिए कि वह बच्चा एक ऐसे आदमी का है जिसने उसे कभी इंसान न समझा। एक ऐसा द्वंद जो नारी के लिए सांप छछूंदर की तरह है। कहानी का मूल तत्व द्वंद, कहानी को श्रेष्ठ घोषित करता है।

'डरा हुआ महानगर' में नायक का सामना ऐसी महत्वाकांक्षी लड़की से है जो खुद के जीवन को अपनी तरह जीना चाहती है। नायक और नायिका के मध्य ऐसा महसूस होता है कि कुछ है परन्तु वह नायिका की महत्वाकांक्षा में रह जाता है। इस कहानी के साथ साथ कहानी में कलकत्ता के जीवन को बखूबी बताया है कि वहां किस तरह आंदोलन और सामंतशाही बराबरी से बने हुए थे। कहानी में नायिका का प्रेम की अपेक्षा आंदोलन का चुनाव वहां के आंदोलनकारी जीवन को विशेष रूप से रेखांकित करता है।

'एक लड़की की हत्या' शीर्षक बड़ी गहराई लिए हुए है ये बात कहानी की अंतिम पंक्तियों में स्पष्ट होती है। लड़की के औरत में बदलने के दौरान लड़की की हत्या हो जाती है क्योंकि उसे नौकरी के लिए अपना सबकुछ देना पड़ जाता है। नौकरी के प्रति मां का ये समझौता सबको सालता जरूर है पर मां द्वारा गुजारे गये जीवन की कठिनाईयों के अनुपात में छोटा दुख होता है।

लेखक द्वारा स्त्री के मन को उजागर करने की कोशिश शानदार है। स्त्री के स्वनिर्णय का फैसला खुद के उज्जवल भविष्य के लिए लिया गया है, भले ही जमाने की नजर में गलत हो सकता है। सुंदर, सजीव, उम्दा कहानियां।

ग़लतफहमी

डॉ. सतीशराज पुष्करणा
अध्यक्ष, अ.भा. प्रगतिशील लघुकथा मंच
लघुकथा नगर, महेन्द्रू
पटना–800006
मो.–08298443663

रामेश्वर बाबू हाट से सब्जी आदि लेकर जैसे ही शहर की मेन रोड पर आये कि किसी ने 'प्रणाम भैया!' कहकर उनका चरण स्पर्श किया। 'कल्याण हो!' कहकर जो उस व्यक्ति पर दृष्टि जमी तो बोले, ''अरे! कामेश्वर...तुम! कहो, कैसे हो ? क्या बात है....एक लम्बे अरसे से घर नहीं आये। अपने भैया से ऐसी क्या नाराजगी हो गई ? कभी किसी छुट्टी को बहू व बच्चों को लेकर घर आओ....बैठकर बातें करेंगे।''

''बड़े भैया! आपसे तो मुझे कोई शिकायत नहीं है, किन्तु तपेश्वर से मैं अवश्य नाराज हूं।''

''भई, तुमने तो कमाल कर दिया–तपेश्वर! अरे, वह तो हम दोनों का अनुज है! अगर तुम्हें उससे कोई शिकायत है तो.....कल ही रविवार है–हम तीनों भाइयों की छुट्टी है। घर आ जाओ.....बैठकर सारे गिले–शिकवे दूर कर लेंगे। यह कौन–सी बड़ी बात है!''

+++++++

''अरे कामेश्वर! आओ.....आओ, बहू तुम भी आओ! तुम लोगों का स्वागत है।...पर बच्चों को क्यों नहीं लाये तुम लोग ?''

''कोई खास बात नहीं भैया...घर अकेला न रहे इसी ख़्याल से नहीं लाये।''

अनुज एवं अनुज–वधू के चरण स्पर्श के उत्तर में रामेश्वर बाबू आशीर्वाद दे ही रहे थे कि बगल के कमरे से निकलकर तपेश्वर भी अपने अग्रजों के मध्य उपस्थित हो गया और आते ही उसने अपने मंझले भैया–भाभी का चरण स्पर्श किया। उत्तर में उन्होंने न केवल आशीर्वाद दिया बल्कि भावविह्वल होने के साथ–साथ लज्जित भी हो गये।

''कामेश्वर! मैं चाहता हूं जब तक भोजन तैयार हो चाय की चुस्कियों के साथ–साथ लगे हाथ गिले–शिकवे भी हो ही जाएं।''

''भैया! अब कहने को कुछ भी शेष नहीं रहा। हमारी शिकायत स्वतः ही दूर हो गई है।''

''भई तुम कमाल करते हो....अभी तो कोई बात हुई ही नहीं, तो स्वतः शिकायत दूर कैसे हो गई ? कल ही तो शिकायत के लिए तुम काफी गंभीर दिख रहे थे।''

''यह सच है भैया! किंतु तपेश्वर ने हम दोनों के चरण स्पर्श करके हमारी सारी शिकायत दूर कर दी है।''

''वह तो मैं सदैव करता हूं; इसमें क्या बड़ी बात है।'' तपेश्वर ने झट् बात को अपने हाथ में लेते हुये कहा।

अनभिज्ञता ज़ाहिर करते हुये बड़े भैया ने कहा–''तुम साफ–साफ कहो कामेश्वर! बात क्या है।''

''पिछली बार जब आपके पुत्र चुन्नू के मुंडन पर हम लोग आये थे तो तपेश्वर ने मात्र मेरा ही चरण स्पर्श किया और अपनी भाभी की उपेक्षा कर दी थी।''

इस पर तपेश्वर ने बहुत ही विनम्रता एवं आदर से कहना शुरू किया–''भैया! यदि इस कारण आपको कष्ट हुआ है तो मैं आपका अनुज हूं, क्षमा कर दें। परन्तु वास्तविकता तो यह है कि उस दिन मैं किसी काम से लौटा तो कमरे में काफी भीड़ थी। मेरी दृष्टि मात्र आप पर ही पड़ी थी...भाभी को तो मैंने देखा तक नहीं था। यदि मेरी दृष्टि भाभी पर पड़ती तो भाभी के आशीर्वाद से कौन अभागा वंचित रहना चाहेगा!''

''चलिए! अब सब लोग उस कमरे में चलें। उधर भोजन लगा दिया गया है।'' यह बड़ी भाभी थी।

निरूत्तर ईश्वर

बालकृष्ण गुप्ता 'गुरू'
डॉ.बख्शी मार्ग,
खैरागढ़
मो.–09424111454

काम में आते वक्त नौ साल की मुनिया पत्थर से टकराकर गिर पड़ी। घुटने में काफी चोट लगी थी। बहुत दर्द था। बाबूजी अस्पताल ले गए थे। डॉक्टर ने दवा लगाकर पट्टी बांध दी। जाते–जाते मुनिया को कुछ याद आया। वह अक्सर मां को कहते हुए सुनती थी, डॉक्टर तो धरती का भगवान होता है।

अचानक वह पलटकर पुकारने लगी, 'डॉक्टर भगवान, डॉक्टर भगवान, सुनिए तो!''

''क्या है ? दवाइयां लिख दी हैं, दुकान से खरीद लेना।'' डॉक्टर ने रूखेपन से कहा।

मुनिया ने उसके लहजे से अप्रभावित रहते हुए पूछा, ''डॉक्टर भगवान, मेरी शादी होगी कि नहीं, मैं डोली में बैठकर ससुराल जाऊंगी कि नहीं ?''

डॉक्टर ने आश्चर्य से उसकी तरफ देखते हुए कहा– ''अभी तो रिक्शे में बैठकर घर जा।''

घर पहुंचकर मुनिया ने मां से कहा, 'मां, भगवान को भी नहीं मालूम कि आगे मेरी शादी होगी या नहीं!'' मां लंबी सांस भरते हुए बोली– ''हां बेटी, भगवान गरीबों का भाग्य लिखता है और भूल जाता है। मुझे तो लगता है, भगवान गरीबों का भाग्य लिखना ही भूल जाता है।''

प्रधानमंत्री की कुर्सी कितने की ?

राज हीरामन
त्रिओले, मॉरीशस
सम्प्रति–महात्मा गाँधी संस्थान की हिन्दी त्रैमासिकों 'वसंत' और 'रिमझिम' के वरिष्ठ उप संपादक
rajheeramun@gmail.com

पार्टी–नेता का यह तीसरा चुनाव था। यानी वे तीसरी बार देश की सत्ता संभालने और प्रधानमंत्री बनने जा रहे थे। चुनाव अभियान में करोड़ों रुपयों की जरूरत होगी। जहां पिछली बार प्रेशरकूकर बंटे थे वहां अबकी कांजीवरम साड़ियों की मांगें हुई हैं। बच्चों में जहां साधारण बॉटा के जूते दिए गए थे वहां से आडीडास की फरमाइशें आई है। लड़कियाँ स्थानीय चमड़ी की नहीं कोल्हापुर की चप्पलें पहनेंगीं। पुरुष 500 के नहीं 1000 के नोट से खुश होने की इच्छा जता रहे हैं। शराबी देशी रम नहीं जॉनीवॉकर से नशा चढ़ाएँगे।

एक तरीका सूझा। चुनाव में खड़े होने की टिकटों के लिए भीड़ पड़ी थी और मुंहमांगा रोकड़ा मिलने की संभावना तेज थी। पार्टी नेता ने दाम निर्धारित किए और एक सूची बनाई। टिकट पीछे एक करोड़। मंत्री बनना हो तो दो करोड़। कामधेनु मंत्रालय संभालने हों तो तीन करोड़। वित्त मंत्रालय पाना हो को चार करोड़। उप प्रधानमंत्री बनना हो तो पाँच करोड़। पर पिछली सरकार में रहे कुछ प्रमुख मंत्रियों ने आश्चर्य से पूछा "प्रधानमंत्री के पोर्टफोलिओ के दाम तो सूची में है ही नहीं!"

आधा नोट

महंगाई बढ़ गयी थी। वोटर अगले आम चुनाव में 500 के नोट के बदले 1000 रुपए की मांग कर रहे थे। पार्टी नेता ने न कह दिया तो था, पर बहस अभी बाकी थी। वे 500 पर ही अड़े हुए थे। लेकिन चुनाव जीतने के लिए वोटरों का यह नखरा उठा लेना ज़्यादा अक्लमंदी था, और फिर आठ सौ करोड़ एक सत्तासीन के लिए कौन सी बड़ी थी जो पहले ही दो आम चुनाव लड़कर देश संभाल चुका हो !

चुनावी अभियान के दौरान हज़ार–हज़ार रुपयों के नोट आधा–आधा फाड़ कर एजेंट आठ लाख वोटरों में बाँट चुके थे और बाकी का आधा, चुनाव में जीत के बाद देना तय हुआ था ! चुनाव आया और पार्टी की जीत भी हुई। आठ लाख आधे नोटों का वायदा फुर्र हो गया था। जनता का दबाव पड़ा पर कोई खास असर नहीं पड़ा। मायूस वोटरों को आख़िर अपने पड़ोसी से समझौता करने के सिवाय और कोई विकल्प न था।दो आधे नोटों का एक पूरा नोट बनाया और 500–500 का बखरा किया। पहली बार जनता पूरा वोट देकर हारी थी।

प्रेशरकूकर

चुनाव अभियान समाप्त हो गया था। जनता ने जिस सत्तारूढ़ पार्टी को समर्थन वोट दिए थे वह जीत कर सरकार का गठन कर चुकी थी। मगर राजनीतिज्ञों ने अपने वायदे पूरे नहीं किए थे। किसी को बिना ढक्कन का प्रेशरकूकर दिया था तो किसी को बिना प्रेशरकूकर का ढक्कन ! घरों में दाल नहीं गल रही थी इसी लिए सब को जरूरत थी एक प्रेशरकूकर की जिस का एक ढक्कन हो या एक ढक्कन जिस का एक प्रेशरकूकर हो ! वे तो छली थे कहां से लाते प्रेशरकूकर या कहाँ से लाते ढक्कन? आधा–आधा कर के तो बाँटा था। पर महिलाओं ने घर की दाल गला ही दी ! एक दिन इस पड़ोसन के यहाँ दाल गलती तो दूसरे दिन दूसरी पड़ोसन की दाल गलती !

हर साल चुनाव हो

पिछले पाँच वर्षों के दरमियान देश में तीन आम चुनाव आयोजित किए गए जब कि सिर्फ एक होना था। चुनाव आयोग यानी सरकार के ख़र्च भारी हो जाते हैं। बुद्धिजीवियों को तो हर बात की चिंता लगी रहती है। वे तो ऊपर दिवाल पर बैठे होते हैं जो जीता उधर लुढ़क लिए। पर सच में व्यापारी विशेष चिंतित रहते हैं। चुनाव के आयोजन में सरकारी ख़र्चों से अधिक इन का पैसा पानी की तरह बहता है! सत्तारूढ़ पार्टी को तो सहयोग देना ही देना होता है पर विपक्ष की छोटी–छोटी पार्टियों को भी खिलाना होता है। कौन किस से गठबंधन करे और सरकार बना ले यह किस को पता ?

पर आम जनता की खुशी का ठिकाना नहीं रहता। वह सोचती है कि रोज़ ही आम चुनाव हो ! ग्राम चुनाव हो। शहरों में म्युनिसिपल चुनाव हो। बेकारी और ग़रीबी में चुनावी समय में पाने का यही सब से अच्छा अवसर होता है ?

नेता पर जूते पड़े

अभी हाल ही में एक बड़े देश के नेता को एक प्रेस कान्फ्रेंस के दौरान एक प्रेस प्रतिनिधि ने उन पर जूता चलाया। नेता अभी जूते से बचा ही था कि रिपोर्टर ने अपना दूसरा जूता दे मारा। सारी दुनिया ने यह घटनादेखी। राजनेताओं को बड़ी चिंता हुई। तभी यूएन का अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन जीनिवा में लगा था कि मीटिंग के बाद ए ओ बी में इस पर बहसें हुईं। सभी देशों ने अपने–अपने विचार दिए। लगभग सभी देशों का मानना था कि पत्रकार कान्फ्रेंस रूम में बिना जूते के प्रवेश करें। पर भारत का विचार मान लिया गया और सभी नेताओं ने अपने–अपने देश में एक मंदिर का निर्माण शीघ्र करना तय किया

जागृति

शाम का धुँधलका रात के सन्नाटे में बदल चुका था। गाँव की हर गली, हर चौराहे पर अँधेरा पसरा पड़ा था। जी हाँ पाठकों ! यह दिल्ली या किसी राज्य की राजधानी की नहीं, बल्कि भारत के एक दूर–देहात की लघुकथा है।

गाँव की चौपाल में जल रहे पेट्रोमेक्स की थोड़ी–सी रोशनी सामने की पगडंडी पर भी पड़ रही थी। अरे ! आप तो पेट्रोमेक्स के नाम से ही चौंक गए ! जी हाँ जनाब ! वही गैस का हंडा जो आजकल हम शहरी लोग ब्याह–बारात में ही देखते हैं और जो अब मिट्टी के तेल से नहीं जनरेटर की बिजली से चलता है। गाँव में मिट्टी के तेल से जलनेवाले गैस के एक–दो हंडे भी तभी पहुँचते हैं जबकि रात को वहाँ कोई बहुत बड़ा आयोजन होना हो।

इसे गाँव का बहुत बड़ा सौभाग्य ही कहिए कि इस इलाके के विधायक, जोकि राज्य के बिजली मन्त्री भी हैं आज रात चौपाल में तशरीफ ला रहे थे। तशरीफ लानी ही पड़ रही थी क्योंकि चुनाव–प्रचार पूरे जोरों पर था और काँटे की टक्कर होने के कारण एक–एक वोट से जीत–हार की सम्भावना ने सभी उम्मीदवारों की धुकधुकी बढ़ा दी थी।

चौपाल में भीड़ जुड़ने के एक घंटे बाद झंडा और लाल बत्ती लगी मन्त्रीजी की कार तीन अन्य कार–जीपों के काफिले के साथ वहाँ पहुँची। भीड़ के स्वागत के लिए नीचे आने से पहले ही पूरा दल–बल ऊपर आकर वहाँ बिछी खाली चारपाइयों में धँस गया।

गणमान्य व्यक्तियों द्वारा हार–फूलों से लाद दिए जाने के बाद अब मन्त्रीजी अपनी लच्छेदार बातें भीड़ के सामने परोस रहे थे कि तभी बूढ़े दीनू काका उठकर खड़े हो गए।

"का हो काका, कुछ कहना है का !" मन्त्रीजी के मुख से शहद टपका।

"हाँ रे ! तनिक देखियो तो रमुआ, मन्त्रीजी अपनी कार में बिजली भर के लाये हैं का !" दीनू काका के कहने के साथ ही चौपाल में हँसी का एक ठहाका गूँज उठा।

"का कहत हो काका ! बिजली का कार में भरके आत है ?" ठहाके के उतार के साथ ही रमुआ ने कहा।

"आत है रे रमुआ ! मन्त्रीजी पिछली बार कहि के जात रहिन कि अगली बार आवत रहिन तो बिजली लेकर आवत रहिन। अब मन्त्रीजी कार में आत रहिन तो बिजली का पैदल आत रहिन ? ढूँढत रहो, बिजली उस कार मा ही होत रहिन।"

दीनू काका के कहने के साथ ही भीड़ ने चौपाल से नीचे उतरकर मन्त्रीजी की कार को चारों तरफ से घेर लिया।

मन्त्रीजी अब अपने दल–बल सहित वहाँ से खिसकने की जुगत लगा रहे थे।

मजहब

यह 9 सितम्बर, 2014 की एक त्रासद सुबह थी।

लोग तीन दिनों से घर की छतों पर टँगे थे।

लोगों की निगाहें खाली–खाली आसमान पर टिकी थीं। लोगों की निगाहें घरों–सड़कों पर हरहराते पानी पर टिकी थीं ।

धरती की जन्नत सदी के सबसे बड़े सैलाब की गिरफ्त में आ चुकी थी।

आसमान के फरिश्ते कुछ देर पहले ही हेलीकॉप्टर से खाने के पैकेट तथा पानी की बोतलें गिराकर गए थे। जमीन के फरिश्ते कुछ देर पहले ही छत पर टँगे लोगों को बोट से महफूज किनारों पर लेकर गए थे।

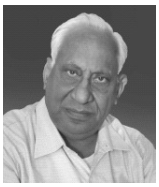

मधुदीप

लघुकथा शृंखला 'पड़ाव और पड़ताल' के 25 खण्डों के सम्पादन/संयोजन में संलग्न, अब तक 20 खण्ड प्रकाशित

138/16ओंकारनगर –बी, त्रिनगर, दिल्ली–110035

मो.–93124 00709 , 81300 70928

सोजुद्दीन उन अभागों में से था जिनकी आँखें इन दोनों के इन्तजार में पथराने लगी थीं। तभी अपने घर की तरफ तेजी से आ रही एक बोट को देखकर उसकी आँखों में चमक लौट आई।

जमीन के फरिश्तों ने उसे तथा दूसरे अभागों को बड़ी होशियारी से छत से उतारकर बोट में बैठाया।

बोट अब महफूज किनारे की ओर लौट रही थी। सोजुद्दीन की निगाहें बड़ी शिद्दत से एक फरिश्ते के चेहरे पर टिकी थीं ।

"तुम सुभाष कौल के बेटे हो ना !"

"हाँ बाबा।"

"तुम मुझे पहचानते हो ?"

"हाँ बाबा, आप सोजुद्दीन हैं।"

"तुम्हें कुछ याद है ?"

"हाँ बाबा ! पन्द्रह साल पहले दहशतगर्दों ने मुझे और मेरे परिवार को इस जन्नत से बेदखल कर दिया था।"

"तुम्हें यह भी पता होगा कि उन दहशतगर्दों का सरगना कौन था ?"

"उस चेहरे को मैं कैसे भूल सकता हूँ बाबा !" आँखों में अंगारे दहके मगर अनुशासन ने उन्हें भड़कने नहीं दिया।

"क्या तुम्हारे मजहब में दुश्मन की जान बचाना जायज है ?"

"बाबा, एक फौजी का मजहब उसका फर्ज होता है और उसके तहत आपकी जान बचाना मेरे लिए बिलकुल जायज है।"

महफूज किनारा आ चूका था। सोजुद्दीन बोट से उतरते हुए इस मजहब को पुरजोर सलाम कर रहा था।

फ़रेब

सुरेखा एक गरीब परिवार की युवती होने के कारण चार क्लास पढ़ कर ही पढ़ाई समाप्त कर चुकी थी। घर के काम काज में माँ का हाथ बंटाती। इस तरह घर गृहस्थी किसी हद तक सीख चुकी थी।

माँ बाप ने जवानी की दहलीज़ पर क़दम रखते ही उसकी शादी एक रिक्शा चालक से कर दी। दीनू नामक रिक्शा चालक उसे हर सुख सुविधा देता और उसे खुश रहने के गुर बताते नहीं थकता। लगता वह दीगर रिक्शा चालकों से हटकर सूझबूझ वाला समझदार व्यक्ति है।

चार पांच साल अच्छी तरह बीत गये। लगा जैसे समय को पंख लग गए हों। सुरेखा ने पहले लड़के के बाद एक बच्ची को जन्म दिया था। बड़े प्यारे बच्चे थे जो माँ के लाड़ प्यार के साथ पढ़ने भी लग गए थे।

दीनू अपनी कमाई पहले तो बराबर अपनी पत्नी के हाथ में दे देता था लेकिन इधर कुछ दिनों से उसने हाथ खींचना शुरू कर दिया था। कभी 10–15 रूपये दे देता तो कभी कमाई नहीं होना बता कर पल्ला झाड़ लेता।

सुरेखा जैसे तैसे उन्हीं पैसों से घर गृहस्थी चला रही थी। बताने वालों ने उसे बताया कि दीनू जुह शराब का आदी होने से जो कमाता है उसे उड़ा देता है।

फिर एक दिन ऐसा भी आया कि सुरेखा तंगहाली से परेशान होकर अपनी नसीब को कोसने लगी। पास पड़ोस के लोगों ने उसे समझाया मनाया और अपने बच्चों की तरफ़ ध्यान देने की बात कही ताकि बच्चों का किसी भी तरह बुरा हाल न हो। ममता की मारी माँ बच्चों का हर तरह ख़्याल रखती। बच्चे भी तो अपनी माँ की हर बात मानते और उस पर अपने प्यार दुलार का इज़हार करते।

उस दिन सुरेखा के हाथ बिल्कुल ख़ाली थे। दीनू देर रात तक लौटकर घर नहीं आया। घर में आटा, चावल कुछ भी नहीं था। रात के दस बज रहे होंगे। दोनों बच्चे भूख से तिलमिलाने लगे। माँ ने चूल्हे पर एक गंजी चढ़ाई। उसमें पानी डालकर कुछ पत्थर के टुकड़े डाल दिये। ढक्कन लगाकर पकने के लिये छोड़ दिया। बच्चों से कहा खाना पका रही हूं। धीरज रखो, पक जाने पर देती हूं। बच्चे कभी गंजी का तो कभी माँ का मुंह तकते रहे। समय के साथ रात गहराती जा रही थी । भूख के साथ नींद से भी बदहाल हो रहे थे। और नींद ने भूख पर फ़तह हासिल कर ली थी। वह नींद की आग़ोश में चले गये थे और माँ सिसकियाँ भरती अपने आंसू पी रही थी।

तभी मुझे अपने दोस्त का शेर याद आया कि –

"पत्थर उबालती रही इक माँ तमाम रात,
बच्चे फ़रेब खाके चटाई पे सो गए।"

वसीयत नामा

रउफ़ परवेज़
बालाजी वार्ड
जगदलपुर
जिला–बस्तर छ.ग.
फोन–09329839250

वह जिन्दगी की पच्चासी बहारें देख चुका था। इसलिये उसे हर बहार भेस बदलकर ख़िज़ाँ की शक्ल में नज़र आने लगी थी।

जिन्दगी को ख़ैर बाद कहने पहले वह अपनी जायदाद का वसीयतनामा बनवा लेना चाहता था।

वह काम उसने किसी से करवा भी लिया और जगदलपुर शहर के उसके मालिकाना अधिकार के चारों मकान अपने दोनों बेटों के नाम वसीयत कर देना मुनासीब समझा।

वसीयतनामा टाईप करवा कर वह सीधा एक नोटरी के दफ़्तर गया और उसे वसीयतनामे को नोटरी से तसदीक़ करवाने कहा। नोटरी ने वसीयतनामा ग़ौर से पढ़ा, फिर सील लगाकर दस्तख़त कर उसे सौंप दिया। नोटरी ने वसीयत की मालियत और अहमियत को समझकर सौ रूपये फ़ीस बताई।

उसने जेब में हाथ डाला, फिर कहा कि–"छुट्टे नहीं हैं, एक हज़ारी नोट है।" नोटरी के पास या आसपास किसी के पास एक हजार के छुटटे नहीं थे। उसने कहा कि–"मैं छुटटे लेकर फ़ौरन आता हूं। उधर गया, इधर आया समझो।"

वज़नदार, बारोब शख़्सियत, फिर वज़नदार नोट–कौन ऐतबार नहीं करेगा ? और फिर भारी भरकम जायदाद का वसीयम नामा ? वह जाकर वापस नहीं लौटा। वसीयत नामा भी ले जा चुका था।

इत्तेफ़ाक से तीसरे दिन वह सुबह के वक्त शहीद पार्क में सैर के वक्त नज़र आ गया। नोटरी साहब भी सैर के लिये गये थे। मुलाक़ात पर खैर ख़ैरियत पूछी, फिर कहा–"मुझे आप का भी तो देना है– कहिये कहाँ आऊँ, घर या दफ़्तर।"

नोटरी साहब ने ख़ामोश रहना ही ठीक समझा। गोया ख़ामोशी ही उन का जवाब थी। वह न घर पहुंचा, न दफ़्तर।

चौथे दिन फिर मुलाकात रास्ते पर हो गई। कहने लगा "मैं आप क़रज़दार हूं, देना तो है, कौन सा अभी मरा जा रहा हूँ। और फिर वसीयतनामा मरने के बाद ही तो अमल में आता है। मैं न भी रहा तो क्या हुआ बेटे तो रहेंगे।"

जवाब में नोटरी ने फिर ख़ामोशी इख़्तियार कर ली और उसकी ओर एक टक देखता रह गया।

आईना

डॉ. गजेन्द्र नामदेव
भूगोल विभाग,
शासकीय स्वशासी
स्नातकोत्तर
महाविद्यालय
छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
480001
मो.–09993225244

चुनावी माहौल अपने चरम पर था। समाचार पत्रों की खबरें, समाचार चैनलों की तीखी उबाऊ बहसें, चाय–पान के ठेले, सब जगह राजनैतिक बुखार का संक्रमण फैला था। हर पार्टी का कार्यकर्ता और नेता पूरे जोर–शोर से अपने उम्मीदवार का पक्ष मजबूत करने में जी जान से लगा था। सच क्या है, ये तो वे भी जानते थे लेकिन ये भी सच है कि भला कोई ग्वाला अपने दूध को पतला कहता है क्या? फिर सबके अपने–अपने भविष्यकालीन गणित भी लगे हैं।

आज शहर के पिछड़े इलाके में जनआशीर्वाद यात्रा है। उसी उम्मीदवार की, जिसे जनता ने पिछली बार चुनकर भेजा था। ''फिर एक बार–आपके द्वार'', ''आपका सेवक आपका नेता'' और भी मिश्री से मीठे बोल जो सिर्फ इसी समय सुनाई देते हैं, लाऊडस्पीकर से आम जनता को नेताजी के आने का संदेश दे रहे हैं।

आगे–आगे ढोल नगाड़े चल रहे हैं। नेताजी फूलमालाओं से लदे हैं। माथा तिलक से लाल है। चेहरे पर थकान को जबरन मुस्कराहट लाकर दूर करने की भरपूर कोशिश चल रही है। दोनों हाथ जुड़े हैं। निगाहें चारों तरफ घूम रहीं हैं। आंखों में निवेदन, आशा, विश्वास, उत्साह और गलियों में फिर भटकने की विवशता साफ पढ़ी जा सकती है। उत्साह से लबरेज कार्यकर्ता ''जिंदाबाद'' ''फिर एक बार'' जैसे जोशीले नारे लगा रहे हैं। गली के बच्चे उत्साह से नाच रहे हैं। महिला–पुरुष द्वारों, खिड़कियों, छज्जों से ताक रहे हैं। एक बुजुर्ग महिला अपने दरवाजे पर खड़ी है। वक्त की नजाकत देख नेताजी तुरंत उस ओर बढ़ गये। कुछ कार्यकर्ता भी फुर्ती से उस ओर हो लिये। एक बोला–

''अम्माजी नेताजी को आशीर्वाद दीजिये। इन्हें वोट देकर फिर जिताइये।''

नेताजी चरण छूने आगे बढ़े ही थे कि वृद्धा ने अपना चश्मा ठीक किया–

''ये तो पिछले बार भी आया था न।''

कार्यकर्ता के चेहरे पर अतिरिक्त मुस्कराहट फैल गई। उत्साह से बोला–

''जी हां आपके आशीर्वाद से पिछले बार भी जीते थे। इस बार भी दीजिये अपना वोट और.....।''

यह सुनते ही अम्माजी के तेवर अचानक बदल गये–

''क्यों रे पिछले बार क्या कहकर वोट ले गया था कि सड़क बनेगी, बिजली मिलेगी, पानी की समस्या दूर होगी। और भी बहुत कुछ कहा था, याद है न?''

''हां माताजी इस बार जरूर पूरा...।'' कार्यकर्ता फिर अधीरता से बोला।

''तू चुपकर।'' बुढ़िया ने अबकी उसे डपट दिया और नेता से बोली–

''तुझे शरम नहीं आई पांच साल बाद फिर वही बातें दुहराते ? हमें बेवकूफ समझ रखा है क्या ? चले आये मुंह उठाये...। बेशरम...। बरसाती दादुर...। हुंह...।''

मुंह फेरकर बुढ़िया अंदर चली गई। नेताजी का मुंह लटक गया। कार्यकर्ताओं में सन्नाटा छा गया। ढोल बंद हो गये। गली में दूर तक सिर्फ पदचापों की आवाजें आ रहीं थीं।

...ा तले अंधेरा

पवन तनय अग्रहरि अद्वितीय
पुराना चौक, श्री देववाणी विद्यालय के सामने,
शाहगंज
जौनपुर उ.प्र.
मो.–09621062430

प्रतिदिन सुबह और सांयकाल मंदिर में पूजन करने के बाद पुजारी जी थाली में दीप और प्रसाद लेकर चल देते थे। कुछ लोग सिक्का डालकर प्रसाद लेते थे और कुछ लोग वैसे ही। एक दुकानदार के यहां एक सज्जन बैठे थे। उन्होंने एक का सिक्का थाली में डाला।

''पुजारी जी आप किसे वोट देंगे ?'' दुकानदार ने पूछा। ''जब सब अपनी जाति बिरादरी को देते हैं, तो हम भी अपने जाति बिरादरी को देंगे।'' पुजारी जी ने गर्व से कहा।

उन सज्जन ने उठकर एक का सिक्का पुजारी जी की थाली से निकाल लिया। विरोध करने पर उनका जवाब था कि जब आपकी ऐसी सोच है तो आप यह कार्य बंद कर दीजिए।''

मिस–कॉल

श्रीमती उषा अग्रवाल
201–साई रिजेन्सी, रवि नगर चौक अमरावती रोड, नागपुर
महाराष्ट्र–440013
मो.–09028978535

आज भी अहमदाबाद एक्सप्रेस आंखों के सामने से छूटी जा रही थी, अगली ट्रेन अब दो घंटे बाद थी। घर पहुंचते काफी रात हो जाती। पता नहीं क्यों, आजकल स्टेशन में ट्रेनों का समय नहीं बताते, शायद पूछताछ करने वाले बार–बार पूछ कर परेशान करते हैं। इसलिए बड़े शहरों में तो कम्प्यूटराइज सेवा होती है, गाड़ी नंबर डायल करो और समय पता कर लो।

बच्चों की आगे की पढ़ाई के लिए नागपुर में शिफ्ट होना पड़ा। अब रोज सुबह नागपुर से गोंदिया और शाम गोंदिया से नागपुर, साथ में दो–तीन मित्र भी रहते तो बोरियत महसूस नहीं होती थी। सरकारी नौकरी, समय से पहले ड्यूटी छोड़कर भाग भी नहीं सकते। न जाने कब किसकी नजर पड़ जाए। सारी जिंदगी सिद्धांतों पर चलकर ईमानदारी से फर्ज निभाया है तो अब क्यों किसी की सुनें।

अगले दिन गाड़ी आने के समय से कुछ पहले पहुंच गए हम लोग। डिब्बा नंबर पांच में चढ़कर, आराम से बैठकर यही बात कर रहे थे कि रोज इस ट्रेन को पकड़ने के लिए समय कैसे पता किया जाए। क्योंकि, ट्रेन कभी बिल्कुल सही समय से चलती है तो कभी लेट लतीफ। सामने बैठी दो युवतियों में से एक युवती, जो हमारी बात ध्यान से सुन रही थी, मेरी नजर पड़ते ही झेंप गई और नजरें चुराने का प्रयास करने लगी। मैंने उसकी झेंप मिटाने बातचीत की पहल करते पूछा–''मैडम आप लोग कहां से बैठे है ?'' तो उसने बताया कि गोंदिया से पहले आने वाला स्टेशन आमगाँव। वह वहीं रजिस्ट्रार ऑफिस में नौकरी करती है और रोज इसी ट्रेन से वापस नागपुर जाती है, साथ में उसकी सहेली भी वहीं किसी दूसरे ऑफिस में काम करती है।

दो घंटे के सफर में वह हमसे खुल गई और मामूली परिचय के बाद जाते–जाते उसे कहा कि आमगांव में गाड़ी का समय बता देते है। आमगांव से गोंदिया आने में करीब बीस मिनट लगते हैं, तो कल जैसे ही आमगांव से गाड़ी छूटेगी मैं आपमें से किसी के भी मोबाईल में मिस–कॉल कर दूंगी। तय हुआ कि वह मेरे मोबाईल में मिस कॉल किया करेगी।

दूसरे दिन सुबह जाते समय स्टेशन पर जैसे ही वह दिखी, मुस्कुराकर उसने हलो कहा और हम सब साथ ही चढ़ गए डिब्बे में, संयोग से आज भी सामने पड़ने वाला डिब्बा, डिब्बा नंबर पांच ही था। उसने अपना नाम नैना बताया था।

शाम को चार बजते ही मोबाईल में घंटी बजने लगी। नैना का मिस–कॉल था। स्टेशन पहुंचने के कुछ देर बाद गाड़ी सामने से आ रही थी। कदम अपने आप पांच नंबर की ओर बढ़ चले, साथ हंसते–हंसते सफर कब खत्म हो गया, पता ही न चला।

अब तो रोज का नियम बन गया था। हम सभी दोस्त, नैना और उसकी सहेली डिब्बा नंबर पांच के साथ ही जाते, चाहे पहले कोई भी पहुंचता सामने दो, तीन सीट रोक लेता। चार बजते ही मोबाईल की घंटी पर ध्यान लग जाता, कभी गाड़ी लेट होती तो ध्यान वहीं लगा रहता। किसी दिन नैना छुट्टी पर होती तो बता दिया करती कि मैं नहीं आऊंगी, मेरे कॉल का रास्ता मत देखना, परन्तु उसके मिस–कॉल की आदत पड़ चुकी थी। चार बजते ही ध्यान अपने आप उधर चला जाता अैर फिर याद आता कि आज नैना नहीं आएगी, खुद ही समय पता करना होगा।

ऐसे ही सफर करते–करते दिन–महीने में बीतते जा रहे थे। अचानक नैना ने बताया कि उसका तबादला नागपुर हो गया है, अब उसे आना–जाना नहीं करना पड़ेगा। उसकी आँखों से छलकती खुशी स्पष्ट नजर आ रही थी कि वह अब अपने परिवार के पास ज्यादा समय रह पाएगी, उन्हें ज्यादा समय दे पाएगी। मेरे दोस्तों को और मुझे फिर यह चिंता सताने लगी कि अब गाड़ी का समय कैसे पता चलेगा।

काम करते समय का पता न चला, दिन बीत चुका था। चार भी बजने वाले थे, रोज की तरह मोबाईल की घंटी पर ध यान लगा था कि याद आया, आज नैना का मिस–कॉल नहीं आएगा। आज क्या, अब कभी भी नहीं आएगा। यही सोचते–सोचते निकल पड़ी स्टेशन की ओर। मित्रों को आज और कुछ काम था, अंतः वे बाद की गाड़ी से आने वाले थे। गाड़ी हमेशा की तरह अपनी रफ्तार से चली आ रही थी, पर मेरा ध्यान कहीं और था। डिब्बा नंबर एक, दो, तीन, चार और पांच भी सामने से आ रहा था। एक ठंडी सांस भरते अचानक नजर आसमान पर पड़ी। बादलों का झुंड इधर से उधर मंडरा रहा था, हल्की मुस्कान होठों पर तैर आई, भला बादल भी किसी के लिए रूकते हैं लुप्त हो जाते हैं तन–मन को ठंडक देकर, या सूरज की हल्की तपन या सप्तरंगी इन्द्रधनुष में बदल क्षण भर में सबका मन लुभा जाते है। वह भी तो बदली का एक टुकड़ा थी, आई और चली गई।

गाड़ी का अंतिम डिब्बा सामने आ रहा था, मैंने लपककर उसे पकड़ा और चल पड़ा अपने सफर को आगे बढ़ाने, मंजिल की ओर.....।

शिकायत

दिनेश कुमार छाजेड़
ब्लॉक 63/395 भारी पानी कॉलोनी
रावतभाटा–323307
जिला–चित्तौड़गढ़
मो.–9460125035

पत्नी ने बच्चों की शिकायत करते हुए पति से कहा–'सुनो जी! दोनों बच्चों की शैतानी आये दिन बढ़ती जा रही है। दिन भर ध ामा–चौकड़ी मचाते रहते हैं, घर का सामान इधर–उधर बिखेरते रहते हैं। अपने कपड़े स्कूल बैग, जूते आदि कहीं भी पटक देते हैं। पूरा दिन शोर मचाते हैं। मैं तो घर को ठीक करते–करते परेशान हो जाती हूं। चैने से दो पल भी बैठने की फुरसत नहीं मिलती हैं। आप इनको कुछ समझाओ, मेरी तो सुनते ही नहीं हैं।'

पति ने कहा–'समय के साथ सब ठीक हो जायेगा। बच्चे अभी छोटे हैं शैतानी तो करेंगे ही।'

कुछ वर्षों के उपरांत दोनों बच्चे बाहर पढ़ने चले गये। एक दिन पत्नी ने कहा–'सुनो जी! आजकल घर सूना सूना लगता है। खाली घर तो काटने दौड़ता है। बच्चे थे तो चहल–पहल थी। अब मन भी नहीं लगता है। बच्चों को फोन करके पूछो कि उनकी छुट्टियां कब हो रहीं हैं घर कब आयेंगे।'

पति अपनी पत्नी की शिकायत सुन फोन करने चले गए।

चतुर कौआ

एक कौआ जंगल में परिवार के साथ रहता था। एक दिन कौअे के बच्चे को प्यास लगी। बच्चे ने अपने पिता से कहा–'मुझे प्यास लगी है पानी चाहिए।'

पिता ने कहा–'ठीक है तुम प्रतीक्षा करो, मैं पानी तलाश करता हूं।' ऐसा कह कर कौआ उड़ गया। जंगल में इधर – उधर भटकता रहा लेकिन पानी नहीं मिला। तभी उसे अपने पूर्वज कौओ की घटना स्मरण हो आई। किस तरह उसने युक्ति से मटके का पानी ऊपर उठाकर प्यास बुझाई थी। उसने नई उम्मीद से उड़ान भरी। उसे एक जगह कुछ चमकता हुआ दिखाई दे रहा था। वहां पहुंच कर देखा कि पानी की खाली बोतलें, प्लास्टिक के टूटे कप, प्लेट आदि थे। शायद कुछ व्यक्तियों ने पिकनिक मनाई होगी। कचरा यहीं छोड़ गये।

कौअे ने गौर से बोतलों को देखा, कुछ पानी नीचे तले में नजर आ रहा था। उसने भी युक्ति सोची, सारी बोतलों के पानी को एक कप में इकट्ठा किया। फिर अपने बच्चे को बुला लिया। बच्चे को वहीं पड़े एक स्ट्रा से पानी पीने को कहा। बच्चा अपनी प्यास बुझाकर खुश हुआ। इधर–उधर कूदने लगा। लेकिन कौआ सोच रहा था कि इंसान के कदम जंगल की ओर बढ़ने लगे हैं, आगे क्या होगा ?

राशन कार्ड

अशफाक अहमद
41–ए मर्कज–ए–इसलामी के सामने टीचर्स कालोनी, जाफर नगर, नागपुर–440013
मो–9545628287

मैं अपनी राशन की दुकान बंद करके जब घर लौटा तो देखा रमेश की मां मेरे दरवाजे की दहलीज के पास बैठी है और मेरी पत्नी शांती उसे खाना परोस रही है। मैंने घर में प्रवेश करते ही शांती को अपने समीप बुलाकर सरगोशी वाले अंदाज में कहा–''तुम इन्हें घर में बुलाकर खाना खिलाओ।'' मेरी पत्नी ने ऐसा ही किया।

जब वह खाना खाकर चली गई तो शांती कहने लगी–''बेचारी सुबह से भूखी थी। पेट की आग बुझाने कभी अपने और कभी पड़ोस में आ जाती है। मैं तो कहती हूं तुम उस दुखियारी का राशन कार्ड बनवा दो। कम से कम दो समय की रोटी का तो प्रबंध हो जायेगा।'' शांती ने मुग्ध भाव से कहा और मेरी ओर देखने लगी।

मेरे चेहरे पर कुटिलता भरी मुस्कान फैल गई। मैंने शांती के उदास चेहरे की ओर देखकर कहा–''शांती मैं इन्हें भली भांती जानता हूं। वह बड़ी भाग्यशाली मां है, उसके तीन बेटे हैं। पति के स्वर्गवास के पश्चात उन्होंने अपनी पुश्तैनी सम्पति तीनों बेटों में बांट दी। तीनों बेटे अपने–अपने घरों में खुशहाल और सम्पन्न हैं। मैं भला उनका राशन कार्ड कैसे बनवाऊं जिनका नाम सभी बेटों के राशन कार्ड की सूची में सर्वप्रथम है...??''

शायद कि तुम

मैं तुम्हें कैसे समझाऊं नाज़....यह तो एक बेजोड़ रिश्ता है जिससे मुझे अनचाहे ही बांध दिया गया है। मैंने न तो कभी उसे चाहा है और न ही कभी चाहूंगा। यह वास्तविकता है कि मैंने तुम से प्यार किया है मेरे मन में तुम ही तुम हो मैं सदा तुम्हारा ही रहूंगा। वह कितनी अभागिन है कि वह मेरी होकर भी मैं उसका न हो सकूंगा। वह जीवन भर साये की तरह साथ–साथ रहेगी, परन्तु मन से मन की दूरियों को वह पढ़ न सकेगी।

नाज.....प्रेम शरीर से नहीं बल्कि आत्मा से होता है और सच्ची बात तो यह है कि मैंने धोखा तुम्हें नही बल्कि उसे दिया है। शायद कि तुम समझ सको।

दिल के आंगन में...

एक दिन यूं हुआ वह मुझे छोड़कर इस संसार से हमेशा–हमेशा के लिए चली गई...। वह क्या गई मेरे दिल पर नई–नई दस्तकें होने लगीं। दस्तक देने वाली धड़कनें शायद यह समझ बैठीं थीं कि मकान खाली हो गया है। मैं तन्हा हो गया हूं। लेकिन.....लेकिन उन्हें क्या मालूम कि वह.....वह तो केवल संसार से गयी थी मेरे दिल में तो वह कल भी विराजमान थी, आज भी है और सदैव रहेगी!!

परिवर्तन

डॉ. शैल चंद्रा
प्राचार्य
रावणभाटा नगरी
जिला–धमतरी छ.ग.
मो. 9424215994

गांव से आई हुई अम्मा को जब शहरी बहू ने सुबह–सुबह चाय का प्याला पकड़ाया तो वे प्रसन्न हो उठीं। उन्होंने सोचा नाहक ही वे डर रही थीं कि शहर जाकर उनके बहू–बेटे संस्कार भूल गये हैं। वे निश्चिंत भाव से चाय का घूंट भरने लगी। चाय का प्याला रखने वाली थीं कि उनके बेटे ने खाली प्याला ले लिया और रसोई में रख आया।

इस पर अम्मा गद्‌गद् हो उठीं। वे सोचने लगी अब जब वह गांव जायेगी तो सबको यह बताएगी कि उनके बहू–बेटे चाय का प्याला तक उसे अपने हाथ से उठाने नहीं देते हैं। तभी उनका बेटा उनके पास आकर खड़ा हो गया। बेटे ने मां से धीरे से कहा–'मां तुम्हारी बहू और मैं कम्पनी की ओर से एल.टी.सी. मिलने पर दिल्ली घूमने जा रहे हैं। यही कोई पन्द्रह–बीस दिन लग जायेंगे। तब तक आप घर और बड़ी मुनिया को संभाल लीजिएगा। कल सुबह ही हम लोग निकल जायेंगे।'

अम्मा अवाक सी बेटे का मुंह देखने लगी। उन्हें समझ आ गया कि गांव से लाकर उनकी इतनी पूछ परख क्यों हो रही थी।

भाषाएं

एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में सभी भाषाविद् अपनी–अपनी भाषा की श्रेष्ठता सिद्ध करने में लगे हुए थे। वे सभी किसी निष्कर्ष पर पहुंचते कि एक घटना उनके मनोमस्तिष्क पर हावी हो गई। सम्मेलन में आये सभी महानुभावों को सैर कराने का कार्यक्रम तय था। उन लोगों ने बीहड़ जंगल में घूमने की इच्छा जाहिर की। जंगल में घूमते हुए उन्होंने देखा कि एक जंगली बाला बेतहाशा रो रही है। आसपास कोई नहीं है। उस युवती ने उन लोगों को अपने पास देखा तो और जोर–जोर से रोने लगी। सभी भाषाविदों ने अपनी–अपनी भाषा में उससे पूछा। युवती मौन रही। उसकी आंखों से आंसूओं की धारा बह रही है। मुख पर विषाद की रेखाएं। माथे पर चिन्ता की लकीरें। अपनों से बिछुड़ने का दुख। उन परिस्थितियों को परिभाषित कर रही थी जिनसे वह गुजरी थी। अत्यधिक दुख और भय के कारण थरथराते होंठ मौन थे।

अंततः सभी भाषाविद् समझ गये कि युवती के परिजनों को किन्हीं आतंकियों ने मार डाला है और वह दुख से विकल है। वे उस युवती को अपने संरक्षण में ले आये। घटना संबंधी में जानकारी शासन प्रशासन को दे दी गई।

अंतिम चरण के सम्मेलन में निष्कर्ष निकला कि दुनिया की हर भाषा में दुख की भाषा एक होती है।

इंतजार

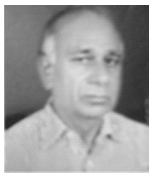

अहफाज़ अहमद कुरैशी
5–ए आदर्श कॉलोनी
पुलिस लाइन टाकली के पीछे
नागपुर–440013
मो–9545628287

वे तीन से बेटे के फोन का इंतजार कर रहे थे। बेटे ने कहा था–'पापा! फोन में पैसे बरबाद न किया करें, कनाडा फोन करने में बहुत पैसे लग जाते हैं। मैं खुद हर रविवार दस बजे सुबह फोन लगा लिया करूंगा।'

बेटा कनाडा में बस गया था हर रविवार उसका फोन आता भी है पर इस रविवार नहीं आया। आज मंगलवार हो गया। वे बेचैन थे चिंतित भी हो रहे थे।

कल उनकी पत्नी को अस्थमा का जबरदस्त दौरा भी पड़ा था। अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा। अस्पताल से लौटकर उन्होंने सोचा बेटे को जानकारी दे दें। फोन लगाया। फोन बंद था। पर फौरन बाद लड़के ने फोन लगाया–'हलो।'

बेटे की आवाज सुनते ही उन्होंने कहा–' तुम्हारी मां अस्पताल में भर्ती है। अस्थमा का दौरा है।'

बेटा–'मां ठीक तो हैं न! मैं मीटिंग में हूं। उसके बाद फोन करता हूं।'

एक घंटे बाद फोन आया–'पापा! पचास हजार रूपये भेज रहा हूं। अच्छा इलाज करवा लीजिए। मैं छुट्टियां मिलने पर पहुंचूगा।'

पापा–'कब तक?'

बेटा–'देखें कितना वक्त लगता है?'

जवाब

नन्हा आयुष आज उदास था। दादा–दादी वापस गांव लौट रहे थे। वे अपने सामान की पेकिंग में लगे थे। आयुष के साथ खेलने के लिए कोई उपलब्ध न था। वह चुपचाप खड़े होकर उनकी तैयारी देखता रहता। कभी अपनी मम्मी के पास जाकर सवाल करता।

मम्मी मेहमानों के जाने से बहुत राहत महसूस कर रही थी। जरा देर बाद आयुष दौड़कर आया और कहा–'मम्मी! दादा–दादी को रोक लो न!'

'नहीं बेटा! उन्हें जाना है।'

'क्या वो अपने नहीं हैं ?'

'हैं बेटा! ऐसा क्यों कह रहे हो ?

'नाना–नानी को तो आपने रोक लिया था। इन्हें क्यों नहीं रोकती ?'

मम्मी को चुप हो जाना पड़ा। इस बात का उनके पास कोई जवाब नहीं था।

परिणाम

कुछ दिनों से मोहन को अपनी तबीयत ठीक नहीं लग रही थी। जांच कराने पर डॉक्टर सागर ने कहा–''बार–बार ताकीद देने के बाद भी तुम मेरी बात को गंभीरता से नहीं लेते हो।''

नीची नजरें करते हुए मोहन ने पूछा–''इस बार क्या बात हो गई है ?''

डॉ. सागर ने समझाते हुए कहा–''शराब पीने की आदत से तुम्हारी दोनों किडनियां लगभग खराब हो चुकी हैं। अब तो ईश्वर ही कुछ करे।''

यह सुनते ही मोहन अवाक रह गया। वह एक मध्यम वर्गीय आटो चालक था। अपनी पत्नी, दो लड़कियों व अपाहिज बूढ़ी मां के साथ रहता था। बुरी संगत की वजह से शराब पीने की आदत ने उसे आज मौत के द्वार पर लाकर खड़ा कर दिया। असह्य दर्द के कारण उसे सरकारी अस्पताल में भर्ती करवा दिया गया । भर्ती के दौरान शराब की एक बूंद न मिलने के कारण उस की तबीयत क्षण–क्षण बिगड़ने लगी। वह बार–बार बेहोश होने लगा।

एक दिन उसने अपनी पत्नी शीला से कहा–''अब शायद मैं तुम लोगों का साथ नहीं दे सकूंगा। शराब के कारण मेरा जीवन बरबाद हो गया। मेरे बाद परिवार का क्या होगा ? अब कौन सहारा देगा ?'' यह कहते हुये वह फूट–फूटकर रोने लगा। उसकी तबीयत में कोई सुधार दिखाई नहीं दे रहा था।

एक रात जोरदार बारिश की वजह से घने बादल छा गये। चारो ओर अंधेरा ही अंधेरा दिखाई देने लगा। मोहन की बिगड़ती हुई हालत को देखते हुए डॉ सागर ने उसके परिवार के सभी सदस्यों को बुलाकर कहने लगे–''हमारी लाख कोशिशों के बावजूद हम मोहन को बचा नहीं पा रहे हैं। शायद इसका अंतिम समय आ गया है। चंद सांसे लिए हुए वह आप सभी को देखना चाह रहा है।''

बिस्तर पर पड़े मोहन के सामने उसकी पत्नी, बूढ़ी मां, और दोनों लड़कियां खड़ी रो रही थीं। इशारे से पत्नी को पास बुलाकर मोहन कुछ कहने की भरसक कोशिश करने लगा। मुंह से शब्द निकल नहीं रहे थे। मन की पीड़ा उसकी आंखों से झलक रही थी। सबकुछ शांत सा लग रहा था। मोहन अपनी पत्नी शीला की ओर एकटक देखने लगा।

देखते–देखते न जाने कब वह अपने परिवार को रोता बिलखता छोड़कर चल बसा। पता ही नहीं चला। तभी तेज हवा के एक झोंके से खिड़की का दरवाजा खुल गया। चारों ओर सन्नाटा सा छा गया। बाहर घने अंधेरे में दूर कहीं कुत्तों की रोने की आवाजें सुनाई देने लगी।

मोहम्मद जिलानी
हकीमी हाऊस,
डी.जी. वार्ड नं.–1
तुकूम, चंद्रपुर–442401
मो.–9850362608

जल्लाद

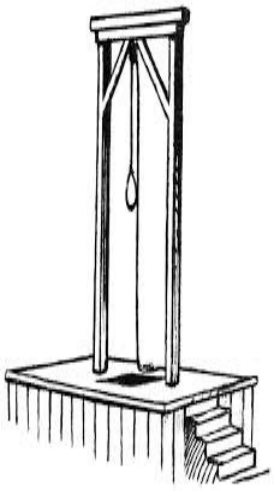

''बाबा, मैं कल स्कूल नहीं जाऊंगा।'' बेटे की बात सुनकर कल्लूराम को बड़ा अचरज हुआ। पूछने लगा–''क्यों नहीं जायेगा ?''

बेटे पवन ने कहा–''स्कूल में मेरे सहपाठी मुझे जल्लाद का बेटा कहकर चिढ़ाते हैं। तुम ऐसा कौन सा काम करते हो ? हमारा समाज जल्लाद को नफरत से क्यों देखता है ?''

बेटे की बातों से बाप का दिल दहल उठा। उसने बेटे से कहा–''हमारे समाज में सभ्य इंसानों के साथ–साथ कुछ दरिन्दे भी रहते हैं। जो अपनी क्रूर मानसिकता के कारण इन भोले–भाले इंसानों को अपनी हवस का शिकार बनाते हुए हत्या करने से भी बाज नहीं आते।'' बाप की बातों का मर्म समझते हुए दस वर्षीय पवन पूछने लगा–''बाबा! आप को लोग जल्लाद ही क्यों कहते हैं ?''

यह सुनकर कल्लूराम की आंखों से आंसू निकल पड़े। कहने लगा–''बेटा! इन वहशी, दरिन्दों को कानून के मुताबिक मौत की सजा दी जाती है, ताकि हमारा समाज भयमुक्त बना रहे। हां, मैं एक जल्लाद हूं, क्योंकि इन खूनी दरिन्दों को सूली पर चढ़ाने का मानवीय कार्य करता हूं।'' पवन को अपने बाबा की बातें सुनकर गर्व होने लगा कि उसके बाबा भी सामाजिक न्याय व्यवस्था को बनाये रखने में महत्वपूर्ण सहयोग करते हैं।

देहात का कवि सम्मेलन

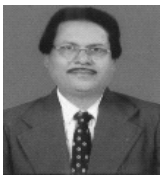

महेश राजा
वसंत–51, कॉलेज रोड
महासमुंद छ.ग.
493445
मो. 94252501544

त्यौहारों का सीजन आ गया था। सभी इसकी तैयारी में जुट गये थे। गांव के लोग चाहते थे कि इस बार शहर की तरह वे अपने गांव में भी कवि सम्मेलन, आर्केस्ट्रा आदि का आयोजन करें जिससे उनके गांव का भी नाम हो।

एक दिन सरपंच जी मेरे यहां आये और बोले 'सर! इस बार हम नवरात्रि पर अपने गांव में कवि सम्मेलन रखना चाहते हैं....आप हमें कुछ कवियों के नाम तो बताइये।

मैंने पांच–सात लोकल कवियों के नाम पता लिखवा दिये।

उन्होंने पूछा 'खर्चा कितना बैठेगा ? और सर यह भी बताइये कि इंतजाम क्या करना पड़ेगा ? हम लोग पहली बार अपने गांव में कवि सम्मेलन करवा रहे हैं न, इसलिए हमें कुछ मालूम नहीं कि क्या करना पड़ता है।'

मैंने कहा 'सरपंच जी! खरचा तो कुछ भी नहीं आयेगा.. ...आप चिन्ता मत करिये, मैंने ऐसे नाम लिखवाए हैं कि उन कवियों को अपनी कविताएं सुनाने की चौबीसों घंटे रहती है। यदि आप आने–जाने का इंतजाम कर देंगे तो ठीक नहीं तो वे साइकिल से ही पहुंच जायेंगे। आप निश्चिंत रहिए।'

वह बोले 'फिर भी कुछ खने पीने का इंतजाम तो करना ही पड़ेगा न।'

मैंने कहा 'खाने में उनकी रूचि कम ही रहती है। यदि आप पीने का इंतजाम कर देंगे तो वे रात भर आपको कविताएं सुनाते रहेंगे।'

मंत्रालय के पीछे वाले मित्र

दोस्त राजधानी में रहते थे। इस बार वे मेरे शहर आये। हम दोनों मित्रों के बीच बातों का सिलसिला शुरू हुआ।

मित्र ने मुझसे पूछा–'इधर की क्या स्थिति है ?' दरअसल चुनाव होने वाले थे, फिर मित्र भी राजनीति में भी सक्रिय थे।

मैंने कहा–'हम तो कस्बे वाले हैं। आप ही बताइये राजधानी का क्या हाल है ?'

वह बोले–'उधर तो एक सौ एक परसेन्ट अपने मुख्यमंत्री जी की स्थिति सॉलिड है। नए प्रदेश में उन्होंने बहुत काम किया है। तुम बताओ कस्बों में लोगों की क्या सोच है ?'

मैंने कहा–'यहां के लोग तो मुख्यमंत्री जी से खुश नहीं हैं। उन्होंने छोटे कार्यकर्ताओं को तो जड़ से ही काट दिया है।'

वह बोले–'यह तो कार्यकर्ताओं की फैलाई हुई हवा है। देखना इस बार जब चुनाव होंगे, अपने मुख्यमंत्री जी ही दोबारा अपना मंत्रीमंडल बनाएंगे। मेरे हिसाब से तो उन्हें कोई डिगा नहीं सकता। उनकी जीत और मुख्यमंत्री पद पक्का है।'

मैंने कहा–'यार! बहुत दिनों बाद मिले हो यह सब तो चलता ही रहेगा। पहले यह बताओ कि राजधानी में घर कहां है तुम्हारा ?'

वह बोले–'ठीक मंत्रालय के पीछे है। किसी से भी पूछोगे तो बता देगा।'

मैंने कहा–'इसीलिए तुम पर मंत्रालय और अपने मुख्यमंत्री का प्रभाव है।'

वह कुछ नहीं बोले। मैं समझ गया कि जरूर इनकी कोई फाइल मुख्यमंत्री के मंत्रालय में अटकी होगी।

और खरगोश फिर हार गया

हमेशा की तरह इस बार भी कछुए और खरगोश में दौड़ की प्रतियोगिता हुई और हर बार की तरह इस बार भी कछुए की जीत हुई।

प्रतियोगिता के संचालक ने खरगोश से उसकी हार की प्रतिक्रिया जाननी चाही। पेड़ के नीचे लेटे–लेटे खरगोश ने बड़े इत्मीनान से जम्हाई लेते हुए जवाब दिया–

'सदियों से हमारे पुरखे इस दौड़ में हारते चले आ रहे हैं, फिर भला मैं इस चली आ रही परिपाटी को कैसे बदल सकता हूं...आखिर हमारे पुरखों की इमेज का सवाल है।'

इसके बाद संचालक ने कछुए से परंपरानुसार जीत की प्रतिक्रिया जाननी चाही तो कछुए ने कहा–'वैसे तो सदियों से हम खरगोश से जीतते आये हैं, लेकिन इस बार खरगोश ने मुझे चेतावनी दी थी कि वह जीतेगा...तो मैंने मामला सेट कर लिया और खरगोश से मैच फिक्सिंग कर लिया था, इसलिए वह हार गया....।'

'लेकिन आप यह बात किसी को बताइयेगा मत...और इस सच्चाई को अपने तक सामित रखना।'

आश्चर्य

पेड़ लगाओ धरती बचाओ नामक एन.जी.ओ. के संचालक प्रताप बाबू की बिटिया की शादी में उनके घर को देखकर मैं इसलिए अचम्भित नहीं था कि वो शीशमहल सा सुन्दर था बल्कि पूरा घर सागौन, शीशम जैसे बेस्किमती पेड़ो की लकड़ियों से बने विभिन्न फर्नीचरों से भरा पड़ा था।

शिवेन्द्र कुमार यादव
आकाश नगर, देवेन्द्र किराना स्टोर्स के पास, फ्रेजरपुर, राजीव गांधी वार्ड–33, जगदलपुर जिला–बस्तर छ.ग. 494001
मो. 09981019689, 09406479491

कन्या भ्रूण हत्या

आश्विन मास शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि में विभिन्न व्रतधारी कॉलोनी में घर घर जाकर कन्या भोज हेतु कन्याओं को खोज रहे थे।

चंपा की रात

हर रात चांद की चांदनी और रातरानी के फूलों की खुशबू से भरी नहीं होती। अक्सर चंपा के रोने सिसकने और उसके शराबी पति की भद्दी गालियों की आवाजें भी सुनाई पड़ती हैं।

कार्यभार

पोस्ट ऑफिस में कैश डिपोजिट काउंटर में कुछ लोग ही थे जहां एक 27 या 28 वर्षीय युवक बैठा था। वहीं पत्र, आवेदन, कार्ड और कुछ वस्तुओं को स्पीड पोस्ट और रजिस्ट्री कराने आये आगंतुको की लम्बी कतार थी जहाँ एक वृद्ध व्यक्ति जिसे रिटायर होने को कुछ महीने ही बचे होंगे, तकनीकी ज्ञान के आभाव में धीरे धीरे कम्प्यूटर पर एक एक कार्ड की एंट्री कर रहा था।

दो पांव का जानवर

जंगल के जानवर जंगल में कुछ महीनों से चोरी छिपे कार, जीप का आना जाना, कुछ आदमियों का जमीन नापना उसे रिकॉर्ड करना आदि देख रहे थे। एक दिन उनके साथ कुछ आदमी आरी, कुल्हाड़ी और बन्दूकों के साथ आये। अब जानवर समझ चुके थे यहाँ रहना ठीक नहीं जहाँ दो पांव के जानवर बसना शुरू कर दिए हों।

साहब जल्दी में है

कार में बैठे–बैठे सांसद महोदय 45 डिग्री तापमान में इस जलती हुई सड़क पर एक ठेलेवाले के रास्ते के बीच में आ जाने पर कटु अपशब्दों का प्रहार कर रहे थे। अनाज से भरी बोरियों को ठेले पर ले जा रहा ये आदमी धीरे से अपने ठेले को साइड में लेकर रास्ता देता है। शायद इनसे भी ज्यादा जल्दी है....।

प्रशंसा

'क' 'ख' के पास 'ग' की इस तरह बुराई कर रहा था–साला वो 'ग' निहायत ही मतलबी और घटिया किस्म का आदमी है, पर पता नहीं कैसे तिकड़म करके जुगाड़ बिठा लेता है और चापलूसी करके अपना उल्लू सीधा कर लेता है। लानत है यार ऐसी जिन्दगी पर....

आलोक कुमार सातपुते
832, सेक्टर–05 हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी सड्डू, रायपुर पिन–492014 छ.ग.
मो–9827406575

ख–शः शः चुप हो जाओ। 'ग' पीछे खड़े होकर हमारी बातें सुन रहा है।

तभी 'ग' सामने आता है और 'क' से कहता है–बोलते रहो मित्र, बोलते रहो....।

'क' झेंपते हुए– हें,हें.....मेरे मुंह से तुम्हारी बुराई निकल गई।

ग–मित्र जिसे तुम बुराई कह रहे हो, वह आज के दौर में प्रशंसा है, और इस लिहाज से तुम मेरे प्रशंसक हो।

जीत

वह मुझसे बहुत प्रतिद्वंद्विता रखता था। एक दिन अचानक उसे रूपयों की जरूरत आन पड़ी और उसने मुझसे कर्ज ले लिया। अब वह मुझसे बचता फिरता है। कर्ज नहीं लौटा पाने के लिए बहाने बनाने लगता है। उसकी इस स्थिति से मैं बिना लड़े खुद को विजेता महसूस करने लगता हूं और मेरे चेहरे पर विद्रूप सी मुस्कान तिर जाती है।

सेवकपुर

उस देश में राजशाही की परम्परा थी, और राजा बड़ा ही अलोकप्रिय हो चला था। आसपास के दूसरे देशों में लोकतंत्र की बयार बह रही थी। उस देश के लोग भी अपने यहां लोकतंत्र लागू करवाना चाह रहे थे और इस हेतु क्रांति के लिए माहौल बनाने में जुटे थे। परेशान राजा ने राजगुरू से सलाह ली। राजगुरू की सलाह पर राजा ने खुद को प्रजा का सेवक घोषित कर दिया। राजदरबारी अब शासकीय सेवक हो गये। कुछ समाजसेवक तो पहले ही थे। अब एन.जी.ओ. भी समाज सेवा की दुकान लगाने लगे। और तो और प्रजा का खून चूसने वाले व्यापारी भी खुद को सेवक कहने लगे। आम जनता में भी कई तरह के सेवक पैदा हो गये। राज्य में जो जितना अधिक सम्पन्न था वो उतना ही बड़ा सेवक माना जाने लगा। इस तरह उस राज्य में लोकतंत्रात्मक राजशाही कायम हो गई और जनभावनना के मद्देनजर उस देश का नाम सेवकपुर रख दिया गया।

चोरी

"देखो ना भाभी ज़रा मायके क्या गई घर में चोरी हो गई सब चला गया..वो मेरी ननद है कि सारा दोष मुझे ही दे रही"– मंजू कहे जा रही थी अपने ही रौ में।

"क्या कह रही है..?"

"कहती है, सारा घर नौकरों के भरोसे छोड़ देती हो। खुद कुछ करती नहीं।"

"और तुम्हारी सासू माँ ?"

"वो तो कहती है कोई बात नहीं, उन्हें थोड़े ही दुःख होगा उन्होंने दिया ही क्या .....सब तो मेरे मायके का था।"

मैं अवाक उसका चेहरा देखती रही।

श्रीमती मधु सक्सेना
सचिन सक्सेना
एच–3,व्ही.आई.पी.सिटी
उरकुरा रोड – सड्डू
रायपुर छ.ग.–492001
मो.–9516089571

चोरी

बड़े आफिसर की बीबी मीना के भव्य सजावट वाले घर में मैं जाकर बैठी ही थी कि मीना हड़बड़ाते हुए बोली–''देखो ना भाभी हमारे घर में चोरी हो गई।''

''अरे...पुलिस में ख़बर की ?''

''नहीं ...।''

''क्यों ?''

''कैसे बताते ?'' मीना ने झिझकते हुए कहा ।

सपने

मज़दूर बस्ती में रहने वाला सुरेश आज बहुत खुश है। आज उसका जन्मदिन भी है और रिजल्ट भी। अच्छे नम्बरों से पास हुआ है....बेसब्री से बाबा का इंतज़ार ....!

दूर से बाबा को आते देख कर सुरेश दौड़ कर उनके पास गया। कुछ कहने के लिए मुंह खोला ही था कि एक झन्नाटेदार थप्पड़ उसके गाल पर पड़ा..उसने रोते हुए पूछा–

''क्यों बाबा ..?''

''बस हो गई पढ़ाई, कल से काम पर जाओ।''

''पर मैं.... पढ़ना चाहता हूँ ....। आपने खुद ही तो मेरा दाखिल करवाया था।''

''तो क्या करता ...तुझे मुफ़्त में खिलाता ?...साली सरकार भी नियम बना देती है। परेशानी हम गरीबों को .....स्कूल में एक समय का भोजन तो मिलता था ना ....वो तो बचा ....?

''पर बाबा...।'' सिसकते हुए सुरेश बोला।

''कुछ नहीं सुनना मुझे। हो गया चौदह साल का। कल से काम जा। मैं बात कर आया हूँ।''

बेबस खड़ा रहा सुरेश। लड़खड़ाते क़दमों से बाबा, सुरेश के सपनों को रौंदते हुए चले जा रहे थे ।

पर्दा

आह! दोज़ गुड ओल्ड कॉलिज डेज़! सपनों की दुनिया! मौज–मस्ती, हँसी ठहाके! लाइब्रेरी और कॉरीडोर्स में सिमटा संसार! कैन्टीन में चाय की प्यालियों पर छलकते मार्क्स, फ्रायड, स्लेयर मासेर, नीत्से! नीलू इन बहसों में अहम हिस्सा हुआ करती थी।

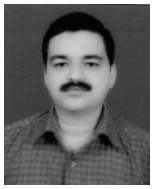

शिशिर द्विवेदी
उपसंपादक मीडिया विमर्ष
बस्ती उत्तरप्रदेश
मो.–09451670475

ऐसी बहसों में प्रायः आर्थिक रूप से कमजोर छात्र हिस्सा नहीं लिया करते थे। वे प्रायः हीन भावना से ग्रस्त रहते थे और उनकी अपनी एक अलग दुनिया हुआ करती थी।

कॉलेज में कार्यक्रमों में भी नीलू बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेती थी। काफी मिलनसार थी नीलू। वैसे उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि की कोई जानकारी हमें नहीं थी। उसी के बताने के अनुसार वह शहर के एक समृद्ध इलाके में रहती थी। पहनावे से भी वह सभ्रांत परिवार की लगती थी।

छात्र संघ का चुनाव चल रहा था। प्रायः हर शाम हम छात्रों का समूह शहर के किसी न किसी इलाके में प्रचार अभियान में निकल जाता था। उस दिन हम एक पॉश इलाके में थे। कॉलेज से ही छात्रों के पते मिल जाया करते थे। सचमुच बड़ा ही समृद्ध इलाका था। चौड़ी सड़क पर दोनों ओर शानदार बँगलों की कतारें, पोर्टिको में खड़ी कारें, नीम अँधेरे में दूधिया रोशनी में डूबे बँगलें, सड़क के दोनों और छायादार वृक्षों की कतार, फिजाँ तक दिलकश रूमानियत। पते को देखते ही एक ने बताया कि इसी रो में नीलू का भी बंगला होना चाहिए। नम्बर खोजते हुए एक बँगले के सामने पहुँचे। गेट बन्द था, भीतर से 'किशोर अमोणकर' का राक मालकोंस हवाओं में गूँज रहा था, तबले पर निखिल बनर्जी थे। बन्द गेट के पीछे चौकीदार की आँखों में सवाल झाँक रहा था। हमने नीलू के बारे में दरियाफ्त किया। गेट खोल उसने परिसर में एक ओर इशारा किया। हम उस ओर गए जो सर्वेन्ट्स क्वार्टर प्रतीत होते थे। एक क्वार्टर में एक महिला चूल्हे पर रोटी सेंक रही थी। हम नीलू के बारे में पूछा। आहट पाकर तब तक नीलू आ चुकी थी।

अगले कई दिनों तक नीलू कॉलेज में नहीं दिखाई पड़ी और जब आयी तो अपने में सिमटी हुई। अब उसकी दुनिया से मार्क्स, नीत्से, इलियट, कीर्केगार्द विदा हो चुके थे। शायद उसने अपने इर्द–गिर्द एक अलग दुनिया बसा ली थी। मुझे अनायास ही यशपाल की 'पर्दा' कहानी याद आ गयी। आज भी मैं सोचता हूँ कि काश! हमारे और उसके बीच का 'पर्दा' ज्यों का त्यों बना रहता।

एक समझौता

संतोष श्रीवास्तव 'सम'
बरदे भाटा, कांकेर
जिला–कांकेर (छ.ग.)
मो.–993819429

वह एक अजीब सी कश्मकश लिये हुई थी। आखिर उसने यह तय कर ही लिया था कि वह उसे किसी भी कीमत पर खोना नहीं चाहती। उठते, गिरते, सिमटते, बिखरते विचारों से वह आप ही में टकराती और संभलती थी।

एक दिन वह यूं ही अपने आंगन में टहल रही थी। ठंडी हवाओं का झोंका रह–रह कर उसके आंचल में अपनी सारी ताकत उड़ेलता जाता और उसका आंचल हवाओं के दबाव में कहीं इधर तो कहीं उधर को उड़ता जाता।

वह टहलते हुए उस आंगन के उस स्थल पर बैठ गई, जो अन्य स्थलों से थोड़ा ऊपर उठा हुआ था। शायद कोई पत्थर जमीन के नीचे दबा उस जमीन को एक उभार दे रहा था। वह कुछ इस तरह बैठी थी कि उसका आंचल हवाओं को पूरी छूट देता दिखता था। उसकी निगाहें यूं ही इधर–उधर घूमती हुई अपने आंचल पर जाकर ठहर गई। उसने देखा हवाओं का रूख दोनों ओर है। जितना वह आंचल को बायीं ओर ले जाता, उतना ही वह कभी दायीं ओर भी उसे लहराने मजबूर करता। ठीक उसके मन का यह सजीव व मूर्त रूप में चित्रण था।

वह थोड़ी घबराई व धड़कनों के बढ़ने का आभास करती हुई अचानक खड़ी हो गई। चारो ओर स्थित पेड़–पौधे हवाओं के साथ मस्ती में डूबे हुए थे। वह तेज कदमों से आंगन से अंदर कमरे में बढ़ जाती है। तथा दरवाजा बंद कर लेती है। बाहर हवाओं का उसी प्रकार बहना हो रहा था। परन्तु अंदर उसका आंचल एक जगह स्थिर सा हो चुका था। शायद उस आंचल के ठहराव में उसके मन का भी ठहराव था।

वह बड़ी धैर्यता के साथ सांसे ले रही थी। उसका यह निर्णय अंतिम निर्णय था। वह अब और नहीं उलझना चाहती थी। अब वह अपने मन को पूरी तरह नियंत्रित कर चुकी थी। शायद जिन्दगी उसे इसी ठहराव में दिखने लगी थी।

थोड़ी देर वह बंद कमरे में अपने आप में खोई रहती है तथा उसके पश्चात् वह बैठे–बैठे कुछ टटोलती है, और उसके हाथ एक चाबी लगती है। वह उस चाबी को लेकर कमरे में बगल के कोने में रखी छोटी आलमारी को खोलती है। आलमारी से वह एक डायरी निकालती है। उस डायरी में वह कुछ ढूंढती है सहसा एक पृष्ठ पर वह आकर रूक जाती है। कुछ पढ़ने के पश्चात् वह रूक जाती है। फिर डायरी का अगला पन्ना पलटती है और कुछ लिखने बैठ जाती है। लिखने के पश्चात् वह डायरी बंद कर पुनः उसी आलमारी में रख देती है। ताला बंद कर वह झूमती हुई सी कमरे से बाहर निकल जाती हैं।

इस तरह उसका झूमना तथा बेफिक्र होना इस बात को इंगित करता है कि वह किसी भारी बोझ से निवृत्त हो अत्यंत शांत चित्त सी अपने को महसूस कर रही है। उसका झूमना कुछ इस तरह सा लग रहा हैं कि वह काफी रिलेक्स सी महसूस कर रही है।

तभी उसकी अपनी सी हमदर्द सहेली वीना वहां पहुंचती है। वह अपनी हमदर्द नेहा से कहती है–''नेहा तुम जानती हो मेरा सलेक्शन प्रतियोगी परीक्षा में हो चुका है। अब मैं शायद तुमसे बहुत दूर चली जाऊँगी। फिर तुम तो बिल्कुल अकेली हो जाओगी। बताओं न तुम्हें मेरा सलेक्ट होना कैसा लग रहा है।''

नेहा ने वीना से कहा–''वीना सचमुच यह खबर अत्यंत हर्षित करने वाली है, पर क्या तुम्हें मालूम कि मैंने भी एक बहुत बड़ी छलांग लगा ली है।''

वीना पूछती है–''वह क्या ?''

नेहा कहती है–''मैंने अपना स्वभाव बदल लिया है। अब मैं कभी अपने दफ्तर के बॉस से झगड़ा नहीं करूंगी। और अनिल जी को भी कह दूंगी कि यदि आपको मेरे साथ उसी दफ्तर में काम करना है, तो बॉस से न उलझें। अपने स्वाभिमान को गिरवी रखकर तथा हर अन्याय, नाइंसाफी को सहते हुये काम करना होगा। जब हम ऐसा कर सकेंगे तो कोई हमें अलग–अलग नहीं कर सकेगा।''

फिर वह वीना को आलमारी की वह डायरी निकाल कर दिखलाती है जिसमें लिखा था कि यह समझौता सिर्फ अपने प्यार की खातिर एक समझौता हैं। वीना, नेहा के इस समझौते को लेकर हतप्रभ सी हो गई थी। एक स्वाभिमानी नारी का प्यार की खातिर इनता बड़ा बलिदान सचमुच मन को चकित करने वाला था।

हिसाब

देवेन्द्र कुमार मिश्रा
पाटनी कालोनी, भरत नगर, चंदनगांव
छिन्दवाड़ा–480001
मो. 9425405022

पिता यदा–कदा कहते रहते थे–''तुम्हारी पढ़ाई–लिखाई पर मेरे लाखों रूपये खर्च हो गये।''

बेटा पढ़–लिखकर आई.पी.एस. अधिकारी बन गया। पिता ने आदत के अनुसार एक दिन गुस्से में कह दिया किसी विवाद पर।

''मेरे तो लाखों खर्च हो गये तुम पर।''

बेटे को इस बार गुस्सा आ गया। उसने चेकबुक निकालकर पिता का नाम भरा और कहा–''कितने खर्च हो गये अब तक। हिसाब कर देता हूं आज। कान पक गये यही सब सुनते–सुनते।''

पिता के चेहरे पर सन्नाटा खिंच गया।

किसके लिए रोता है?.....

रचना
श्री उमेश शिवलिंग आय्या
रविवार पेठ
तिसगांव 414106
तालुका–पाथर्डी
जिला–अहमदनगर
मो.–7066301946

रात साढ़े नौ बजे थे। पोलीस थाने में पी. एस. आय.

"हवलदार.. सब कैदियों ने खा लिया?"

"हां साब सिर्फ 55 नंबर के कैदी ने नहीं खाया।"

"क्यों नहीं खाया, तबियत ठीक है ना उसकी?"

"हां साब, ठीक है, सिर्फ दो दिन से खाना नहीं खाया है।"

"दो दिन से? और तू आज बता रहा हैं मुझे?"

पी. एस. आय. को गुस्सा आया। इस कैदी की बीवी को खुदकुशी किये पचास दिन हुये थे, तबसे वह यहां कैद में था। उसकी बच्ची सिर्फ छै महिने की थी। वे झटसे उठकर कोठरी की और बढ़े।

"हवलदार, दरवाजा खोलो।"

हवलदार ने दरवाजा खोला। 55नं का कैदी उठकर खड़ा हो गया।

"क्यों रे खाना क्यों नहीं खाता? तबियत ठीक नहीं है क्या?"

"नहीं साब, ऐसी कोई बात नहीं।"

"फिर क्यों नहीं खा रहा?"

"साबजी, आप को जितना चाहिए उतना रुपया देने के लिए तैय्यार हूं..... मुझे घर जाने दीजिए। आपके पांव पड़ता हूं। मुझे बहुत याद आ रही है...मेरी बच्ची की।"

"और बीवी की?"

बीवी का नाम लेते ही वह जोर–जोर से रोने लगा।..... थोड़ी देर कोई कुछ नहीं बोला।

"अच्छा, चल रो मत, खाना खा ले और एक बात बता, तू अब किसके लिए रोता हैं?.....बेटी या बीवी?"

.....पी.एस.आय. बोल गया और कैदी उनकी तरफ देखता रहा। उसकी नजर में बड़ा प्रश्नचिह्न उपस्थित था।

हे भगवान

दूसरी कक्षा! अध्यापक द्वारा दिया गया प्रोजेक्ट जमा का काम चल रहा था।

अध्यापक हर छात्र से उसका नाम लेकर प्रोजेक्ट फाईल जमा कर रहे थे। एक के बाद एक छात्र आकर अपनी प्रोजेक्ट फाईल देकर जा रहा था। जैसे ही प्रीति का नाम लिया, प्रीति हाथ में दो फाईलें लेकर आयी। उसने अपनी फाईल जमा कर दी। अध्यापक अगला नाम ले रहे थे। प्रीति ने बीच में ही टोक दिया–"सर आप स्वाति को भूल गये क्या? ये लीजिए उसकी फाईल भी रख लीजिए। अस्पताल जाने से पहले ही उसने फाईल पूरी कर दी थी।"

"लेकिन....." अध्यापक के कुछ कहने से पहले ही,

"सर आप इसे रख लीजिए, नहीं तो स्वाति अस्पताल से आने के बाद नाराज हो जाएगी।" इतना कहकर प्रीति फाईल देकर अपनी जगह पर झट से जा बैठी।

अध्यापक की आंखों से आंसूओं की धारा बहने लगी। स्वाति प्रीति की जुडवां बहन थी। जो चार दिन पहले एक हादसे में गुजर गयी थी। अध्यापक ने अपनी आंखें बंद कर ली मन ही मन इतना कह पाये,'हे भगवान.....!'

लघुकथाएं

(1)**प्रेम कथा**

लड़के का नाम – चुप।
लड़की का नाम – खामोशी।
गांव का मुखिया – शोर।
अंत – पारंपरिक।

(2)**हकीकत**

एक स्थान पर एक हिंदू कुछ हिंदुओं से कह रहा था कि उसे मुसलमानों ने लूट लिया। दूसरे स्थान पर एक मुसलमान दूसरे मुसलमानों से कह रहा था कि उसे हिंदुओं ने लूट लिया । तीसरे स्थान पर कुछ लुटेरे दूसरे लुटेरों से कह रहे थे दोनों को हमने ही लूटा है, नारे बदल–बदल कर।

(3)**पानी**

'हेलो'
'कौन पानी ?'
'जी हां मैं पानी बोल रहा हूं, आप कौन ?'
'मैं प्यास बोल रही हूं'
'हैलो हैलो पानी, पानी, हैलो... ।'
'हैलो प्यास, हैलो हैलो.. ।'
'हैलो...'
'हैलो...'
'हैलो...'

अख्तर अली
फ़ज़ली अपार्टमेंट
कांच गोदाम के पास
आमानाका, कुकुरबेड़ा
रायपुर छ.ग.
पिन– 492001
मो.– 9826126781

फ़र्क

उमेश अपनी पत्नी को हमेशा ताने दिया करता। कहता कि तुम्हारी मां ने क्या सिखाया है ? कोई काम ढंग से नहीं करती हो। जबकि मनीषा शरीर से भले ही कमजोर है लेकिन काम में लगी रहती है। न तो कभी काम से जी चुराती और न कभी उमेश से बहस करती। कभी जब बुरा लगता तो बस छिप कर आंसू बहा लेती। कभी मायके जाकर मां को देखने की बात करती तो उमेश चिढ़ जाता और साफ मना कर देता।

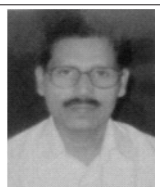

अरविन्द अवस्थी
श्रीधर पाण्डेय सदन
बेलखरिया का पुरा
मीरजापुर ,उ0प्र0
231001
चलभाष : 9161686444,
8858515445
e mail :
awasthiarvind@gmail.com

उमेश की मां अचानक बीमार हुई। उसकी बीमारी बढ़ती ही जा रही थी। बुढ़ापा तो अपने आप में ही एक बीमारी है शरीर कमजोर होता जा रहा था। इस दौरान उमेश की पत्नी ने अपनी सास की बहुत सेवा की। सुबह से शाम तक उनकी देखभाल और घर का काम करते वह थक जाती लेकिन किसी से कुछ कहती न थी। आखिर उसकी सेवा फलवती हुई। उमेश की मां स्वस्थ होने लगी। अब उमेश की आंखें खुलीं और मनीषा की तारीफ करते हुए उसने कहा–''मनीषा! मैं कहता था न कि तुम्हारी मां ने क्या सिखाया है, मुझे उसका उत्तर मिल गया। सचमुच तुम्हारी मां धन्य है जिसने तुम्हें ऐसे संस्कार दिये। तुमने अपनी सेवा से मेरी मां को बचा लिया। मनीषा का दिल भर आया, बोली–''मैंने तो कभी अपनी मां और आपकी मां में कोई फर्क नहीं समझा।''

चोर कौन

रीना लड़कियों के एक स्कूल के हॉस्टल में दाई का काम करती थी। उसके तीन बच्चे थे–दो लड़कियां और एक लड़का। कई साल पहले उसका पति काम की तलाश में मुम्बई गया तो लौटा ही नहीं। आठ बरस हो गये उसकी कोई खबर नहीं मिली। एक चिट्ठी भर तो नहीं लिखी उस निर्दयी ने। यहां परिवार का बुरा हाल था। रीना की बूढ़ी सास पड़ोस के घर में बर्तन मांज आती थी। एक दिन सीढ़ियों से पैर फिसला और नीचे गिर गई। पैर की हड्डी में फ्रेक्चर हो गया। ठीक से इलाज न होने के कारण वह भी एक जगह की हो गई। सारी ज़िम्मेदारी रीना के सिर पर थी।

उस दिन रीना की तबीयत भी कुछ नासाज़ थी। हॉस्टल जाने के पहले घर में खाना नहीं बना पाई थी। उसने सोचा कि हॉस्टल में जो खाना बच जाता है उसे फेंक ही तो दिया जाता है, क्यों न उसी में से कुछ बच्चों के लिए ले जाऊं! हालांकि उसे पता था कि ऐसी गलती की कोई माफी नहीं थी। बचे खाने में से दो रोटियां निकाल लेने पर एक दाई की नौकरी जा चुकी थी। फिर भी उसने हिम्मत जुटाई। जो खाना बचा था उसे बाहर फेंकने के लिए रीना ही ले गई। उसने वहीं अपने डिब्बे में सब्जी और कुछ रोटियां रख लीं। गेट से अंदर आने पर हॉस्टल वार्डन खड़ा मिला। उसे देखते ही डर के मारे रीना के हाथ से डिब्बा छूटकर नीचे गिर गया और खाना बिखर गया। वह वार्डन के सामने गिड़गिड़ाती रही, बच्चों के भूखे होने की कहानी सुनाती रही किंतु वार्डन पर कोई असर न हुआ। रीना को डांटते हुए उसने कहा–''चलो अपना हिसाब लो और गेट के बाहर जाओ। हमें तुम जैसी चोर दाई की जरूरत नहीं है।''

रोती–सिसकती रीना गेट से बाहर जाती हुई सोच रही थी कि बचा हुआ खाना लेने पर उसे चोर कहने वाले को कोई चोर क्यों नहीं कहता जबकि वह पच्चीस रूपये किलो चावल खरीद कर रजिस्टर में अट्ठाइस रूपये किलो का भाव लिखता है। जवाब कुछ–कुछ उसकी समझ में आ रहा था।

एहसास

इधर कुछ वर्षों से मुझे ऐसा लगने लगा था कि आज का आदमी बिल्कुल स्वार्थी हो गया है। उसे उसके अलावा किसी से कोई मतलब नहीं है। वह अपनी खुशी में खुश अपने दुख में दुखी रहता है। रिश्ते–नाते में सौदेबाजी का खेल चल रहा है। सच कहूं तो मुझे ऐसा लगता है कि मैं सबसे अच्छा आदमी हूं और बाकी लोग बहुत बुरे हैं। मुझे लोगों से नफरत सी होने लगी थी।

जुलाई का महीना था। हफ्ते भर से बारिश नहीं हुई थी। धूप तेज थी। गर्मी भी अच्छी खासी थी। मैं विद्यालय से अपने अध्यापक मित्र की मोटरसाइकिल पर बैठकर घर आ रहा था। अचानक एक आटो सामने आ गया। उसकी रफ़्तार तेज थी। वह संभाल न सका और हमारी मोटरसाइकिल से टकरा गया। मेरे साथी का पैर टूट गया और मुझे भी गंभीर चोट आई। जैसे ही दुर्घटना हुई मैंने देखा कि आसपास के लोग आ गये। राह चलने वाले भी रूके। आटोचालक को पकड़कर दो–चार थप्पड़ भी मारा। हम लोगों को पकड़कर सहारा देते हुए एक दुकान के अंदर ले गये। लोगों ने मालिश की। एक सज्जन अपने घर से बर्फ का टुकड़ा ले आये और उससे चोट सेंकने को कहा। अस्पताल ले जाने की तैयारी में थे कि इतने में हमारे स्कूल के लोग सहायतार्थ पहुंच गये। अस्पताल में पहुंचते ही डॉक्टर ने इंजेक्शन दिये। एक्सरे किया और प्लास्टर चढ़ाकर घर भेज दिया। पूरा घटनाक्रम बार–बार आंखों में नाचने लगा। उस दिन मुझे लगा कि बाकी लोग मुझसे बहुत अच्छे हैं। अभी लोगों में इंसानियत बची हुई है। मैं हृदय से बार–बार उन लोगों के प्रति आभार व्यक्त करता रहा। मुझे अपनी भूल का एहसास होने लगा था।

दुःखवा मैं कासे कहूं

पूर्णिमा विश्वकर्मा
28, इच्छामणी नगर
चिनार को. आप. हा.
सोसायटी केनाल रोड
ईस्ट जेल रोड,
नासिक रोड–422101
महाराष्ट्र
मो.–9960809272

''अरे कमली! तू अभी काम करने आ रही है ? आज इतनी देर क्यों कर दी ? तेरे कारण आज मुझे फिर स्कूल से छुट्टी लेनी पड़ी। लकी तेरे सिवाय और किसी के पास रहता ही नहीं है। उसे अकेला छोड़कर मैं कैसे पढ़ाने स्कूल जाती, अगर जाती भी तो मेरा सारा ध्यान घर में ही लगा रहता।''

''मेम साब! क्या करें, अपनी तो किस्मत ही फूटी है।''

''अरे! क्या हुआ कमली ? रो क्यों रही हो ?''

''देखो न मेमसाब! आज फिर मेरे मर्द ने मारा है। पीठ और हाथ–पैर में निशान पड़ गये हैं, अभी तक दर्द हो रहा है।''

''आखिर बात क्या हो गई थी कमली ?''

''मेमसाब! आज सुबह की बात है। सोकर उठी तो उसी समय वो पीने के लिए पैसे मांगने लगा...रात की अभी पूरी उतरी भी नहीं थी कि फिर से पीने को चाहिए।''

''.....''

''मैंने भी कह दिया–तेरे पीने के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। इसी बात पर झगड़ा बढ़ गया। मुझसे मारपीट की हमेशा की तरह गाली गलौच करते हुये, वो रूपये छीनकर ले गया। मैंने बहुत समझाया कि ये रूपये मैंने मुन्नी की स्कूल की फीस के लिए बड़ी मुश्किल से बचा कर रखे थे। तो कहने लगा–मुन्नी को पढ़ाकर क्या साहब बनायेगी। उसे घर का काम सिखा, अपने साथ ले जाया कर, आखिर उसको भी तेरी तरह एक दिन चूल्हा फूंकना है। पढ़ाई लिखाई करने से कोई फायदा नहीं। और रूपये लेकर वो चला गया। कभी–कभी तो सोचती हूं मेमसाब, कहीं जाकर जान दे दूं। इस नरक से पीछा तो छूटे, रोज रोज की इस मारपीट से तंग आ गई हूं। कब तक आखिर हड्डी तुड़वाती रहूंगी। मर जाऊं तो अच्छा रहेगा। परन्तु मुन्नी का मुंह देखती हूं तो सोचती हूं कि उसका क्या होगा। मैं मर गई तो ये दूसरी औरत ले आयेगा और मजे करेगा।''

''अरी कमली! रोज–रोज इतनी मार खाती है तू, तो उसको छोड़ क्यों नहीं देती ?''

''मेमसाब! उसे छोड़कर आखिर जाऊं भी तो कहां, मायके में कोई नहीं है जो सहारा दे और जब दारू उतर जाती है तो मुझे प्यार भी तो करता है। आखिर मरद है मेरा, उसके साथ रहकर मैं सुरक्षित हूं। लोगों का डर तो नहीं रहता। नहीं तो आज के समय में जवान अकेली औरत को सभी भूखे भेड़िये की नजर से देखते हैं, मौका मिला नहीं कि झपट पड़ते हैं। और हम जैसी अनपढ़ औरतों का मरद के घर के सिवाय ठिकाना ही कहां है। जीना मरना सब उसी के साथ है। हां, मेमसाब आप तो पढ़ी लिखी हैं, नौकरी करती हैं, अगर ऐसा मौका आया तो कुछ भी कर सकती हैं। इसलिए तो सोचती हूं, मुन्नी को खूब पढ़ाऊंगी, जैसी मेरी जिन्दगी है, मुझ जैसी उसकी हालत न हो।''

''.....''

''अरे मेमसाब! आपके माथे पर क्या हो गया है? ये चोट कैसी...?''

''कुछ नहीं कमली, रात में बाथरूम में पैर फिसल गया था, थोड़ी चोट आ गई।'' कहकर मैं बरामदे में आ गई।

कमली ने अपने मन का हाल तो रोकर सुना दिया किन्तु मैं कितनी विवश हूं। अपने मन का हाल किसी से कह भी नहीं सकती। लोगों की नजर में हम हाई सोसायटी के जो हैं। क्योंकि मैं एक अधिकारी की पत्नी हूं। मुझमें सोचने की क्षमता है, माथे की चोट से ज्यादा मन में चोट लगी है।

कल रात फिर पार्टी से ज्यादा पीकर आने के कारण ही तो मेरा आकाश से झगड़ा हुआ। और आकाश ने मुझे इतनी जोर से तमाचा मारा था कि संभलते–संभलते भी सर दीवार से टकरा गया, इसके बावजूद भी क्या मैं आकाश को छोड़कर जा सकती हूं ? नहीं ? जाऊंगी भी तो कहां ? क्योंकि मां पिताजी मुझे बड़ी सम्पन्न और खुशहाल समझते हैं। मेरी सच्चाई जानकर उन्हें दुख होगा और मैं नहीं चाहती कि मेरे कारण छोटी बहन की शादी में अड़चन आये। क्योंकि घर में बैठी विवाहित लड़की वैसे भी बोझ सी होती है।

मां–पिताजी है तब तक तो ठीक है, भैया–भाभी कब तक साथ देंगे। अगर अकेली कहीं रहूं तो कमली की बात सही है कि अकेली औरत को समाज चैन व इज्जत से जीने नहीं देगा। किस–किस को अपनी बेगुनाही का सबूत देती रहूंगी। जीना दुश्वार हो जायेगा।

आखिर क्या फर्क है कमली और मुझमें ? वो अनपढ़ गंवार है, मैं शिक्षित हूं। वो अपना दुःख बताकर मन हल्का कर लेती है मैं वो भी नहीं कर सकती क्योंकि मैं एक शिक्षित उच्च सोसायटी की सभ्य महिला हूं, जमाने की नजर में।

औरत जो सदियों से सह रही है और कह नहीं रही है, मन में बोझ लिए। यही मेरी नियती है। ''आखिर दुःखवा मैं कासे कहूं ?''

भूख

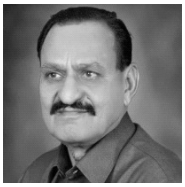

गोविंद शर्मा,
ग्रामोत्थान विद्यापीठ,
संगरिया–335063
ई मेल–
gosh1945@rediffmail.com
मो.– 09414482280

गांव के उस सरकारी स्कूल में माली के लेकर जमींदार तक के बच्चे पढ़ते थे। अध्यापक ने मौखिक परीक्षा लेते समय शर्त रखी कि–''जिस बच्चे का जवाब सबसे अच्छा होगा उसे पांच अंक बोनस के भी दूंगा। सब बच्चे बारी बारी से 'लगती' और 'मिटती' शब्दों को वाक्य में प्रयोग करके बताओ।''

अध्यापक को किसी का जवाब पसंद नहीं आ रहा था। हल्दू माली के बेटे को देने पड़े बोनस अंक, कांपते हाथों से । उसका जवाब था– ''मेरे पिता के मालिक जमींदार के घर के लोगों को कभी लगती है कभी नहीं, पर हमारे घर में यह कभी किसी की पूरी मिटती नहीं– भूख।''

रोटी

प्लेटफार्म पर वह मुझसे कुछ ही दूर बैठा था। हर आने जाने वाले से रोटी मांग रहा था। कह रहा था –''दो दिन से भूखा हूँ। खाने के लिए कुछ दे दो। एक बार मैंने सोचा, कुछ दे दूं, फिर यह सोचता रह गया कि नाटक कर रहा है । भला कोई दो दिन कैसे भूख रह सकता है ? मैं खुद एक वक्त भी भूखा नहीं रह सकता। अचानक हवा का एक झोंका आया। उड़ता हुआ एक अखबार उसके पास आ गया। उसने अखबार उठा लिया । अखबार का एक कोना फाड़ा, उसे मुंह में डाल कर चबाया, थूका, बाकी अखबार वहीं छोड़कर चला गया । मैंने सोचा अखबार के इस कोने पर जरुर किसी नेता, अभिनेता या सेठ की फोटो होगी। हवा के दूसरे झोंके ने वह अखबार मेरे पास पहुंचा दिया। यह तो वही अखबार था, जो मेरे पास भी है। मैंने अपना अखबार खोल कर देखा, उसने जो कोना चबाया, वहां एक बड़ी सी तस्वीर थी – रोटी की...।

आचरण

मैंने उसे गली में देखा, वह भिखारी तो नहीं लगा, पर उसके शरीर पर एक पाजामा ही था बाकी का उसका नंगा शरीर सर्दी से सिकुड़ रहा था। मैंने उसे रोका, उसके लिए भीतर से कमीज लेने गया। उसे देने लायक एक मेरी पहनी हुई, फुटपाथ से खरीदी हुई, जिस पर कुछ लिखा था, पुरानी टी शर्ट मिल गई। उसे दी तो उसने उसे अच्छी तरह से देखा और फिर वापस करते हुए बोला– ''सॉरी सर, मैं इसे पहन नहीं सकूंगा।''

मुझे गुस्सा आ गया टी शर्ट वापस लेते हुए मैंने व्यंग्य से कहा– ''तो जनाब को नई शर्ट चाहिए ?''

वह बोला–''नहीं साहब, आप मेरा पाजामा देखिये, कितना पुराना है, इसके साथ नई शर्ट की क्या जरूरत है। मना इसलिए कर रहा हूँ कि मैं शराब पीने पिलाने का विरोधी हूँ। इस पर लिखा है– बियर मुझे खुशी देती है। आप भी खुशी हासिल करें। मैं बियर का प्रचार बैनर नहीं बन सकता।''

''अरे! शराब का तो मैं भी विरोधी हूँ। मैंने इस पर कभी ध्यान नहीं दिया...।''

खौफ

तब उस जंगल में जानवर ही जानवर थे। थोड़े से ताकतवर थे, बाकी सब कमजोर। वही होता था कि ताकतवर कब कमजोर को चबा जायेगा, इसका पता नहीं चलता था इस वजह से वहां खौफ पसरा रहता।

उस जंगल में एक दिन एक आदमी आ गया। उसने कमजोरों को आश्वस्त किया कि– ''मैं ताकतवर शेर, बाघ, चीता को चबा जाऊंगा और तुम सब को बेखौफ कर दूंगा।''

एक खरगोश ने पूछ लिया– ''तुम इन्हें कैसे चबाओगे?''

आदमी ने उसी खरगोश को पकड़ा और सबके सामने उसे चबा डाला। फिर ''कैसे–क्यों'' के प्रश्न करने की किसी ने हिम्मत नहीं दिखाई। उस आदमी को लेकर सब जंगल में चले गये। आदमी ने ताकतवर जानवरों को चबा डाला या उन्हें छिपने को मजबूर कर दिया। बेचारे कमजोर जानवर, इसके लिये ताली भी नहीं बजा पाये थे कि समझ गये कि आदमी ज्यादा खतरनाक है। उस आदमी से ज्यादा ताकतवर आदमी भी वहां आ गये। सब एक दूसरे को अपनी ताकत दिखाने में लग गये। इस खेल में खौफ विस्तार पाता रहा और इतिहास रचता रहा, रच रहा है और रचता रहेगा।

बचपन

कु.शिखा यादव
नर्सिंग अनुशिक्षिका
बोधनी देवी नर्सिंग इंस्टीट्यूट
आकाश नगर, फ्रेजरपुर
जगदलपुर
मो.–8871877692

कचरा उठाती, मैले खुचैले कपड़े पहने उस ग्यारह–बारह वर्ष की लड़की से मैंने पूछा–''पढ़ाई करती हो?'' वह हंस दी। फिर मैंने पूछा–''कहां रहती हो?'' वह मौन रही। मैंने उसे अच्छे से देखा, उसने गोद में लगभग दो साल की लड़की को उठा रखा था। अब मैंने पूछा– ''ये बच्चे का बोझ क्यों उठा रखा है?'' उसने तपाक से कहा–''भाई है मेरा। बोझ थोड़े ही है।''अब मौन होने की बारी मेरी थी।

मीडिया के लोग

डॉ0 मोहम्मद साजिद ख़ान
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, जी.एफ़.(पी. जी.) कॉलेज, शाहजहाँपुर –242001 (उ0 प्र0)
मो.– **09450303696**
e-mail :
ksajid48@yahoo.com

मंत्री जी मंच पर पहुँच चुके थे । अच्छी–ख़ासी भीड़ भी इकट्ठा हो गई थी। पर वह किसी परेशानी में थे। उनकी बेचैन निगाहें जाने किन्हें ढूँढ रही थीं। वह बार–बार इधर–उधर देखते, फिर ठण्डी साँस लेकर कंधे ढीले छोड़ देते।

एक चेले ने कहा–''मंत्री जी, अब भाषण शुरू कीजिए। भीड़ इकट्ठा हो गई है। शहर के बुद्धिजीवी, गणमान्य लोग आ चुके हैं।''

''अबे चुपकर..!'' इससे पहले वह पूरी बात बोल पाता, मंत्री जी भौंहें सिकोड़ते हुए बोले–''गणमान्य लोगों का क्या अचार डालना है ? अभी अपने लोग कहाँ आए हैं !''

''ज..जी, अपने लोग ?''

''अरे! मीडिया के लोग!''

''वो तो सामने बैठे हैं।''

मंत्री जी ने धीरे से उसे समझाते हुए कहा–''ये सामने बैठे दोनों प्रेस–रिर्पोटर अपने नहीं हैं। यह कल की न्यूज़ में बस इतना ही तो देंगे कि मंत्री जी ने अमुक स्थान पर जनता को संबोधित किया ? पर अपने लोग अच्छी कवरेज देंगे। आख़िर उन प्रतिष्ठित पत्रों के प्रेस–रिपोर्टरों पर मैं कितना ख़र्च करता हूँ, क्या तुम्हें नहीं पता?''

इतना कहते–कहते मंत्री जी की बाछें खिल गईं, क्योंकि उनके लोग आ गए थे । वह फटाफट अपना भाषण देने के लिए माईक थामकर खड़े हो गए–''देवियों–सज्जनों, शहर के गणमान्य लोग, मीडिया से आए हमारे मेहमान...।''

नए संस्कार

चूँकि आज अलका के रिश्ते के सिलसिले में कुछ लोग आने वाले थे, इसलिए घर के सबसे बुजुर्ग दादी–दादा को आँगन के उस ओर वाले कमरे में फ़ालतू सामान की तरह छिपा दिया गया था ।

''अच्छा तो नहीं लग रहा, पर उन्हें किनारे वाले कमरे में शिफ़्ट करके आपने बहुत ही अच्छा किया।'' श्रीमती जी ने साड़ी का पल्लू सही करते हुए कहा–''पिताजी को भी बोलने की कुछ ज़्यादा ही आदत है। सभी को पुराने ज़माने के आदर्श बताने लगते हैं। आख़िर अलका के रिश्ते की बात है। कहीं कुछ उल्टा–सीध बोल गए तो!''

श्रीमान जी ने न चाहते हुए भी पत्नी की बातों का समर्थन करते हुए कहा–''इसीलिए तो मैंने सबकुछ पहले ही सेट कर दिया है। पिताजी को भनक तक नहीं लगेगी कि घर में कौन आया है। माता जी वैसे भी पीठ–दर्द से चल–फिर नहीं पातीं।''

थोड़ी ही देर बाद मेहमानों का काफ़िला आ धमका। औरत–मर्द–बच्चे मिलाकर कुल ग्यारह लोग। पर श्रीमान जी के ऊपर क्या फ़र्क़ पड़ने वाला था। रजिस्ट्री ऑफ़िस में नौकरी थी– कोई तंगहाली तो थी नहीं।

अभी बातचीत का सिलसिला चल ही रहा था कि अलका का छोटा भाई, जो आठवीं क्लास में था, किसी का पाकेट–पर्स लिए कमरे में आ गया।

श्रीमान जी की भौहें तन गईं–''कहाँ से लाया यह ?''

टिंकू ने सहजता से जवाब दिया–''वह सुबह जो अंकल आए थे न ? जब वह मुँह–हाथ धोने के लिए गए थे, तभी मैंने इसे उठा लिया था। मेरे ख़र्च भर के इसमें काफ़ी रूपए हैं।''

टिंकू की बात सुन श्रीमती जी ने मेहमानों की ओर उन्मुख होकर, बात को सँभालते हुए, सहजता से कहा–''देखा भाई साहब, हमारे घर के बच्चे कभी झूठ नहीं बोलते।'' उन्होंने सबका समर्थन लेने वाली दृष्टि चारों ओर दौड़ाते हुए कहा–''भाभी जी, अब आप ही बताइए कि अगर मेरा टिंकू झूठ बोल देता, या फिर यह पर्स कहीं छिपा लेता, तो क्या मैं जान पाती ?''

श्रीमती जी के तर्क से सभी चकित थे ।

लड़के की माँ ने तपाक से कहा–''वाह बहन जी, आपने तो अच्छे संस्कार दिए हैं बच्चों को।'' उन्होंने चहकते हुए कहा–''मेरा रवि भी झूठ–फ़रेब से दूर ही रहता है। ऑफ़िस में कोई भी आता है, उससे काम के पैसे पहले ही बता देता है । और फिर अपने वायदे से कभी मुकरता भी नहीं । जिससे पैसा ले लिया, समझो उसका काम हो गया !''

दोनों परिवारों के विचार मेल खा रहे थे, इसलिए रिश्ता तय हो गया था ।

दूर कोने के कमरे में बैठे दादा जी अलका को अब तक चौथी बार आवाज़ लगा चुके थे कि वह उन्हें बैठक में रखी मानस दे जाए ।

पुण्य लाभ

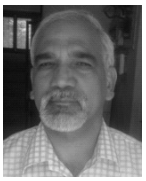

कृष्ण चन्द्र महादेविया
विकास कार्यालय पधर
मण्डी(हि.प्र.)–175012
मो.– 8679156455

प्रेमू राम ठाकर की अमीरी का रौब कार में आए तीनों समाज सेवियों पर पड़ गया था। यह सच था कि विदेश में धन कमाने के बाद प्रेमू राम ठाकर भारत में आकर एक कम्पनी से सेवा निवृत हो गया था। कुल मिलाकर उसे कोई नब्बे लाख रूपए मिल चुके थे। प्रति माह पेन्शन तो अलग। बच्चों की शादी–बादी करवाने के बाद अपनी विधवा मां से कई बार सत्यनारायण की कथा करवाकर हजारों लोगों को खाना भी खिला चुका था।

दान–पुण्य कमाना तो मानों उसका एक मात्र लक्ष्य था। शालीन और दम्भहीन होने को लेकर भी वह तीनों साथियों पर भारी पड़ गया था। तीनों में कमल चंद्र पाण्डे को पता नहीं क्यों प्रेमू राम ठाकर की कथनी और करनी में जमीन–आसमान का अंतर दिखता था, पर वह रहा चुप ही था।

वे चारों कोर्ट केस के सिलसिले में नरोत्तम दत्त कश्यप के घर आए थे। चाय पीने के बाद वे उसे लेकर लौट चले थे। बालकरूपी मंदिर के पास उन्होंने गाड़ी पार्क की थी। कमल चंद्र पाण्डे आदत के मुताबिक साथियों से कह कर मंदिर के वास्तु–शिल्प को देखने मंदिर में प्रवेश कर गया था। मंदिर देखने के बाद वह पीतल निर्मित नक्काशीदार नन्दी बैल को देखने लगा ही थे कि प्रेमू राम ठाकर भी पीछे आ लपका। मंदिर पुजारी से वार्ता के बाद कमलचंद्र पाण्डे ने कुछ राशि वहां दान पेटी में डाली ही थी कि पुजारी के जाने पर प्रेमू राम ठाकर निःसंकोच बोल पड़ा– ''पाण्डे जी, दस–बीस रूपए तो निकालो?''

''क्यों, क्या बात है ठाकर साहब !''

''मेरे पास चेंज नहीं है, मैं भी कुछ दान–पेटी में डाल देता हूं।'' निर्लज्ज हुए प्रेमू राम ठाकर ने कहा।

'ठनाक!' एक हथोड़ा सा जैसे कमलचंद्र पाण्डे के सिर पर पड़ा। एक क्षण को तो वह अवाक रह गया। फिर आश्चर्य को छुपाते दस रूपए चुपचाप प्रेमू राम ठाकर के फैले हाथ पर रख दिए। मुंह में कुछ जाप करते प्रेमू राम ठाकर ने दस रूपए दान–पेटी में डाल दिए और पुण्य लाभ कमा लिया था।

पुरोहितजी

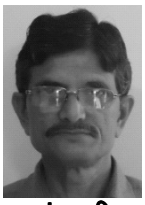

अंकुश्री
सिदरौल, प्रेस कॉलोनी,
पोस्ट बॉक्स 28,
नामकुम,
रांची–834 010
मो.–

वर्षा नहीं होने के कारण राज्य में अकाल पड़ गया था, लोगों में हाहाकार मचा हुआ था। इस समस्या के समाधान हेतु लोग पुरोहित जी के पास गये। उन्होंने परामर्श दिया, ''राजा यदि सोने के हल से खेत जोते तो वर्षा हो सकती है।''इसके लिये राजा को तैयार करना था।

अनेक परामर्श आये। तय हुआ कि खेत के निकट एक उत्सव का आयोजन किया जाये। उसके उद्घाटन और सभापतित्व के लिये राजा अवश्य आ जायेंगे। यह भी तय हुआ कि उद्घाटन के बाद राजा को एक भोज दे दिया जायेगा। भोज में राजा के साथ दूसरे लोग भी आयेंगे। जनता के प्रतिनिधि और पुरोहित जी जैसे कुछ लोगों को भी भोज में बुलाना था। अनुमान के आधार पर निश्चित हुआ कि खर्च की कमी से आयोजन नहीं हो पायेगा।

सोने का हल भी एक समस्या थी। अकाल से पीड़ित राज्य में सोना नहीं था। धन का भी अभाव था। बहुत मिन्नत करने पर पुरोहित जी ने कहा कि विधान में संशोधन हेतु उन्हें फिर से पतरा देखना होगा और गणना करनी होगी। उन्हें दुबारे दक्षिणा दिया गया। ''अभावे शाली चूर्णम्'' की उक्ति देते हुए पुरोहित जी ने कामचलाऊ उपाय खोज निकाला, ''अभाव में लकड़ी के हल पर सोना मढ़वा कर भी काम चलाया जा सकता है।'' उन्होंने आगे बताया–''पर इसके लिये शुद्धिकरण यज्ञ द्वारा हल को शुद्ध करना होगा।''

हल को मढ़ने के लिये सोने की आवश्यकता थी। राजा द्वारा खेत में हल उतारने से पूर्व पूजा–पाठ करना था और पुरोहित जी को दान–दक्षिणा भी देनी थी। आयोजन में खर्च ही खर्च नज़र आ रहा था। राज्य की हालत यह थी कि अकाल से पीड़ित गरीब जनता दाने–दाने के लिये तरस रही थी। बगल के राज्यों से अनाज आदि खरीद कर खाने में लोगों के रुपये–पैसे पहले ही खत्म हो चुके थे।

लोगों के पास लोटा–थाली जैसे दैनिक आवश्यकता के कुछ सामान बचे हुए थे। अकाल की बात ठहरी और पुरोहित जी का परामर्श। खेत में राजा से हल तो चलवाना ही था। लोग पड़ोसी राज्यों में जाकर अपना–अपना सामान बेच कर आयोजन सबंधी आवश्यक सामान एकत्रित करने लगे। आयोजन की तैयारी तो हो गयी, मगर घर–घर के सामान और रुपये–पैसे निकल गये।

आयोजन में राजा आये। उन्होंने खेत में हल भी चलाया।और आयोजन समाप्त हो गया।

राज्य के लोग हर साल दूसरे राज्यों में खेती–मजदूरी करने जाते थे। लेकिन उस साल लोगों को विश्वास था कि राजा द्वारा सोना मढ़े हल से खेत जोता गया है, इसलिये अच्छी बारिश होगी और अवश्य होगी। इसलिये लोग अपने राज्य में ही खेत जोत–कोड़ कर फसल लगाने की तैयारी करने लगे। बरसात का समय आ गया। लोग वर्षा की प्रतीक्षा करने लगे। वर्षा की प्रतीक्षा में दिन पर दिन गुजरने लगे। महीने भी बीत गये। फिर साल भी खत्म हो गया। पर वर्षा नहीं हुई।

एक तो अकाल! उस पर राजा द्वारा सोना मढ़े हल से खेत जोतने का मंहगा आयोजन। राज्य की जनता भूख से तड़प–तड़प कर मरने लगी। हाहाकार मच गया।

राज्य में जो कुछ लोग बच गये। वे पुरोहित जी से मिलने गये। गंभीर मुद्रा बना कर पुरोहित जी ने उन लोगों का शंका समाधान किया, ''..... राजा ने सोने के ठोस हल से खेत नहीं जोता है। लगता है, इसीलिये वर्षा नहीं हुई।'' उन्होंने आगे कहा–''यदि अब भी सोने के ठोस हल से राजा खेत जोतें तो काम बन सकता है।''

खेत जोतने के बाद सोना मढ़ा हल पुरोहित जी को ही मिला था। उनके शास्त्र में ऐसा ही विधान था।

मजबूत अर्थव्यवस्था

अखिल रायजादा
20/265 रामनगर,
सिम्स के पास
बिलासपुर,
छ.ग. 495001,

आजकल शक्कर राशन की सरकारी दुकान में आ नहीं पाती है, पता नहीं कहाँ चली जाती हैं। पिछली गर्मियों में जब गांव गया था तो गन्नें की जोरदार फसल से सारा गाँव खुश था, फिर भी हर बार की तरह शक्कर के दाम फिर बढ़ गये हैं। कल ही मैं छत्तीस रूपये किलो शक्कर लेकर आया हूँ।

श्रीमती जी सुबह की चाय के साथ अखबार लाते हुए बोलने लगी–**"**.....आपने कल जो शक्कर लायी है वो एकदम खराब है, बिलकुल पाउडर है, अच्छी दानेदार नहीं है।**"**

मैं बोल पड़ा –"अरे.....इस बार तो शक्कर और महँगी मिली है, मैंने सोचा दाम ज्यादा है तो अच्छी ही होगी। मैंने मॉल से तो लाई नहीं है कि दो चार टाइप की देखूँ, सेलेक्ट करूं, फिर लूँ.....। मैंने दुकानदार से कहा उसने पैक कर दी और मैं ले आया।**"**

".....ठीक है, ठीक है आज तो मैंने रोज से ज्यादा शक्कर डाली है तब कहीं जाकर चाय मीठी हुई है।**"** – श्रीमती जी ने कहा।

चाय की एक चुस्की ही ली थी कि श्रीमती जी फिर बोल पड़ी–**"**अरे आप क्या कह रहे थे कि शक्कर मँहगी हो गयी है, आपने कल किस रेट से लायी थी **?**"

अखबार लेकर मुझे दिखाते दिखाते कहने लगी–**"**ये देखिये जरा– क्या लिखा है–भारत से शक्कर बीस रूपये प्रति किलो की दर से निर्यात की जा रही है।**"**

मैं चौंका और मेरी चाय गिरते गिरते बची। सोचा कि क्यों सुबह सुबह बहस करूँ, पर फिर मन नहीं माना।

श्रीमती जी से अखबार लेकर पूरा पढ़ा। यार मैंने कल छत्तीस रूपये किलो शक्कर लायी है, और आज बीस रूपये निर्यात की खबर पढ़कर श्रीमती जी का पूछना बिलकुल जायज है।

अखबार की दूसरी खबर ने रही सही कमी पूरी कर दी – "भारतीय अर्थव्यवस्था की तारीफ में पूरा पेज भरा था। जहाँ एक ओर सारा विश्व आर्थिक मंदी के दौर से गुजर रहा है, वहीं हमारा जी डी पी बढ़ रहा है। मंत्रीपरिषद ने भी हम भारतीयों की क्रय शक्ति की तारीफ की है। हमारी क्रय करने की क्षमता में सतत वृद्वि हुई है।"

सचमुच हम खरीदने में शक्तिशाली है कितनी भी मँहगाई क्यों ना हो, हम भारतीय खरीदने में कोई कंजूसी नहीं करते हैं, चाहे हमें हमारी ही चीजें कितनी भी मंहगी बेचीं जाय।

श्रीमती जी फिर बोल रही थी– "आप तो रोज की तरह फिर अखबार में खो गये। आपकी चाय ठंडी हो रही है।"

.....मेरा चाय पीने का मन; फीकी–चाय, मीठी–ठंडी चाय और मजबूत भारतीय अर्थव्यवस्था के बीच अटका था।

रचनाकार कृपया ध्यान देंवे

पत्रिका त्रैमासिक है एवं अव्यवसायिक है अतः इसके प्रकाशन में विलम्ब हो ही जाता है। अतः आप अपनी रचनाएं एक वर्ष के बाद ही पुनः प्रेषित करें। आप सभी से निवेदन है कि बस्तर पाति के कार्यालय में रचनाओं का ढेर लग गया है अतः जनवरी के बाद ही अपनी रचनाएं प्रकाशन हेतु प्रेषित करें। हमारी मनसा है कि अधिक से अधिक रचनाकारों की रचनाओं का प्रकाशन किया जावे। अगले अंकों के लिए मात्र कहानी और आलेख प्रेषित करे। जिन्होंने अपनी फोटो एक बार भेज दी है कृपया दोबारा न भेजें, आपकी फोटो स्कैन करके सुरक्षित रख ली गई है। कोशिश करें कि रचनाएं ईमेल से टाइप करवा कर भेजें। ये बंधन नहीं है। अपनी प्रत्येक रचना में कम से कम अपना नाम जरूर लिखें क्योंकि रचनाएं आपस में मिल जाती हैं।

इष्ट पूजा

बेटा बड़े मनुहार के बाद आया इष्टपूजा के लिए। ''होता'' परिवार के ठीक सामने मेला भरता था। बेटा रिमोट कार में पहुंचा। लोगों ने उसका तामझाम देखा पर मेला तो गांव वालों के छतर, गुड़ी, पालकी के साथ चल पड़ा, पीछे रह गया ''होता'' का बेटा और उसकी रिमोट कार!

सुश्री उर्मिला आचार्य
पंच रास्ता चौक,
ब्राहमण पारा सुभाष
वार्ड, जगदलपुर
पिन–494001 छ.ग.
मो.– 9575665624

सांप–सीढ़ी

'मनु' पढ़ाई में होशियार था। छोटी–मोटी नौकरी पाकर शहर में बस गया। अब जो देखो गांव के लोग पढ़ने, इंटरव्यू देने, इलाज कराने आने–जाने लगे। परिवार की सेवा–सुविधा पाकर उनमें से कुछ बड़े ओहदे तक पहुंच गये।

अब किसी दिन जमीन के काम पर 'मनु' सचिवालय पहुंचा तो उन्हीं ओहदेदारों ने उसे पहचाना तक नहीं। मनु ने तो कह दिया सीढ़ी बनकर चढ़े और सांप बनकर डस रहे हो।

भागीरथ प्रयास

सौन्दर्य गर्विता इंद्रावती का हरण जोरा नाला ने कर लिया, बचा–खुचा पानी पॉलीथीन ने हर लिया। इसे देखकर पुराणवाचक के पुत्र ने पूछा–''मां! क्या पॉलीथीन अगतस्य मुनि की तरह हैं जिन्होंने गंगा के प्रवाह को लील लिया था ?''

''हां बेटा! नदियों को बचाने के लिए भागीरथ प्रयास जरूरी है।'' मां का उत्तर था।

भ्रूण परीक्षण

एक दिन हौले से कोई मन का तार तोड़ गया। चेतन अवचेतन झंकृत हो उठा। तन–मन महका प्रेम से। चांद–तारे तोड़ने का वादा रहा। सर्वस्व समर्पण सर्वदा रहा। एक रात तारों की झिलमिल हुई। एक सुबह सूरज ने धूप चटकाई। अमिया खाने को जी मचला। कानों में किसी ने खटास घोला– चलो भ्रूण परीक्षण करा लें!

भ्रष्टाचार उन्मूलन

भ्रष्टाचार उन्मूलन विचार गोष्ठी में भाग लेकर बड़े साहब दफ्तर पहुंचे। सारे कर्मचारियों को समझाईश दी कि कोई भ्रष्टाचार नहीं करेगा। भ्रष्टाचार से देश खोखला हो जाता है। इतने में फोन की घंटी बजी। साहब के पी.ए. ने डरते–डरते कहा–मेमसाब का फोन है। चपरासी को सब्जी बाजार जाने बुला रही हैं। साहब ने सहज ही कहा–भेज दो इसमें पूछने की क्या बात है।

देसी गुलाब

वह सुबह गुलाब के बगीचे में टहल रहा था। बडिंग वाले गुलाब में प्यारा सा नया फुल खिला हुआ था। पास ही एक देसी गुलाब के पौधे में भी गुलाबी रंग के फुल खिले हुए थे। वह बारी–बारी से दोनों फूलों को देखने लगा, तुलना करने लगा। तभी उसकी पत्नी बगीचे में पहुँची, और उसके हाथों में चाय का कप थमा गई।

डॉ. सुरेश तिवारी
मेन रोड, तोकापाल
जिला–बस्तर
छ.ग.
मो.–9425596784

वह भीतर बच्चों को सम्हालने में लगी हुई थी। वह सोचने लगा, जब उसकी शादी हुई थी सरिता घर आई थी तो कितनी खूबसूरत थी सारा समय उसके साथ बिताती थी। अब तो वह बच्चों में ही उलझ कर रह गई है। ऑफिस की सेक्रेटरी रोजी उसका कितना खयाल रखती है। खूबसूरत भी कितनी है– इस बडिंग वाले गुलाब की तरह। और उसकी पत्नी ठीक इस देसी गुलाब जैसी। एकाएक उसने पौधे पर लगे देसी गुलाब को मसल डाला। पंखुड़ियों के रंग से उसकी उंगलियां गुलाबी हो गईं। उसके हाथ महक उठे। उसने बडिंग वाले गुलाब की ओर हाथ बढ़ाया। जैसे ही गुलाब को छूना चाहा उसकी उंगली में कॉटा चुभ गया। उसने हाथ खींच लिया। उसकी उंगली से खून टपक रहा था।

पसंद

बंगले के लॉन में अफसर अपने पाँच पालतू कुत्तों को बिस्किट खिला रहा था। कुत्ते उछल कर उसकी हाथों से बिस्किट लपक लेते। तभी अफसर ने ध्यान से देखा तो पाया कि चार कुत्ते बिस्किट खाते समय अपनी दुम हिलाते रहते लेकिन एक कुत्ता बिना दुम हिलाए बिस्किट खाने में मस्त रहता। अफसर को यह बात नागवार गुजरी। उसने तुरंत उस कुत्ते को जंजीर से बांधा और ड्राइवर से गाड़ी लेकर उस कुत्ते को शहर से दूर कहीं छोड़ आने को कहा। और वह बाकी चार कुत्तों के सामने बिस्किट डालने लगा।

दूसरे दिन सुबह ऑफिस गया। उसके कुर्सी पर बैठते ही एक–एक कर उसके मातहत आने लगे, उसे सलाम कर अपनी कुर्सियों पर बैठ आपस में बताने लगे कि साहब ने उसके घर का हालचाल पूछा, उससे बातें की। उस पर साहब की कृपादृष्टि है। अफसर ने देखा कि पांडेय जी आने के बाद से ही अपनी फाइलों में उलझे हुए हैं, एक सप्ताह के बाद पांडेय जी की टेबल पर उसका ट्रांसफर आर्डर पड़ा हुआ था।

1–काश

चार बूढ़े मनुष्य खेत में घास चर रहे थे। दो जानवर आपस मैं बात कर रहे थे।

पहलाः चारों अब दूध नहीं देते और अब बयाने की भी कोई संभावना नहीं।

दूसराः उसको बेच दे कुछ तो मिल जायेगा।

क्षत्रसाल साहू
द्वारा–श्री समीर कुमार
एमएस–16/10 बंगाल अंबुजा, उर्वशी द्वितीय फेस, सिटी सेन्टर
दुर्गापुर जिला–वर्धमान, प.बंगाल, पिन–713216
मो.–7407304888

2–दो बूंद

कटनी रेलवे स्टेशन पर सुबह 9 बजे कामायनी एक्सप्रेस रूकी। जनरल बोगी में धड़ाधड़ 4–5 सफेदपोश लोग घुसे। एक फटा चिथड़ा पहने औरत की गोद में 2–3 साल के बच्चे को बल पूर्वक सबने दो बूंद पिलाई। फोटोग्राफर जो कि पूरी तरह तैयारी के साथ था, ने फोटो खीचीं और सभी आंधी की तरह उतर गये।

औरत ने मुझसे कहा–भैया दो रू दे दो बिस्कुट लूँगी। बच्चे ने कल से कुछ नहीं खाया। मैंने बीस रू दिये और उतर गया।

दूसरे दिन समाचार पत्र में फोटो और लेख देख कर दंग रह गया..।

3–अदालत

मैंः साब आज फैसला करा दीजिए। यहां आते आते थक गया हूँ।

वकीलः फैसला तो हो गया है। उच्च न्यायालय में अपील करनी पड़ेगी। फीस का इंतजाम करो, हाँ और कल आना।

4–भूणहत्या

लड़कीः आप कुछ लीजिए।
मैंः धन्यवाद।
लड़कीः आप कहां तक पढ़े हैं ?
लड़काः जी..... बी. काम.।
लड़कीः कितने प्रतिशत ?
लड़काः पैंसठ प्रतिशत
लड़कीः बारहवीं में ?
लड़काः जी पचपन प्रतिशत।
लड़कीः क्या करते हो ?
लड़काः जी...एक प्राइवेट कम्पनी मे क्लर्क हूँ।
लड़कीः जी धन्यवाद। हम 1–2 दिन में जवाब दे देंगे।
मैंः बिटिया जल्दी जवाब देना, बेटे की उम्र हो रही है।

5–जज साहब

पत्नी(पति का कोट लेते हुए)ः आज बहुत थके लग रहे हो। क्या बात है ?

जज साहबः सबूत के आभाव में वो छूट गया।

6–पाजीटिव

मैंः डॉक्टर! ये मेरी रिपोर्ट है।
डॉक्टरः (ध्यान से देखते हुए) ह..म..म..म..
मेरे माथे से पसीना टपक रहा था।
मैंः सब ठीक तो है।
डॉक्टरः पाजिटीव है।

7–रिक्शा

मैंः बड़ी स्टेशन चलो।
रिक्शा वालाः बाबूजी 15 रू होंगे।
मैंः लूट मचा रखी है। 5 रू दूंगा।
रिक्शा वालाः बाबूजी धूप है। 10 रू लगेंगे।
मैंः काला चश्मा लगा कर चलो।

उच्च शिक्षित

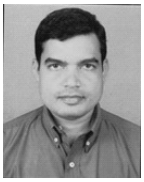

भरत गंगादित्य
द्वारा–श्री बलबीरसिंह कच्छ
आकाशवाणी केन्द्र
जगदलपुर–494001
मो.–9479156705

''पिताजी! लीजिए दूध।''

उसने चौक कर देखा, उसका लड़का दूध लेकर सामने खड़ा था। बुढ़ापे में अब शरीर में पहले जैसी ताकत नहीं रही। उसने कांपते हाथों से दूध लिया। फिर तबीयत का हालचाल पूछकर बेटा चला गया। वह सोचने लगा कि ये यही बेटा है जिसे मंदबुद्धि समझकर उसने बचपन में न जाने कितने ताने मारे थे। और बड़े बेटे के अच्छे दिमाग के चलते उसे शाबासी दिया था।

आज बड़ा बेटा अपनी पत्नी और बच्चों के साथ महानगर में बड़ी नौकरी पाकर अपनी जिन्दगी बसर कर रहा है। आज उसे अपने पिता की सुध ही नहीं है। और छोटा बेटा जो केवल इंटर तक ले देकर पढ़ाई करके घर की डेयरी को संभाल रहा है। पूरे घर का खर्च चला रहा है। पत्नी के देहांत के बाद भी उसे बच्चों के कारण कमी नहीं खल रही।

''दादाजी! अस्पताल जाना है, पापा ने तैयार होने को कहा है।'' पोते ने दस्तक दी। मन में संतुष्टि भरे ढेर सारे आशीष उड़ेलता हुआ वह तैयार होने लगा।

ट्रक ड्राइवर

कृष्णधर शर्मा
द्वारा–श्री राजेन्द्र देवांगन
पी. डबल्यू. डी पारा
अवस्थी कालोनी के
सामने
गीदम, जिला–दंतेवाड़ा
पिन–494441छ.ग
मो.–9479265757

जब फैक्ट्री से उसका ट्रक माल भरकर बाहर निकला तो खुशी उसके चेहरे पर साफ–साफ झलक रही थी। इसका कारण भी साफ था कि उसका नंबर लग जाने से ट्रक आज ही लोड हो गया जिसका फायदा यह हुआ कि होली का त्यौहार मनाने वह अपने घर पहुंच सकता था। वह था तो ट्रक ड्राइवर मगर स्वभाव से काफी सात्विक था यानी कि ड्राइवरों की आम बुराई जैसे कि नशाखोरी वगैरह से काफी दूर था और गाड़ी भी बहुत संभाल कर चलाता था।

वह फैक्ट्री से अपना ट्रक लेकर निकला। आगे एक भीड़–भाड़ वाले इलाके से वह गुजर रहा था कि पीछे से एक मोटरसाइकिल सवार आ रहा था जो कि जगह काफी कम होने के बाद भी आगे निकलना चाहता था मगर अनियंत्रित हो जाने के कारण वह गिर पड़ा जिससे उसे कुछ चोट लग गई। इसमें हालांकि ट्रक ड्राइवर की कोई गलती नहीं थी मगर मोटरसाइकिल सवार के चीखने–चिल्लाने से भीड़ ने ट्रक को घेर लिया। उसमें से कुछ लोग चिल्लाने लगे कि मारो साले को, ये ट्रक ड्राइवर ऐसे ही होते हैं साले शराब पीकर गाड़ी चलाते हैं और ट्रक ड्राइवर के बहुत सफाई देने के बाद भी भीड़ ने उसे ट्रक के बाहर खींच लिया और मार–मार कर अधमरा कर दिया। ट्रक ड्राइवर अब होली मनाने घर पहुंचने के बजाय हॉस्पिटल पहुंच गया।

बासी खाने का पुण्य

कल खन्ना जी के यहां शानदार पार्टी थी, जिसमें शहर के जाने–माने लोग शामिल हुए। पार्टी में देशी–विदेशी व्यंजनों की भरमार थी जिसका पार्टी में आये हुए मेहमानों ने जमकर आनंद उठाया। पार्टी के दूसरे दिन सुबह नौकर ने आकर मिसेज खन्ना से पूछा – 'मैडम कल की पार्टी का बहुत सारा खाना बचा हुआ है, उसका क्या करें? वहीं पर खन्नाजी भी खड़े थे।

वह नौकर से बोले – 'अरे कल का बासी खाना किस काम का ! अब तक तो पूरी तरह खराब हो चुका होगा, उसे नगर निगम के कूड़ादान में डलवा दो।' तभी मिसेज खन्ना ने टोकते हुये कहा – 'रुको मेरे दिमाग में एक आइडिया आया है, खाना अभी पूरी तरह से खराब नहीं हुआ होगा। ऐसा करते हैं, पास में ही एक मंदिर है जहां पर भिखारियों की भारी भीड़ लगती है। वहीं पर ले जाकर सारा खाना हमारे नाम से बंटवा देते हैं। इस तरह से खाना भी बर्बाद नहीं होगा और हमारा नाम भी हो जायेगा। एक बात और है कि भिखारियों को खिलाने से हमें पुण्य भी मिलेगा। है ना कमाल का आइडिया मेरा! यह सुनकर खन्नाजी और नौकर भी मिसेज खन्ना की बुद्धिमता पर चकित रह गये कि मिसेज खन्ना ने कैसे एक तीर से कई निशाने लगा लिये थे!

नेताजी का भाषण

नेताजी एक सभा को संबोधित कर रहे थे। उनके भाषण का विषय था– भ्रष्टाचार, बढ़ती रिश्वतखोरी, अनैतिकता आदि। उनका कहना था कि मैं इन सब बुराइयों को अपने समाज से जड़ से मिटाने के लिये कृतसंकल्प हूँ और इस काम के लिये मुझे अपनी जान की बाजी भी लगानी पड़ी तो मैं पीछे नहीं हटूंगा और मेरा एक निवेदन है आप लोगों से कि मैंने जो विदेशी हटाओ स्वदेशी लाओ आंदोलन चलाया है उसमें आप लोग भी मेरा सहयोग करें। विदेशी वस्तुओं को पराई स्त्री जैसी समझें और उनकी तरफ आंख उठा कर भी ना देखें व अधिक से अधिक स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करें।

गर्मी का मौसम था नेताजी पसीने से तर–बतर हो रहे थे और प्यास से उनका गला भी सूख रहा था अतः उन्होंने अंत में सब का आभार व्यक्त करते हुए (अपनी सभा को सफल बनाने के लिये) माइक अपने जूनियर नेताजी को पकड़ा दिया और वहां से निकलकर सीधे अपनी वातानुकूलित वैन में पहुंचे जो सर्व सुविधा युक्त थी सबसे पहले उन्होंने विदेशी ब्राण्ड का ठंडा कोल्ड्रिंक पीकर अपना गला तर किया और वैन में उपलब्ध अन्य सुविधाओं का आनंद लेते हुए वह एक पांच सितारा होटल पहुंचे जहां पर कुछ बिज़नेसमैन पहले से ही उनका इंतज़ार कर रहे थे, नेताजी ने उनसे किसी फैक्ट्री के लाइसेंस वगैरह के बारे में बात की और उन्हें आश्वस्त किया कि उनका काम हो जायेगा फिर उनके द्वारा दिये हुये दोनों सूटकेस चेक किये। इसके बाद सबने मिलकर विदेशी ब्रांड की शराब के साथ पार्टी की और जब नशे ने कुछ असर दिखाना शुरू किया तो नेताजी ने उन्हें कुछ याद दिलाया तब वह व्यक्ति बाहर गये और कुछ देर में उन्होंने किसी को कमरे में अंदर धकेला और दरवाजा बाहर से बंद कर दिया। अंदर नेताजी अपने भाषण में बताये गये नैतिक आदर्शों की धज्जियां उड़ाने में व्यस्त हो गये।

सीढ़ियां

प्रवेश सोनी
10–जे–1 पारिजात कॉलोनी
महावीर नगर थर्ड
कोटा राजस्थान
पिन–324009
मो.–9782045060

गाँव की कच्ची सड़क पर आज एक के बाद एक महंगी गाड़ियाँ दौड़ी चली आ रही थीं। इन गाड़ियों की मंजिल सूरज का कच्ची खपरैल से आधा खण्डहर में तब्दील घर था। गाँव में आज उत्सुकता का माहौल बना हुआ था। बूढ़े, बच्चे और जवान सभी की आँखों में रोमांच भर दिया था इन गाड़ियों की आवक ने। सभी जानने को उत्सुक थे कि आज ये महंगी गाड़ियाँ सूरज के घर क्यों आई है ?

सूरज अपने किसान माता –पिता की इकलौती संतान है। 'यथा नाम तथा गुण' वाली कहावत सूरज पर शत प्रतिशत लागू होती थी। गज़ब का तेज़ था बचपन से ही इस बालक में। गाँव के प्राइमरी और उसके बाद हाई स्कूल से दसवीं क्लास प्रथम श्रेणी में पास की थी सूरज ने। माता–पिता भी अपने बच्चे के उज्जवल भविष्य के लिए जी तोड़ मेहनत करते थे। उनके श्रम की थकान सूरज की बातें सुन कर पल भर में उतर जाती थी। खेत से लौटते पिता के हाथ से कुदाल और घास का गठ्ठर लेते हुए कहता था की ''बापू मैं इंजीनियर बन कर खेत में नई मशीनों से काम करूँगा तब आपको बिलकुल मेहनत नहीं करने दूंगा, गाँव की खेती के लिए नए संसाधन होंगे तो गाँव की तस्वीर बदल जायेगी।''

किसान पिता बलिहारी नज़रों से अपने बेटे को निहारते रहते। लेकिन उन्हें यह चिंता भी बाढ़ चढ़ी नदी की तरह डरा रही थी की बेटे को इंजीनियर कैसे बना पायेंगे। रोज सात कोस चलकर भी ढाई कोस की ही दूरी तय कर पाती थी उनके जीवन में मां लक्ष्मी की यात्रा। गरीब की गरीबी इतनी वफादार होती है की स्वप्न में भी उसका साथ नहीं छोड़ती।

सूरज के माता–पिता अपने तन को आधा अधूरा ढंक लेते, अपना आधा पेट पानी पीकर भर लेते लेकिन सूरज की शिक्षा में कोई रुकावट नहीं आने देते। लेकिन दसवीं के बाद की पढ़ाई कैसे हो यह चिंता उन्हें रातों को सोने नहीं देती और दिन में चैन नहीं लेने देती। शहर की कोचिंग के बारे में उन्होंने सुन रखा था। वो चाहते भी थे कि सूरज अच्छी कोचिंग लेकर पढ़ाई करे लेकिन सोचने और उसे पूरा करने के बीच अभावों के साथ कठिनाइयों की खाई होती है जिसे पार करना आसान नहीं था। सूरज के पिता के पास जमीन का एक छोटा सा टुकड़ा था जो कभी प्रकृति की मार, कभी सूखा तो कभी अतिवृष्टि सह कर तीनों प्राणियों के जीवन की गुजर बसर कर रहा था। अब पढ़ाई के लिए कोचिंग की मोटी फीस कहां से आ सकती थी। एक बारगी तो सूरज ने आगे की पढ़ाई निरस्त करने का सोच लिया और पिता से कहा की वो आपकी खेती में मदद करेगा। लेकिन सूरज के पिता अपने बच्चे के सपने और उसकी योग्यता से भलीभांती परिचित थे। अतः उन्होंने जमीन रहन रखकर साहूकार से कर्ज उठा लिया। और आँख में आशा का सूरज लेकर शहर की राह ली। बड़ी बड़ी इमारतों के बीच गांव के किसान पिता खुद को बौना महसूस कर रहे थे। मगर सूरज के सपनों की ऊंचाई उन्हें कोचिंग सेंटर के विशाल भवन में प्रवेश कराने में सफल हो गई। मगर जब फीस की बात शुरू हुई तो उन्हें अपने पास की रकम सुदामा के द्वारा श्री कृष्ण के घर ले जाये गए चावल की पोटली समान लगी, जिसे वो बार–बार अपनी धोती की अंटी में कस रहे थे। उन्हें लग रहा था की सिर्फ पढ़ाई की बात करने मात्र में ही उनके मुठ्ठी भर पैसे हवा हो जायेंगे। दो वर्ष तक यहाँ रहकर पढ़ाई करने का स्वप्न तो पिता पुत्र की आँखों से दूर खड़ा उन्हें चिढ़ा रहा था।

निजी कोचिंग सेंटर में छात्रवृति की आशा भी निर्मूल थी। चारों ओर निराशा मुँह बाये खड़ी थी। सूरज ने अपनी बुद्धिमानी और आत्मविश्वास से काम लिया। और कुछ पैसे देकर वहां पढ़ने वाले बच्चों से, जिनका सलेक्शन हो गया था, उनसे उनके टेस्ट पेपर और नोट्स लेकर गांव की राह पकड़ ली। पिता के मन को यह हीनता कचोट रही थी कि वो अपने बच्चे को उच्च शिक्षा नहीं दिला पाए। वहीं सूरज के कदम दुगने आत्मविश्वास से भरे थे। उसने अपनी समझदारी और लगन से एक राह और तलाश ली। गाँव में पिछले 2 साल से टेलीफोन के साथ इंटरनेट की सुविधा भी शुरू हो गई थी, जिसके चलते वहां एक साइबर कैफे टाइप दुकान खुल गई, जिसे उनके पड़ोस के गिरधारी काका का ग्रैजुएट बेरोजगार साला चलाता था। सूरज ने इंटरनेट की मदद से दूरस्थ टेस्ट सीरिज में आवेदन किया और मासिक टेस्ट देता गया जिसके द्वारा उसे अपनी परीक्षा तैयारी के आंकलन में मदद मिली।

आज एंट्रेंस एग्जाम का रिजल्ट घोषित हुआ था। और जिसने प्रथम श्रेणी में स्थान प्राप्त किया था वो क्रमांक किसी कोचिंग संस्था के बच्चे का नहीं था वह क्रमांक था गाँव के मेहनती, आत्मविश्वासी और कड़ी लगन से पढ़ने वाले सूरज का।

संस्थाओ को सूरज का पता लगाने में देर नहीं लगी और टेस्ट सीरिज के आवेदन के आधार पर सूरज पर अपनी संस्था का विद्यार्थी होने का दावा करने लगे।

वो आज इसी सूरज की लगन और मेहनत को खरीदने आये थे ताकि शहर के बाज़ार में अपनी संस्था के नाम को सूरज के नाम से चमका सके।

होली मुबारक

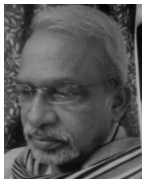

के.पी.सक्सेना 'दूसरे'
शांति नगर, टाटीबंध
रायपुर–492099
मो.–09584025175

"अजी, होली की मुबारकबाद तो ले लो... उठो ना!" कहते हुए उसने धीरे से अपनी एक टांग उसकी ओर अड़ाई।

"क्या है.... सुबह सुबह!" अगले ने एक जम्हाई लेकर अलसाई आँखों से पूरब की ओर देखते हुए कहा–"अभी कहाँ चार बजे होंगे!"

"हाँ–हाँ, तभी तो कह रही हूं....होली की मुबारकबाद तो ले लो!'' अगर चार बज गए तो, फिर तुम कहाँ रुकने वाले, बाँग देने से!" उसने झिड़का।

"अरे हाँ! आज तो मालिक भी जल्दी उठेगा। थोड़ी ही देर में ग्राहक आने शुरू हो जाएंगे।" इतना कहते– कहते जाने क्यों, वह अचानक उदास हो गया।

लेकिन उसकी उदासी का कारण वह समझ चुकी थी। उसे जरूर छोटू की याद आ गई होगी.....पिछली होली की ही तो बात है। हालांकि उस रोज ग्राहक को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए उसके सामने वो दोनों भी बहुत उछले–कूदे थे किंतु ग्राहक की नजर में तो बस, छोटू चढ़ चुका था।

एक गहरी सांस लेकर उसने जवाब में 'होली मुबारक' दोहराना चाहा किंतु आवाज गले में फंस गई और मुंह से बस, धीमा सा कुंकडूं...कूं, ही निकल पाया।

"पता नहीं आज किसका नंबर है!" वह बड़बड़ाया।

"अरे, शुभ–शुभ बोलो। जाना तो है ही, ये मनाओ कि कोई अच्छा ग्राहक आए और हम दोनों को साथ ले जाए।" मैंने लोगों को यह कहते खूब सुना है कि साथ जीना तो फिर भी आसान है, बड़े किस्मत वालों के ही नसीब में साथ मरना बदा होता है।"

उसकी बात सुनकर अब वह भी बड़े उत्साह से सड़क पर आते–जाते लोगों को परखने में लग गया।

सुबह का भूखा : दो बिम्ब

मनजीत शर्मा 'मीरा'
1192–बी, सेक्टर
41–बी, चंडीगढ़
फोन–09914882239

सोनू–''मां रोटी दे...बहुत भूख लगी है।''

मां–''नासपीटे, तुझे सुबह–सुबह ही भूख लग गई। ले बोरी पकड़ और कचरे से कागज बीन ला।''

सोनू–''मां दोपहर हो गई है। भूख के मारे दम निकला जा रहा है।''

मां–''तेरे पेट में बहुत आग लगी है रोटी खाने की तो जा सामने नल से पानी पीकर बुझा ले अपनी आग। तेरा बाप कुछ कमा कर लायेगा तभी तो जलेगा चूल्हा।''

सोनू–''मां, अब तो शाम हो गई। बापू अभी तक नहीं आया। सुबह से मैंने कुछ भी नहीं खाया।''

मां–''दो घण्टे और रूक जायेगा तो मर नहीं जायेगा। बैठा होगा तेरा बापू किसी शराब के ठेके पर। जब तक सारी कमाई उड़ा नहीं लेगा, घर नहीं पलटेगा। रोज रोटी खाकर ही तो सोता है तू...।''

सोनू–''मां, सब लोग तो तीन वक्त रोटी खाते हैं और हम एक वक्त....दिन भर भूखा रहता हूं मैं।''

मां–''औरों की छोड़। हम गरीबों को तो अगर एक वक्त भी रोटी नसीब हो जाये तो उसे भूखा रहना नहीं कहते।''

––––––––––––––

मम्मी–''ऐनी खाना खा ले...।''

ऐनी–''नहीं मम्मी....।''

मम्मी–''बेटा, तूने सुबह से कुछ भी नहीं खाया। ले थोड़ा दूध पी ले...फल खा ले। दोपहर होने को आ गई...।''

ऐनी–''मम्मी तंग मत करो....पढ़ने दो। शाम को खा लूंगा।''

मम्मी–''ऐनी, तूने सुबह से कुछ नहीं खाया। तेरे डैडी ने ऑफिस से तेरे लिए पिज्जा आर्डर किया था। ले, एक पीस अपना मनपसंद पिज्जा ही खा ले। मुझे पता है कि तू भूखा होगा।''

ऐनी–''मम्मी, सुबह का भूखा अगर शाम हो खाना खा ले तो उसे भूखा नहीं कहते।''

भूख का सच

वीनु जमुआर,
15,वृन्दावन
मुकुन्द नगर,
पुणे 411037
मो.——8390540808

सोलह सीढ़ियाँ चढ़ वृद्धा ने बहु को आवाज लगाई–'बेटा क्या तुम खाना खा चुकी हो ?' टीवी की तेज आवाज के संग ही बहु की भी आवाज आई 'नहीं, अभी थोड़ी देर में आती हूँ। उन्होंने पुनः पूछा–'क्या खाओगी, क्या मैं कुछ बना दूँ ?' उत्तर मिला, ''नहीं, देखती हूँ मैं भी फ्रिज से कुछ निकाल कर खा लूँगी।'

नीचे आकर अपने कमरे में प्रतीक्षारत बैठी वे द्वार की घन्टी सुन दरवाजा खोलने गई। पुत्र एवम पौत्र जो होटल खाना खाने गये थे, अन्दर आये। पौत्र के हाथ में एक पारदर्शी थैली थी और उसमे से झांकते दो डिब्बे। थैली को छुपाने की कोशिश करता हुआ जल्दी–जल्दी सीढ़ियाँ चढ़ पौत्र सीधे ऊपर कमरे में चला गया। दादी अपने कमरे में जा टीवी देखने बैठ गई, बहु के नीचे आने के इन्तजार में....काफी देर के बाद बहु नीचे आकर बोली–'आप खाना खा लें, मुझे भूख नहीं है, खाने की बिल्कुल इच्छा नहीं है मेरी..।

फ्रिज से बासी रोटी सब्जी निकाल वृद्धा खाने बैठ गई..।

स्वयंसिद्धा

बंगले का निर्माण–कार्य चल रहा था। मजदूर काम में व्यस्त थे। "जाऊँ जाकर देख आऊँ" सोच कर आई थी। अचानक जोरों से झगड़े की आवाज़ आने लगी..

पुरुष स्वर–'बच्ची को बालवाड़ी में भेजती ही क्यों हो, नाहक पैसे का खर्च, ऊपर से रोज लाने–ले जाने की परेशानी। मैं तो कहता हूँ, कान्ट्रेक्टर साहब कह रहे थे, उनके घर बर्तन–बासन कर लेगी तो वे उसे खाना और कपड़ा–लत्ता दे देंगे। ऊपर से अगर मालिक के हाथ–पाँव सहला दिया करेगी तो हमें भी फायदा हो जावेगा, मेरी मान–उसे काम पे लगा...।'

शेरनी सी दहाड़ती आवाज में स्त्री अपनी पीठ पर गमछे से बंधी बच्ची को दिखा कह उठती है–'बेटे की चाह में यह दूसरी बेटी मेरी पीठ पर टंगी है', पेट की ओर ईंगित कर कहती है, 'इस बार अगर यह तीसरी भी बेटी हो गई तो क्या करेगा?'

क्रोध से बेकाबू हुआ मजदूर पास पड़ी कुल्हाड़ी उठा, मार दूँगा कहता हुआ उस पर झपट पड़ता है। मुझे पास खड़ा देख दौड़ती हुई स्त्री मेरे पास आ जाती है।

'मेम साहब यह हम सबों को मार देगा। मैं जीना चाहती हूँ, अपनी बच्चियों को पढ़ाना चाहती हूँ, इन्हें एक साफ–सुथरी जिन्दगी देना चाहती हूँ। मेरी मदद करें, मुझे कहीं काम दिलवा दें। खूब परिश्रम एवं ईमानदारी से काम करूँगी....आपको शिकायत का मौका नहीं दूँगी...।' मुझे अपनी ओर ध्यान से देखते हुए पाकर, बड़े ही दृढ स्वर में बोल उठी–'आप मुझ पर भरोसा कर सकती हैं।' न जाने उन याचनापूर्ण आँखों में कैसा तेज था, कैसा विश्वास था, कैसी मातृत्व की कर्तव्यपरायणता थी कि मैं विवश हो उठी, उसकी मदद करने को।

मैंने पूछा–'क्या वह बड़े–बुजुर्गों की सेवा कर पायेगी और क्या उसका पति उसे काम करने देगा?' प्रत्युत्तर में उसने जो कहा वह बेहद दर्द भरी कहानी है....'मैं एक अच्छे घर की लड़की हूँ। बम्बई शहर की चकाचौंध देखने गाँव से शिवा के संग भाग आई थी, आज अपनी गलती पर पछता रही हूँ। शिवा मेरा पति नहीं है, इसने मुझसे ब्याह नहीं किया पर माँ अवश्य बना दिया। स्वयं ही नहीं, दारू के नशे में धुत अपने साथियों से भी मेरा यौन–शोषण करवाता रहा। गाँव जाकर मेरी बदनामी और जान से मार डालने की धमकी देकर, वह आज तक मुझे बेबस करता रहा। मैं बच्चों की खातिर जीती रही....पर अब और नहीं...कहीं दूर जाकर नए जीवन की शुरुआत करना चाहती हूँ...।'

सन्तान के प्रति मोह, उत्तरदायित्व–बोध और दृढ़ निश्चय से दप–दप करता हुआ चेहरा लिए "स्वयंसिद्धा" बनने को प्रस्तुत इस महिला को कार में बैठा, हम उसकी बेटी के बालवाड़ी की ओर निकल पड़े।

कुर्सी

एक छोटा सा कमरा, उस कमरे का हृदय बड़ा। दो पिंजरे, उनमें चहचहाती छोटी छोटी हरी–पीली चिड़ियों की जोड़ी।

पुस्तकों के ढेर, एक बड़ी–सी टेबल कागजों से लदी–फदी। उस पर एक टेबल लॅम्प। कुछ टंगी हुई तस्वीरें, कुछ रंग–बिरंगी पेन्सिल और कलम।

कमरे के बीचो–बीच एक छोटी–सी मेज़ और चन्द कुर्सियाँ।

लगातार आते–जाते अतिथियों और आती हुई गरमा–गरम चाय की प्यालियाँ।

एक अतिथि जाते, कुर्सी खाली होते ही दूसरे अतिथि उस पर आ बैठते।

बदलाव व्यक्तियों का–

कुर्सी अपनी जगह वैसे ही अडिग और दृढ़।

चोरी से झांक कर देखा कुर्सी के अन्तर्मन की ओर, उम्र के इस पड़ाव पर मन ही मन अन्दर से टूटती हुई....चरमराती हुई परन्तु ऊपर से सक्षम, सशक्त और सुदृढ़.....।

सुरक्षित संवेदना

प्रहलाद श्रीमाली
42 (पुराना 31),
रघुनायकुलू स्ट्रीट
पार्क टाउन
चेन्नई–600003.
फोनः 044–23465297, 98
मो.: 09445260463

वे प्रातः सैर के लिए निकले तब आसमान लगभग साफ था। बस छुटपुट बादल थे। किंतु इस शहर के मौसम का कोई भरोसा नहीं। इसलिए छतरी साथ ले ली थी। चिंतन करते–करते वे शहर की तंग सड़कें और गलियां पार करते हुए एकदम खुले वातावरण में आ गये थे। समुद्र किनारे साफ ठंडी हवा में सुखद सांस लेते हुए भी वे फुटपाथ पर दिन गुजारने को मजबूर परिवारों के बारे में सोच रहे थे।

अपनी इस मानवीय संवेदना पर उन्हें नाज था। वरना आजकल कौन किसी का भला सोचता है। करने की बात तो दूर। विचार करते हुए उन्होंने तय किया। आगे से वे सिर्फ सोचेंगे ही नहीं। यथा संभव किसी का भला करने की चेष्टा रखेंगे। इस निर्णय ने उन्हें अपने प्रति गर्व का अतिरिक्त अहसास दिया।

अकस्मात बादल घिर आए और तड़ातड़ बरसने लगे। छतरी साथ लेने की समझदारी पर प्रसन्न होते हुए वे लौट पडे। नजर पडी, फुटपाथ पर सामने से एक फटेहाल महिला साल भर के रोते हुए बच्चे को गोद में लिए भीगती हुयी चली आ रही है। बच्चा शायद बीमार था या थपेड़े सह नहीं पा रहा था। वे विचलित से हो गये। अब क्या किया जाय इसके लिए! उनका दिमाग ठस सा हो रहा था। महिला काफी निकट आ चुकी थी। जाने कैसे अतंःप्रेरणा हुयी और उन्होंने खटाक से छतरी बंद कर दी। तब तक महिला और निकट आ गयी थी। पास से गुजरते हुए वे भी महिला और उसके बच्चे की तरह भीग रहे थे। इसका उन्हें परम संतोष था। आगे जाकर उन्होंने छतरी खोल दी। किंतु चाहते हुए भी मुड़कर देखने का साहस नहीं कर पाए। यदि कर पाते तो देखते। मुड़ कर देखते हुए वह महिला उनकी संवेदनशीलता पर मुस्कुरा रही थी।

हजार आंखों वाला विश्वास

''अच्छी तरह से देख लीजिए मैडम। कहीं कोई नल टपक तो नहीं रहा। बाथरूम, किचन, वाशबेसिन सब जगह। टपक रहा हो तो अभी ठीक किए देता हूं।''

मकान की छत पर बनी टंकी तक पानी पहुंचाने वाला पंप खराब हो गया था। उसे सुधारने आए प्लंबर ने आते ही इस बाबत जोर देकर पूछा था। और अब अपना काम खतमकर जाते हुए उसने दुबारा कहा तो गृहस्वामिनी झुंझला उठी।

''अरे भाई कहा ना सब नल बराबर है। फिर ये बार–बार क्यों पूछ रहे हो। जब भी जरूरत पड़ती है तुमको ही तो बुलाते हैं तो फिर चिंता क्यों करते हो ?''

''आप गलत समझीं मैडम। वो बात नहीं है। मैं आपका घरेलू प्लंबर हूं। इसलिए चिंता तो करनी ही पड़ती है!''

''चिंता, किस बात की चिंता ?'' झुंझलाहट और तेज हो गयी।

''दरअसल मेरे पिताजी कहा करते थे कि जिस घर में नल टपकता रहता है और पानी फिजूल बहता है उस घर में पैसा भी पानी की तरह खर्च होता है। ऐसी मान्यता है। शायद आपने भी सुना होगा। अब क्या है कि आप लोग ठहरे हमारे स्थायी कस्टमर। सो आपका भला तो हमें सोचना ही चाहिए।'' प्लंबर ने खुलासा किया। अब गृहस्वामीनी के चेहरे पर एकदम अलग भाव थे। वहां आश्चर्य, आनंद और प्लंबर के प्रति सम्मान साफ नजर आ रहा था। ''जरा दो मिनट रूको।'' उसने नम्रता मिली मुस्कान के साथ कहा और पहली बार घर के सारे नल ठीक से तपास कर आयी। इस काम के लिए उसने दो मिनट से कुछ ज्यादा ही वक्त लिया था।

''नहीं भैया सब ठीक है।'' राहत की सांस लेते हुए उसने प्लंबर को विदा किया।

''ये क्या उस्ताद! आप तो खूब पढ़े–लिखे हो। बड़ी ऊंची–ऊंची बातें करते हो। फिर खाली–पीली उन मैडम को अंधविश्वास में क्यों डाला?'' बाहर आते ही प्लंबर के छोकरे सहायक ने जिज्ञासा भरा उलाहना दिया।

प्लंबर चौंका, उसने घूरकर छोकरे को देखा। फिर मुस्कुराते हुए उसकी पीठ पर एक प्यार भरी धौल जमाते हुए बोला, ''वाह! बड़ा तेज है रे तू तो। देख, यह अंधविश्वास की नहीं विश्वास की बात है। और मेरा मानना है कि पानी और बिजली की किल्लत के जमाने में इस मान्यता के दम पर यदि थोड़ी बहुत भी बचत हो जाती है और वह पानी–बिजली जरूरतमंदों के काम आ जाती है तो यह अंधविश्वास नहीं बल्कि हजार आंखों वाला विश्वास है।''

छोकरा अपने उस्ताद के दूरदर्शीता भरे व्यवहारिक ज्ञान को पीने की कोशिश कर रहा था।

दादाजी की आत्मा

कमलेश चौरसिया
गिरीश–अपार्टमेन्ट 201
डब्लू.एच.सी रोड,
धरमपेठ, नागपुर
(महाराष्ट्र),
पिन– 440010
मो.–08796077001

''चल अपुन जादू–जादू खेलेंगे!''

''कहां भैया ?''

''अरे, ऊपर गच्ची में। वो पानी की टंकी है न, जहां पुराने सामानों का ढ़ेर रखा है, उसके पीछे।''

''लेकिन सामान कहां से लायेंगे ?''

''अरे बुद्धू! मैंने टी.वी. देखकर सब सामान इकट्ठा कर लिया है। यह देख मोमबत्ती, माचिस, चावल, पुड़िया में सिंदूर और नींबू।''

करीब सात साल का निखिल और पांच साल का नितिन दोनों भाई जादू–जादू खेलने में लग गये। निखिल ने अपने बालमन की याद्दाश्त से जमीन पर सिंदूर की मदद से कुछ आड़ी तिरछी लाइनें खींची, उनके बीच में मोमबत्ती जलाकर बगल में नींबू रखा। इसके बाद वह धीरे–धीरे से कुछ बुदबुदाने लगा।

दोनों एकाग्रचित्त जलती मोमबत्ती को देखते हुए एक उंगली जमीन पर टिका कर अपने दादाजी की आत्मा को बुलाने लगे। उन्होंने टी.वी. सीरियल में देखा था कि जादूगरनी, हीरोइन के पति की आत्मा को ऐसे ही बुलाती है और बुझते हुए मोमबत्ती के धुंयें के साथ ही आत्मा हवा में विलीन हो जाती है।

निखिल दादाजी से बहुत प्यार करता था। दोनों अपनी बालसुलभता में लौ को टकटकी लगाकर देखते हुए बार–बार दादाजी को पुकारने लगे। हवा के झोंकों से उन्हें ऐसा आभास हुआ कि दादाजी उनके पास आ गये हैं। इस सोच से रोमांचित होकर वे रोने लगे। इतने में तेज हवा से मोमबत्ती बुझ गयी, निखिल तुरंत खड़ा होकर धुअें के पीछे भागने लगा जैसे दादाजी के साथ चल रहा हो। धुंअें के पीछे–पीछे भागता हुआ मुंडेर पर चढ़ गया।

फैसला

मां के हाथों में रूपयों का बंडल रखकर चरण–स्पर्श करते हुए मिहिर ने कहा–'' यह ले मां! मेरे जीवन की पहली कमाई।''

लता गद्गद होकर बेटे के चेहरे पर सितारों की चमक फीका कर देने वाले उजास को देखती रह गई। उसकी आंखों से झरझर आंसू बहने लगे। बेटे के सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद देती हुए उसका माथा चूम लिया। उसे वह क्षण याद आ गया जब उसके इंजीनियर बेटे ने घर वालों के विरूद्ध गांव की पुश्तैनी जमीन पर खेती करने का फैसला किया था।

बातों का जादू

विमल तिवारी
तिवारी निकुंज
बृजराज नगर
धरमपुरा जगदलपुर,
पिन–494001 छ.ग.
मो.–07389335263

अपने शहर को छोड़कर मुझे नौकरी के लिए दूसरे शहर आना पड़ा। मां को नई जगह जाने का बिल्कुल मन नहीं था। कुछ दिनों बाद वह बीमार रहने लगी। मैंने इलाज में कोई कमी नहीं की मगर कोई सुधार न हुआ।

मां बोली–''अपने शहर में जाकर शर्मा डाक्टर को दिखाऊंगी। उनके इलाज से हर मरीज स्वस्थ हो जाता है। उनकी बातों में ही वह जादू है जिससे मरीज प्रभावित होकर शीघ्र स्वस्थ हो जाता है।''

सचमुच कुछ महीनों के इलाज से मां पहले की तरह स्वस्थ हो गई। वास्तव में जब मैं मां को डाक्टर शर्मा के पास लेकर गया तो उन्होंने मात्र प्यार से बातें कीं। उनके पास अमीर गरीब, छोटा–बड़ा कोई नहीं होता है। हर किसी को नाते–रिश्ते में बांधकर इलाज करते थे। बुजुर्ग महिला आने पर कहते–''आ दाई बैइठ, फिकर मत कर, सब ठीक हो जाही।''

यही बातों का जादू मरीजों की लम्बी कतार में नजर आ जाता था।

खुशनसीब

''वाह! क्या स्वादिष्ट भोजन बना है। हर प्रकार की मिठाई, हलवा–पूड़ी, यह छप्पन भोग दिल खुश कर गया।'' शर्मा जी की तेरहवीं के भोज में बैठे पंडितों ने तारीफ करते हुए कहा।

''धन्य हैं वे बेटे जिन्होंने अपने पिता के लिए इतनी अच्छी व्यवस्था की है। कितना खुशनसीब रहा होगा इनका पिता। भगवान उनकी आत्मा को शांति प्रदान करे!'' उनमें से एक पंडित ने अपनी लटकती तोंद पर हाथ फेरते हुए कहा।

दूसरा पंडित जो दिवंगत से परिचित था वो बोला–''अरे नहीं भईया! इतना खुशनसीब नहीं था शर्मा। उसके बेटे तो अभी आये हैं। बेचारा खेती किसानी कर–करके इनको पढ़ाया और ये दूर शहर में रहने लगे। जब इनके खाने–पहनने के दिन थे तब इनकी फरमाइश पूरी करते रहे। इनकी पढ़ाई में घर, खेत–खलिहान सब बिक गये। पत्नी चल बसी। दाने–दाने को तरसते रहे। बीमारी में कोई देखने नहीं आया। पता नहीं कितने दिनों से भूखे प्यासे रहे, भोजन, दवा और देख–रेख के अभाव में चल बसे। भगवान ऐसे दिन किसी को न दिखाये।''

ये सब सुनकर अन्य पंडितों के माथे पर बल पड़ गये।

पछतावा

कु. चंद्रकाति देवांगन
स्व.श्री संतप्रसाद देवांगन
महादेव घाट पारा
शिव मंदिर वार्ड–03
जगदलपुर–494001
जिला–बस्तर, छ.ग.
मो.– 9406084274

एक शाम पिता की निरीह आंखें राह देख रही थीं। वृद्धाश्रम में दरवाजे की ओर टकटकी सी लगी थी। बेटे की प्रतीक्षा में वह वृद्ध आंखें एक आस लिए जिन्दगी की शाम गुजर न जाये।

तभी अचानक सामने देखा कुछ सकुचाता हुआ बेटा आकर खड़ा हुआ देखकर, पलकें बंद हुईं। एक गहरी सांस के साथ अंतिम सांस थी बस यही आस थी।

बेटे को फिर सारी बातें याद आती चली गईं। बचपन से लेकर आजतक किस तरह मां की मृत्यु के बाद मां की कमी महसूस नहीं होने दी और माता–पिता दोनों बन कर बेटे की परवरिश की। पढ़ा लिखा कर काबिल बनाया, फिर विवाह भी करवा दिया। इसके बाद वे पारिवारीक कलह के चलते अपने बेटे से दूर होते गये।

फिर एक दिन बोझ समझकर वृद्धाश्रम लाकर छोड़ दिया गया। फिर कभी सुध न ली गई। अब आंखों में आंसू के साथ पछतावा ही तो साथ रह गया।

निर्णय

उषा की मां को बीमार पति और बेटी के ब्याह की चिन्ता है। पति पेशे से वकील हैं पर पिछले कुछ माह पूर्व ही उन्हें लकवा मार गया और वे बिस्तर पर पड़ गये। बायां अंग पूरी तरह से काम करना बंद कर दिया था।

तीन बेटियों की शादी हो चुकी है और कुछ जमा पूंजी से बेटे की इंजीनियरींग की पढ़ाई चल रही है। वह पढ़ने को बाहर गया है।

उषा मां और पिताजी तीनों चाचा–चाची के साथ रहते हैं। चाचा के दोनों बच्चे भी बाहर पढ़ते हैं। उषा ग्रेज्युएट है और घर पर ही कुछ बच्चों को ट्यूशन पढ़ाती है साथ ही नौकरी भी तलाशती है। वह जल्द से जल्द अपने पैरों पर खड़े होना चाहती है और अपने परिवार की जिम्मेदारी लेना चाहती है ताकि चाची के रात दिन के तानों से मुक्ति पा सके। आज सुबह ही मां ने बताया कि बुआजी ने फोन करके बताया कि कल लड़के वाले उषा को देखने आने वाले हैं। जब किचन में उषा आई तो चाची कहने लगी–अब शादी के पैसे कहां हैं, पैसे के पेड़ पर फलते हैं जो जिठानी शादी की रट लगाये है।

उषा कहती है–मैं अभी शादी नहीं करूंगी। अपने पैरों पर खड़ी होऊंगी।

अपनी मंजिल

माधुरी राऊलकर
76 रामनगर
नागपुर–440033
महाराष्ट्र
मो.– 8793483610

शलाका अपनी गृहस्थी में खुश थी। नई–नई शादी हुई थी। पति भी अच्छा मिला था। बाजू के ही फ्लैट में रहती थी। आते जाते हाय हलो हो जाती थी। जिन्दगी अपनी रफ्तार से चल रही थी। शादी के दो साल हो रहे थे। घर में नन्हा मेहमान आने की खुशी में दोनों बेहद खुश थे। एक दिन उसने नन्हीं बच्ची को जन्म दिया। उनकी खुशियां और बढ़ गईं।

कहीं कोई कमी नहीं। लेकिन जिन्दगी अपने हाथों में ऐसे ऐसे पत्थर लेकर रहती है कि कौन सा पत्थर किसकी जिन्दगी को चूर–चूर कर देगा पता नहीं होता है। ये पत्थर कभी नुकीले होते हैं, पथरीले होते हैं तो कभी सजीले भी होते हैं।

जिन्दगी हाथों में लेके पत्थर एक दिन
किस रूप में दिखाएगी असर एक दिन।

ऐसा ही उसके साथ हुआ। शलाका के माता पिता अपनी बेटी और नाती को देखने दूसरे शहर से आने वाले थे। शलाका के पति ने कहा–'मैं कार लेकर स्टेशन पर जाता हूं और उन्हें लेकर आता हूं।' और उसने कार निकाली और चल पड़ा। आधी दूर जाते ही एक ट्रक ने टक्कर मारी और वहीं पर उसकी मृत्यु हो गई। सुबह देखा हमारी बिल्डिंग में इतनी भीड़ क्यों जमा है ? पता चला उसके पति की मृत्यु हो गई है। शलाका का तो रो–रोकर बुरा हाल था। छः दिन की बेटी को लेकर वह अस्पताल से घर आई और सातवें दिन उसके पति का शव उसके सामने पड़ा था।

वक्त गुजरता गया। जिन्दगी कहां किसके लिए रूकती है ? उसने तो अनवरत चलने का जैसे व्रत लिया हो। एमबीबीएस के प्रथम में वह पढ़ रही थी। ससुराल वालों ने उसकी बच्ची को संभाला और उसे पढ़ने की प्रेरणा दी। बच्ची भी बड़ी होती जा रही थी। वह भी पढ़ रही थी। एमबीबीएस किया फिर एमडी किया। और आज वह शहर के एक बहुत बड़े अस्पताल की संचालिका है।

एक दिन शलाका थकी हारी मुसाफिर थी लेकिन आज वो ऐसी मुसाफिर है जिसे अपनी मंजिल मिल गई है। उनके इरादे, दृढनिश्चय और ईमानदारी को प्रणाम करती हूं। आज भी मिलती है तो वही नई उमंग, आशा के साथ।

काम

'मां! आप काम करते–करते थक जाती हो।'

'क्या करूं बेटा! काम करना तो पड़ेगा ही। खैर तू चिन्ता मत कर, पढ़ाई कर। तेरी नौकरी लग जाए बस। मैं तो तेरी शादी भी तुरंत कर सब काम से छुट्टी पा लूंगी।'

शादी के बाद।

'मां! आप भी तो दिन भर खाली बैठी रहती हो, मीना का हाथ बंटा दिया करें न! बेचारी काम करते–करते थक जाती है।'

सुषमा झा
प्राचार्य बस्तर हाई स्कूल जगदलपुर
जिला–बस्तर छ.ग.
494001
मो. 9425261018

दहेज

'मुन्ना! तुम्हारी बहू तो बड़ी खूबसूरत है, पर दान दहेज कुछ लाई है या नहीं ? तुम तो ठहरे भोला भंडारी, समधीजी ने ठग दिया होगा।'

'नहीं दीदी! क्या करता दहेज मांगकर, बहू पढ़ी लिखी है, नौकरी करती है। कुछ मांगता तो दे देते और बहू जीवन भर रौब जमाती। अब देखना हर महीने पैसे भी लायेगी और घर भी संभालेगी।

'अरे मुन्ना! बड़े चालाक हो। बहू तो आदर्श पिता का तमगा देगी।'

गलती क्या

'आपने तो दिमाग खराब कर रखा है दीदी! हम सब छोटे थे, आपने हमें पढ़ाया लिखाया पर हम भी तो काबिल निकले न, अच्छी नौकरी पाई। आपकी टोका–टाकी से मीना भी परेशान है।'

'.......?'

'अब आप ने हमारे लिए शादी नहीं की तो हमारी क्या गलती है ? इस बारे में पापाजी को सोचना चाहिए था।'

दीदीया सोचने लगी, पिताजी तो चल बसे, किसे दोष दूं ?

इंतजार

मैं द्वार पर खड़ी बच्चे की राह देख रही थी।

'अरे अम्मा! आप भी इस धूप में खड़ी हैं। मैं कोई बच्चा हूं क्या ?' उन्नीस साल के गुंजन ने हंसते हुए मुझे गले लगा लिया।

मन ही मन मैंने सोचा। जब तुम छोटे थे तो तुम्हारी जान का भय और अब बड़े हो गये तो बिगड़ जाने का भय। मां को तो बस इंतजार ही करना है।

चबूतरा

भाई जान ने नया घर बनवाया। गृहप्रवेश पर हम सब उनके घर गये। आलीशान, खूबसूरत! एक बड़ा हॉल, खूबसूरत डायनिंग हॉल, दो बेडरूम, अंदर की ओर एक छोटा सुंदर आंगन। सब कुछ सुंदर था। अटपटा लगा तो बस आंगन में बना एक चबूतरा, आंखों में खटक रहा था वो। मुझसे रहा नहीं गया, मैंने पूछ ही लिया–'ये किस लिए?'

भाईजान ठहाका मार कर हंसे और बोले–'जिस दिन मैं इस दुनिया से रूखसत होऊंगा, यहीं तो मेरा बेटा मुझे नहलाकर तैयार करेगा। मैं मूक रह गई।

आज उस चबूतरे पर भाईजान भरी आंखों से अपने बेटे को नहला रहे थे अंतिम रूखसती के लिए।

करमजीत कौर
शिक्षिका
अशोका पाक के सामने, धरमपुरा
जगदलपुर
जिला–बस्तर छ.ग.
494001
मो. 9425261429

अंतिम विदाई

वो लड्डू बांट रही थी। मेरे हाथ में भी जबरदस्ती पकड़ाते हुए कहने लगी–'खा न! खाती क्यों नहीं?' और मैंने आंखों में बरबस भर गये आंसुओं को जबरदस्ती दबाते हुए लड्डू उनके हाथ में वापस कर दिया।

बस्तर पाति

'नहीं दीदी! मुझसे नहीं खाया जायेगा। ये मौत की खुशी है या दुख!' अजीब रिवाज है। इनके साथ खुशी के किसी भी मौके पर मैंने इतने मनुहार से तो कभी कुछ नहीं खाया और आज इस तरह लड्डू बांटा जाना।'

मैं भरे मन और भरी आंखों से लौट आई। काश भैया के जीते जी भी ये मंजर देखा होता।

आदत

परीक्षाओं का दौर देर रात तक पढ़ाई करना। हमारी खुली किताबों के साथ मां की आंखों का खुला रहना जरूरी होता था। वो नहीं जागेंगी तो हमें नींद आ जायेगी। फिर पढ़ाई कैसे होगी। इस तरह एक नहीं कई रातें जागते बीती उनकी। पर कभी किसी से भी शिकायत की हो याद नहीं आता। आज पहली बार पीठ में तेज दर्द की शिकायत से उन्हें अस्पताल लाना पड़ा। डॉक्टर ने एडमिट कर लिया। किसी को तो रात भर रूकना होगा। पर सबके अपने मसले, किसी को बीपी है जाग नहीं सकता तो कोई सुबह से थका है तो किसी को अस्पताल में टॉयलेट जाने की समस्या। मां बिस्तर पर लेटी हुई सब सुनती है अधखुली आंखों से और होंठों पर मुस्कुराहट लाकर सभी को जाने का इशारा करती है। कहती है–'मैं ठीक हूं, मुझे तो जागने की आदत है।'

परिधान

हेमंत बघेल
एम.ए.
तेतरखुटी, जगदलपुर
छ.ग. 494001
मो. 9098932187

चैतू ने लालाजी की दुकान से डिबरी के लिए तेल, माचिस, नमक, गुड़ाखू और तम्बाखू की पुड़िया खरीदा। लाला ने अपने कैल्कुलेटर में ऊंगलियां दौड़ाई–'सत्ताईस रूपया।'

चैतू ने एक नजर कैल्कुलेटर को देखा और बोला–'क्या लाला! लुंगी–बनियान में हूं इसका मतलब अनपढ़ हूं ? तुम्हारे कैल्कुलेटर से पहले ही मैंने हिसाब लगा लिया है कि बाइस रूपये होते हैं।'

स्त्री–पुरूष समानता

बिजली ऑफिस के कर्मचारियों के बीच चर्चा छिड़ी हुई थी। विषय था–स्त्री–पुरूष समानता। विश्वास बाबू ने फरमाया–'वर्तमान समय में महिलाएं पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिला कर कार्य कर रही हैं। चाहे वो कोई भी क्षेत्र हो, शिक्षा, चिकित्सा, राजनीति, विज्ञान, अभिनय, खेल।'

'चाहे बिजली का बिल भरना हो।' रतन ने व्यंग्यात्मक लहजे से विश्वास बाबू की बात काटते हुए कहा।

सभी ने बिल काउन्टर की ओर देखा और जोर का ठहाका लगाया। काउन्टर पर पुरूषों की लंबी कतार लगी हुई थी और महिलाओं की कतार में केवल तीन–चार महिलाएं ही खड़ी थीं। वहीं आसपास कुछ पुरूष यहां–वहां खड़े थे शायद कुछ इन महिलाओं के साथ होंगे।

ठहाकों की समाप्ति पर पूरी चर्चा में लगभग तटस्थ से रहे गौतम बाबू ने कहा–'बिल काउन्टर में खड़े इन महिला पुरूषों में आप लोगों को समानता नजर आ रही है लेकिन इस समानता के पीछे छिपी पुरूष वर्चस्वता आप लोगों को नजर नहीं आ रही है।'

भ्रष्टाचार की जड़

उस कच्ची सड़क को कांक्रीटवाली रोड में बदलने का जोर–शोर से काम चल रहा था। जब सारा मुहल्ला सो जाता तब मनोहर अपनी पत्नी संग बाल्टी लिए सड़क पर आते और कांक्रीट रेत के ढेर से बाल्टी भर–भर कर अंदर करते जाते। रोज 2–3 बाल्टी। वह भी तब तक कि जब तक सड़क का काम पूरा न हो गया। सड़क बनकर तैयार हुई तब मनोहर बाबू सबसे कहते फिरते–'सड़क साल भर भी न टिकेगी, ठेकेदार ने सारा माल अंदर कर लिया। कितनी पतली सड़क बनाई है स्याले चोर ने।'

उनकी बात सच निकली सड़क टूट गई पर उनके घर का आंगन मजबूती से टिका रहा।

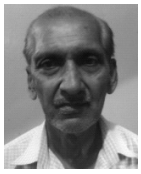

बारात

अवधकिशोर शर्मा
अधिवक्ता
इंदिरा वार्ड, जगदलपुर
छ.ग. 494001
मो. 9755850497

डॉ.विजयेन्द्र के भाई की शादी की बारात निकली थी। उन्होंने चुनिंदा और सीमित लोगों को ही आमंत्रित किया था। शादी के लिए सुस्वादु और लजीज भोजन का प्रबंध उनके घर से पचास कदम दूर कपूर लॉन में किया गया था। भोजन की खुशबू से लजीज भोजन की चाह में एक व्यक्ति पांव व कूल्हे मटकाता नाचता हुआ बारात में शामिल हो गया। डाक्टर साहब की नजर जब उस पर पड़ी तो वे क्रोध से सुलग उठे और बाराती लाइन तोड़कर उस व्यक्ति के पास पहुंचे। उसे अपने हाथ व कंधों से ऐसा जोर का धक्का दिया कि वह व्यक्ति बारात से दूर पास के खेत में गिर पड़ा।

बारात धुन बजाती हुई जा रही थी–'आज मेरे यार की शादी है।'

मैं जागने के लिए सोता हूं

वह बंगाली अधेड़ सज्जन स्वभावी चाय की गुमटी लगाता था। बुद्धिजीवी होने के कारण वह ह्रदय से मेरा सम्मान करता था। वह रविन्द्रनाथ टैगोर की कविताओं व बंगाल के सांस्कृतिक वैभव को अकसर उद्धृत करता रहता था।

धीरे–धीरे मैंने संकोचवश उसकी दुकान में जाना कम कर दिया क्योंकि वह मुझसे चाय के पैसे नहीं लेता था।

रविवार की सुबह जब अखबार सुबह सात बजे तक नहीं आया तो मैं अपनी स्कूटी उठाकर पुराने बस स्टैण्ड की ओर चल पड़ा। तब उसने आवाज देकर मुझे चाय का निमंत्रण दे डाला। चाय का सिप लेते हुए मैंने उससे पूछा–'दादा! आप चाय का ठेला कितने बजे लगाते हो ?'

उसने कहा–'रात साढ़े तीन बजे।'

मैंने उत्सुकतावश उससे पूछा–'आप सोकर उठते कब हो ?'

उसने मेरी जिज्ञासा शांत करते हुए कहा–'रात तीन बजे जाग जाता हूं फिर आधा घंटा मुझे फ्रेश होने, दातौन करने, मुंह हाथ धोने व चाय पीने में लग जाता है। उसके बाद ठेला लेकर निकल पड़ता हूं बस स्टैण्ड की तरफ।'

मैंने हैरानी से पूछा–'दादा! आप फिर सोते कब हैं ?'

उसने हंसकर मेरी ओर देखते हुए कहा–'शाम सात बजे।' मेरी उत्कंठा को विराम देते हुए उसने लुक्मा लगाया–'बाबूजी मैं जागने के लिए सोता हूं, ताकि बच्चे सुख की नींद ले सकें।'

नि:शब्द

श्रीमती अलका पाण्डे
शिक्षिका, भानपुरी
जिला–बस्तर
मो.–9009481026

मैं गली के नुक्कड़ से अनाथ मिला बेबस। सुबह नाश्ते में लोगों की गालियाँ–लात अनायास ही मिलते। नीम चौराहे पर मेरा डेरा। या यूं कहें कि घर! सड़क पर चमचमाती गाड़ियाँ जब रूकतीं मैं अपना फटा गमछा लेकर दौड़ पड़ता उन्हें चमकाने, मेरे जैसे और आवारा अनाथ, लड़कों के साथ; दो पैसे मिलेंगे।

दोपहर होते ही पेट कुम्हलाने लगते। 10–11 बरस की उम्र भूख से आकुल दौड़ पड़ते शहर के आलीशान होटलों की ओर, सरपट। गंदी नालियों के बीच पाइप से जूठन जहाँ से बहकर आता था। कभी भात का ढेर कभी रोटी के टुकडों पर टूट पड़ते मैं और मेरे साथी, और साथ में आवारा कुत्तों का झुंड पहले पाने की। कर रही थी कोशिश पेट की आग को बुझाने की। शाम को फिर वही पगली सड़क पर बड़बड़ाते हुए पुल के नीचे जाकर सोई रहती। कुछ लड़के गंदी निगाहों से देखते हुए रोटी देकर उसे बुलाते। छी! मैं इन सबसे घबरा जाता रोटी की कीमत भूख की तड़प!!

शाम बीतने को है। धीरे– धीरे निशा पांव पसारने लगी है दूर उठता धुआं। मन बोझिल हो उठा। धुऐं के संग मन को उलझाते हुए आकाश में दूर विलीन होते हुए, कुछ अनकहे नि:शब्द सवाल। मैं चलता जा रहा था रात गहरा रही थी। दूर कुत्तों के भौंकने की डरावनी आवाज निशा की शांति को भंग करने को आतुर। अनायास ही मेरे पैर मुड़े पुल की ओर। नहीं मुझे उस पगली को बचाना होगा जो रोते हुए भागी जा रही थी रोटी के टुकड़े के पीछे। उन लडकों के संग। मेरे कदम तेज हो गये। मैं दौड़ पड़ा उस दिशा की ओर जहां कोई और मुझ जैसा अनाथ जनम न ले सके। मुझे बचाना है इस धरा को ''नि:शब्द''!

पहल

सूरज सर पे चढ़ गया है। आज मैडम के घर बर्तन झाड़ू करते हुए बहुत देर हो चुकी थी। घर पहुंचकर दरवाजा खोलते ही देखा पति पीकर धुत्त पड़ा है। दो साल की बच्ची को गोद से उतारकर.... चूल्हे में खाना चढ़ाने लगी; इतने में बूढ़ी सास खांसते हुए आवाज दी– रम्मो पानी पिला दे। इस सरगू को तो आवाज देकर थक गई हूँ ! पड़ा है जमीन पर।

अपनी सास को पानी देकर... मैं चावल के खौलते पानी को एकटक निहार रही थी। मन अतीत में खो गया। वो स्कूल वो सहेलियां – कक्षा नवीं में पढ़ती थी जब भागकर इस सरगू से शादी कर ली थी। मेरे पिता गांव के सरपंच थे। बहुत बदनामी हुई। सरपंच की लड़की खदान में काम करने वाले मजदूर के साथ भाग गई। कुछ दिन ठीक चला पर.. धीरे–धीरे आर्थिक बोझ बढ़ने से सरगू शराब पीने लगा था। लाख मनाया पर....।

अरे रमोतीन तुम्हारे गांव से एक आदमी आया है। दौड़कर दरवाजे पर गई – चमरू, पिता का नौकर खड़ा था– दादा अंतिम सांस ले रहे हैं– ये खत देने को कहा है।

मैं खत खोलकर पढ़ने लगी– बेटी मेरी जिंदगी खत्म हो रही है! पर मेरी और कोई औलाद नहीं है– इसलिए अंतिम समय में न चाहकर भी तुझसे कुछ कहना है, सरपंच हूँ न, मैं ही पहल कर रहा हूं, मेरा नसीब! बेटी तू आज अपने जीवन में पढ़ाई के महत्व को समझती तो कितना अच्छा होता.... पर मैं कुछ बैंक बैलेंस व खत छोड़ कर जा रहा हूं उन पैसों से तू खूब पढ़ना और अपनी बच्ची को पढ़ाना। खेत में सरगू को सब्जी लगाने कहना। आह ! क्या करूं, मैं तो तुझे विदा भी नहीं कर पाया, पर तू मुझे इस दुनिया से अंतिम विदाई दे दे – मेरी चिता को मुखाग्नि देकर। घर (गांव) आ जाना, तुरंत...।

मैं सोच नहीं पा रही थी, पिता पुत्री को विदा करता है या पुत्री पिता को। खैर! इस कठोर जिंदगी में इतना समझ गयी कि शिक्षा का क्या महत्व है। मैं मायके जाने को तैयार होने लगी, पिता के अंतिम दर्शन व विदाई हेतु।

खुशियां

अशोक 'आनन'
मक्सी–465106
जिला–शाजापुर
मो.–9981240575

मिसेज खन्ना जब इस बार दिल्ली गईं तो उन्हें जाने क्या सूझी. ...पार्वती की बिटिया के लिए भी कुछ खिलौने खरीद लाईं।

खिलौने देखते ही मां–बेटी की बांछें खिल गईं। दोनों अपने भाग्य को सराहने लगीं।

लाड़ों ने खुशियां बिखेरते हुए कहा–''थेक्यू आण्टीजी!'' और वह खिलौनों से खेलने में रम गई।

पार्वती उनके अहसान तले इतनी दब गई कि अपनी मालकिन से हाथ जोड़कर सिर्फ इतना ही कह सकी–''मेमसाब! सचमुच आप बहुत महान हैं। आपका दिल बहुत बड़ा है। आप हमारी खुशियों का कितना ख़्याल रखती हैं।''

लेकिन पार्वती की सारी खुशियां उस समय काफूर हो गईं जब मिसेज खन्ना ने पहली तारीख को उसका हिसाब करते हुए उसे पचास का नोट थमाया और कहा–''पारो! साढ़े चार सौ रूपये मैंने खिलौनों के काट लिए हैं।''

दो आँखें...

वर्षा रावल
फ्लैट नंबर–40, ब्लॉक नंबर–3, अवनि बिहार
शंकर नगर
रायपुर, छ.ग.
मो.–09977237765

''माँ, मैं अगले माह आ जाऊँ क्या ? डिलिवरी यहां सम्भव नहीं लग रही, और...और राजेश को मालिक ने दो माह से तनख्वाह भी नहीं दी।'' टीना ने हिचकते हुए माँ को फोन पर कहा।

''अरे नहीं! नहीं टीना बिलकुल सम्भव नहीं। तुम तो जानती हो मेरी और तुम्हारे पापा की तबियत खराब रहती है, घर में नई बहू है, उससे तो काम होगा नहीं। हम आएँगे न बच्चे को देखने.... ।''

टीना का गला रुंध गया, सिर्फ इसलिए कि मैंने रूपये पैसे वाले से शादी नहीं की, उनकी मर्ज़ी के खिलाफ प्रेम विवाह किया। दौड़ पड़ी और बिस्तर पर फफक–फफक कर रोने लगी। बात साफ थी मायके से कोई उम्मीद नहीं। तीन दिन बाद हुआ ये....!

ट्रिन ट्रिन ट्रिन..''हेलो, टीना कैसी हो मेरी छोटी बहना ?''

''ओह दी आप! आप कैसी हैं ?''

''पहले तू बता तेरा तो टाइम हो गया होगा न ?, क्या ला रही है मेरे बिट्टू की बहन या भाई ?बोल न..!''

''अरे दी आप भी न..... ।''

''टीना! हम लोग अगले माह माँ के पास जा रहे हैं तू भी आ जा। मैं तो हूँ ही, तू चिंता मत कर डिलेवरी हो जाएगी। माँ का फोन आया था कुछ दिनों पहले, अपने अफसर दामाद की धौंस देना चाहती हैं सबके सामने, हम लोगों को बुलाया है। पूरे एक माह रहने वाले हैं हम, खूब एन्जॉय करेंगे... ।''रीना के शब्द टीना की सिसकियों में घुलते जा रहे थे....जैसे तैसे कह पाई।

''दी! कोशिश करती हूँ। पर बहुत मुश्किल है.... ।''माँ की बात याद आई टीना को .....तुम दोनों मेरी दो बेटियां नहीं मेरी दो आँखे हो.... ।

आशीर्वाद

बगल वाले घर से बहस की तेज आवाज़ें आ रही थीं, जिसमें स्पष्ट सुनाई पड़ रहा था कि सुबह–सुबह पत्नी अपनी सासू माँ पर बरस रही थी। पति महोदय भी पतिधर्म का पालन करते पत्नी का पक्ष लेकर माँ से झगड़ रहे थे। माँ धीमे स्वर में स्पष्टीकरण दे रही थी। बच्चे को लेकर उठी इस बात में बहस चरम पर थी। बेपरवाह था तो वो बच्चा जिसकी वजह से दादी पर बन आई थी। तभी मेरी नज़र उस घर के पोर्च पर रखी कार पर पड़ी, जिस पर लिखा था।

'माँ तेरा आशीर्वाद'

असर

अतुल मोहन प्रसाद
शाश्वत पुस्तक सदन
डी.के.धर्मशाला मार्ग
बंगाली टोला, बक्सर
बिहार–802101
मो.–08235059357

मालकिन की चिन्ता आज ज्यादा बढ़ गई थी। दो दिन से रूबी अपने बच्चों को दूध नहीं दे रही थी। दरवाजे पर उसके बच्चे भूख से केंकिया रहे थे। मालकिन छड़ी लेकर रूबी के सामने बैठ गई–''चलो बच्चन के दूध पिलाओ।'' जमीन पर छड़ी बजाते मालकिन बोली। रूबी चुपचाप खड़ी रही। एकटक देखते हुए।

''तुम इस तरह नहीं मानोगी ?'' मालकिन बोली–''सामने सो जाओ। दूध नहीं पिलाना है तो तू बच्चे क्यों दी ?'' डर के मारे रूबी सीधा सो गई। मालकिन के चेहरे पर संतोष की रेखा उग आई। मालकिन सोचने लगी। अचानक परसों बहू के संग हुई बातचीत स्मरण आ गई।

''यह क्या कर रही हो बहू ?'' अपने बच्चे को बोतल से दूध ा पिलाते देख पूछी–''अभी से बोतल से दूध ? अपना दूध क्यों नहीं पिला रही हो ?''

''अपना दूध पिलाकर हमे अपना फिगर खराब करना है ?'' बहू ने टका सा जवाब सुनाया। हमे लग रहा है, रूबी बहू का जवाब सुन ली थी। उसी के जवाब का असर था कि उसी दिन से रूबी अपने बच्चों को दूध पिलाना बंद कर दी थी।

कमाई

आशा के आदमी के गुजरते ही उसकी जिन्दगी में निराशा के बादल छाने लगे। मायके वालों ने उसे ज्यादा पढ़ाया लिखाया नहीं था। कहते थे ज्यादा पढ़ लिखकर क्या होगा ? चिट्ठी–पत्री भर लिख–पढ़ ले, गीता–रामायण बांच ले बहुत है। कौन लड़की से कमाई कराना है ?'' पढ़ाई के मामले में आशा के ससुराल वाले भी वैसे ही निकले। उनका विश्वास था–औरत की कमाई खाने से अच्छा जहर खाकर मर जाया जाये। आाशा के आदमी के गुजरते ही उस पर एवं उसके इकलौते बेटे पर परिवार की ओर से विपत्ति का कहर टूट पड़ा। लाचार होकर एक दिन आशा की जुबान खुल पड़ी–''मुझे मेरे बेटा की उपेक्षा बर्दाश्त नहीं होती, मुझे घर से बाहर काम करने की इजाजत दो।''

''इस घर में औरत नहीं मर्द कमाता है। समझी। देखो यह कैसे सीना भर, बित्ता भर का जीभ निकाल रही है। मर्द रहता तो सीधे आकाश में छेद कर देती। इस मामले में आगे कभी जुबान नहीं हिलाना।''

''मेरे हिस्से की जमीन मुझे नहीं देंगे ? मेरी जमीन की उपज का पैसा मुझे नहीं देंगे ? मतलब यही हुआ न कि आप मेरी कमाई खा रहे हैं। एक औरत की कमाई ?'' सन्नाटा पसर गया आंगन में उसकी बात सुनकर।

स्वागत सज्जा

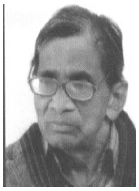

डॉ. सतीश दुबे
766–सुदामा नगर
इंदौर–448234
मो.–9617597211

बहू शिखा को चैक–अप के लिए मम्मी जी लेडी डॉक्टर के क्लीनिक में ले गई थी। लौटने पर बहू द्वारा दी जाने वाली नये मेहमान की सौगात खबर जैसे ही उन्होंने घोषित की, खुशी के गुब्बारे घर की हर दीवार पर चस्पा हो गए। शिखा का दर्जा पहले की अपेक्षा और अधिक बढ़ गया। मेहमान को संस्कार और उसकी छवि को मस्तिष्क में संजोये रखने के लिए एक दिन सरप्राइज के रूप में एक विशेष कक्ष में शिखा को ले जाया गया।

नए मेहमान और मां के स्वागत–सज्जा के रूप में दीवारों पर सुन्दर बच्चों, वीरों और आदर्श भगवान की विभिन्न मुद्राओं वाली तस्वीर लगाई गई थी। खिलौने, टेडी बियर, प्लास्टिक के लव–बैलून जगह जगह उड़ते रहें, ऐसा करिश्मा किया गया था। प्रवेश के बाद शिखा मारे शर्म के नायिका की तरह सिर ऊंचा नहीं कर पा रही थी।

''मम्मी! खास चीज, पलना तो रह ही गया।'' बेटी दीपा, भाभी की चुटकी भरते हुए मम्मी की ओर मुखातिब हुई।

''वह भी आ जायेगा, ऐसा कि लोग देखते रह जाएं।''

''किसे मेहमान को या लाने वाले को ?''

पूरे माहौल को खुशी–हंसी में तब्दील करने के लिए मम्मीजी बोली–''तेरी भाभी को।''महफिल में अपनी भागीदारी दर्ज कराते हुए शिखा उलाहना भरे भाव से ऐसे मुस्कुराई मानों कह रही हो ''मम्मी! आप भी न!''

शिखा को भविष्य के सपने बुनने के लिए सब लोग अकेली छोड़कर चले गये थे।

इधर–उधर निगाह घुमाते हुए प्रकाश हवा के लिए सामने खुली वेन्टीलेशन विन्डो पर शिखा की दृस्टि स्थिर हो गई। देखा, चिड़ा–चिड़ी विन्डो के समतल भाग पर रंगबिरंगे तिनके इकट्ठे कर उन्हें घोंसले का आकार दे रहे हैं। मादा–नर चोंच में तिनका लाते और उसे ऐसा व्यवस्थित रखते मानों घोंसला कक्ष सजा रहे हों।

जीवन विज्ञान के अध्येता चाहे शिखा न हो पर उसे यह समझने में देर नहीं हुई कि उनकी यह घोंसला–सज्जा उनके आने वाले चुनमुन के लिए है। वह अपने कमरे और चिड़ा–चिड़ी के घोंसले पर निगाह घुमाते हुए सोचने लगी कि चुनमुन के लिए सजाये जाने वाले तिनके तिनके में जो ममत्व, प्यार, उत्साह मौजूद है वैसा क्या वह और गिरीश अपने चुनमुन के इस कक्ष में महसूस कर सकते हैं ?

सच

श्रीमती बकुला पारेख
18–जूनियर एम.आई.जी.,
जय बजरंग नगर,
इंदौर, म.प्र.
मो–9826952602

आज करोड़ीमल की दुकान बंद थी। मुन्ना पुस्तकें लेकर उनके पास बैठ गया। करोड़ीमल ने गांधीजी का पाठ पढ़ाते हुए लिखवाया, 'हमे हमेशा सच बोलना चाहिए।' कापी पलटते हुए टेस्ट के नंबर देखे दस में से दो! गाल पर चांटा जड़ते हुए करोड़ीमल बोले–''मुझे आठ बता रहे थे और नंबर मिले हैं दो। पढ़ते हो 'सच बोलो' और फिर झूठ बोलते हो!''

तभी फोन की घंटी ट्रीन–ट्रीन की आवाज के साथ घनघनाई। लेनदार का फोन होने की आशंका भांपते हुए करोड़ीमल बोले–''मुन्ना! फोन उठाओ, अगर मेरे लिए हो तो बोले देना, पापा टूर पर गये हैं।''

सुहागन

वट सावित्री का व्रत है। पूजा करने जाना है, सूत समेत पूजा की थाली तैयार कर शांता ने पड़ोसन सुमित्रा को आवाज दी।

सुमित्रा की बेटी ने जवाब दिया–''मम्मी तो बुआ के साथ चली गई।''

''लो चली गई, कल से तो बात चल रही थी कि साथ में चलेंगे।'' शांता बुदबुदाई–''पिछली बार तो अम्मा के साथ चली गई थी, पर अब....अम्मा (सासू मां) भी अकेली और मैं भी! क्या करती, रोज–रोज के झगड़ों से तंग आ चुकी थी।''

शांता बुदबुदाती रही।

बड़ के पेड़ के पास जाकर पूजा की, सूत लपेटा, पति की दीर्घायु की कामना की। धूप तेज हो चली थी तनिक विश्राम करने बैठ गई शांता। बड़ यानी वट के पेड़ से लटकती हुई शाखाएं जो कि जमीन के अंदर चली गई थीं, उन्हें अपलक निहारती रही।

''बूढ़े हो रहे बरगद के पेड़ को शाखाएं सहारा दे रही हैं।'' कहीं कुछ मन में खटका, आंखों में आंसू भर आये। उठ खड़ी हुई शांता। घर जाने के बदले अम्मा (सासू मां) के घर गई। अम्मा बहू को देखकर भौचक रह गइ। शांता अम्मा के पैर छूकर बोली–''अम्मा हम साथ रहेंगे, घर चलो। इस उम्र में आपका सहारा बनना हमारा फर्ज है।''

अम्मा भावुक होकर रो पड़ी, बोली–''बेटा! आज व्रत का तुझे पूरा फल मिलेगा, मेरा आशीर्वाद तेरे साथ हमेशा रहेगा। चाहे तू व्रत करे या न करे, हमेशा सुहागिन बनी रहेगी।''

अंतर

श्रीमती रीना जैन
सिंघई क्लाथ स्टोर्स
पैलेस रोड, जगदलपुर
जिला–बस्तर छ.ग.
मो. 7000314139

अस्पताल में बीमार मां की सेवा कर रही थी कुंवारी बहन। तभी उसका शादीशुदा भाई शरबत की बोतल लेकर आया और बहन को देकर बोला–''लो मां के लिए। ये रूह अफजा मां के दूध में घोल दो। मां को पसंद है।''

वह बहुत खुश हुई, उसकी आंखें भर आईं कि अलग रहते हुए भी भाई को मां की फिक्र है। किन्तु जब वह किराने की दुकान पर अपना पिछला उधार चुकाने पहुंची तो उसका दिल टूट गया। उसकी आंखों में आंसू छलक आये, क्योंकि शरबत उसी दुकान से लाया गया था उध ाार में।

अंतर

एक बार कपड़े की दुकान पर सास–बहू साड़ी खरीद रहे थे। साथ में छोटी बहू थी। सास ने एक साड़ी देखकर कहा–''ये साड़ी तेरी जेठानी पर जंचेगी न! वो बहुत सुन्दर है, उस पर हर कपड़े खुलते हैं।'' यह सुनकर छोटी बहू के चेहरे पर कसमसाहट उभरी।

अगले ही पल वह शांत हो गई क्यों कि सास तुरंत बोली –''बेटी! तुम दोनों ही मेरी पसंद हो। मेरी बेटी हो। और मां को अपने सभी बच्चे प्यारे होते हैं चाहे सुंदर हों या कुरूप!''

भगवान

एक छोटा सा मासूम बच्चा अपने पिता के साथ मंदिर में प्रवेश करता है और उसकी दृष्टि हर तरफ कुछ खोज रही है। अचानक उसके चेहरे पर मुस्कान खिल उठती है, आंखों में चमक आ जाती है। उसे मंदिर में उसकी दादी दिख जाती है। वह भगवान की प्रतिमा की ओर देखे बगैर संस्कारवश पूजा के पुष्प टेबल पर चढ़ाता है और झुककर भगवान को प्रणाम करता है। लेकिन दर्शन वह दादी के कर रहा था।

दादी कहती है–''बेटा! भगवान को देखो।''

पास खड़े पंडित जी कहते हैं–''कोई बात नहीं माता जी। मां–बाप, दादा–दादी ही सच्चे भगवान हैं वही तो बच्चों को दुनिया में लाते हैं, वही तो दुनिया समझाते हैं। ये पाषाण की प्रतिमा भी तो सद्गुणों का प्रतीक है। हम भी उसकी पूजा करके स्वयं को उस जैसा बनाना चाहते हैं।''

बेबस

श्रीमती पूर्णिमा सरोज
व्याख्याता–रसायन
मेटगुड़ा, जगदलपुर
जिला–बस्तर
पिन–494001
मो–9424283735

पार्क में कहीं बच्चे अपने माता–पिता की उंगली थामें खुशी से यहां–वहां देख रहे हैं। कहीं बच्चे झूला झूल कर आनंद ले रहे हैं तो कहीं फिसलपट्टी पर फिसल–फिसल कर खुश हो रहे हैं। कुछ लोग अपने परिचितों से मिलकर खुश हो रहे हैं। माता–पिता बातों के बीच भी अपना ध्यान बच्चों पर रखे हुए हैं कि कहीं बच्चों को झूले या फिसलपट्टी से असावधानीवश चोट न लग जाये।

मुझे यह सब देखकर बड़ा आनंद आ रहा है। घूमते हुए अचानक पार्क के एक कोने में कुछ बच्चों के झुण्ड पर मेरी नजर थम गई। उनके आसपास कोई अभिभावक नहीं थे। वे आपस में ही बातें कर रहे थे और अश्लील, अजीब सी गालियों का प्रयोग अपनी बातों में कर रहे थे।

मैं और अधिक उत्सुक हुई कि आखिर ये यहां कर क्या रहे हैं ? एक बच्चे ने एक दवाईनुमा शीशी पकड़ रखी थी। एक बच्चे ने एक प्लास्टिक वाली झिल्ली हाथ में पकड़ रखी थी, जिसे वह बार–बार मुंह के पास ले जाता था। झिल्ली फुग्गे की तरह फूलती और सिकुड़ जाती थी। मुझे अपने करीब आते देख उन्होंने जो भी अपने हाथ में रखा था, छिपा लिया।

मैंने पूछा–''बच्चों आप लोग स्कूल जाते हो ?''

सभी का जवाब था–''नहीं।''

पुनः दूसरा प्रश्न किया मैंने–''क्यों ?''

उनमें से एक बच्चा बोला–''मेडम जी! हम लोग दिन भर काम करते हैं, कचरा बीनते हैं, हॉटल में बरतन धोते हैं और भी कई काम जिसे हम न करें तो हम भोजन नहीं जुटा पायेंगे।''

और वे वहां से चले गये। उनके जाने के बाद वहां पड़ी हुई कुछ चीजों पर मेरी निगाह चली गई। वहां कुछ कफ सीरप की खाली शीशियां, बोनफिक्स, क्विकफिक्स के चपटे ट्यूब पड़े हुए थे। मैंने कहीं पढ़ा था कि इन चीजों से नशा किया जाता है।

रूप परिवर्तन का एक और चरण

शिवराज प्रधान
दुस्सीपाड़ा चा बगीचा
पोस्ट–रामझोड़ा
जिला–अलिपुर टुवार
पिन–735228 प. बंगाल
मो. 9734042876

एक दिन भगवान ने बैठे ठाले सोचा कि आजकल पृथ्वीलोक में बहुत सारा परिवर्तन आया है, क्यों न एकबार पृथ्वीलोक का भ्रमण कर आयें। भगवान छद्म रूप धारण करके पृथ्वीलोक के भ्रमण को निकल पड़े। वहां पांव रखते ही उनकी नजर बड़े से शॉपिंग मॉल पर पड़ी। वो तत्काल ही शापिंग मॉल में घुस गये। मॉल के अंदर घुसते ही वहां के दृश्य उन्हें चकाचौंध कर गये। भगवान प्रफुल्ल हो गये। पास के धोती विक्रय केन्द्र पर उनकी नजर पड़ी। उनका मन वहां शोकेस पर सजाई बहुमूल्य धोती पर आ गया। वे तपाक से धोती उठाकर सेल्सगर्ल के पास जाकर बोले–''हे कन्याश्री! मैं भगवान हूं और छद्म रूप में तुम्हारे सामने खड़ा हूं। ये धोती मुझे दान में चाहिए। क्या तुम मुझे ये दे सकोगी ?''

सेल्सगर्ल बोली–''भगवान जी आपको दिखाई नहीं देता कि यहां हर माल बिकाऊ है। सबके ऊपर बिक्री मूल्य लगाया हुआ है। और फिर यहां सीसीटीवी भी लगाया हुआ है।''

भगवान ने देखा, वहां बनावटी केश यानी 'विग' विक्रय केन्द्र में अर्द्धवयसी तरूणियां विभिन्न स्टाईलों के विग पहनकर शीशे में निहारकर अपने रूप परिवर्तन पर खुश हो रही हैं।

भगवान ये देखकर कुछ सोच में पड़ गये और धोती वहीं रखकर कहीं दूसरे कोने में चले गये। वहां जाकर वे शानदार आधुनिक व्यक्ति का रूप धारण कर लिया। शरीर पर महंगे कपड़े और महंगी घड़ी, मोबाइल हाथ पर थे।

वे ये रूप धारण कर उस कोने से निकलकर मॉल में थोड़ी देर इधर उधर घूमे और फिर वहीं उसी सेल्सगर्ल के पास पहुंच गये। उन्हें देखकर सेल्सगर्ल ने तुरंत ही नमस्ते किया। भगवान उसका अभिवादन स्वीकार करके उसी धोती को उठाकर रख लिए और वहां से चल पड़े। मुख्य द्वार पर पहुंचते ही सिक्यूरिटी गार्ड ने जोरदार सलाम ठोका। भगवान ने उसका जवाब दिये बिना दरवाजा पार किया और शॉपिंग मॉल से दूर चल पड़े। उनके चेहरे पर मुस्कान थी और हाथों के बीच वही धोती चमक रही थी।

नया सबक

विष्णु कुमार श्रीवास
अमलीडीह, रायपुर
जिला–अलिपुर टुवार
पिन–735228 प. बंगाल
मो. 9734042876

सुबह करीब 9 बजे झुंड के झुंड वे लोग आये और सड़े हुए दांत निपोर कर उसमें से एक आदमी बोला–''मालिक दस आदमी हैं।'' शायद भिखारियों का लीडर था।

सेठ अपनी दुकान में पसर कर बैठा हुआ था अपने वर्कर से बोला–''मोहन! उससे चिल्हर लेकर, बाकि पैसा दे दे।''

मोहन उठ कर सेठ के गल्ले से दस रूपये का नोट निकाल कर भिखारी को थमाते हुए कहा–''ये लो और बाकि के पांच रूपए लौटाओ।''

भिखारी पांच रूपए काट कर बाकि के चिल्हर लौटाया। मोहन उस चिल्हर को वापस सेठ के गल्ले में ही डाल दिया। ध्यान ही न रहा कि भिखारियों को दान देने के लिए अलग से रखी गई पेटी में इस चिल्हर को डालना है।

कुछ क्षण के बाद, दो भिखारी और आये।

''अरुण बेटा!'' अपने भतीजे से सेठ ने कहा–''उसे भी चिल्हर दे दो।''

अरूण चिल्हर लेने गया और भिखारी वाली पेटी देखी। वह तो खाली थी। वह सेठ को बोला–''चाचा! इसमें तो पैसे ही नहीं हैं।''

सेठ मोहन से पूछा–''मोहन भिखारियों से जो चिल्हर पैसा लिया था वो कहां रखा है ?''

मोहन एक क्षण के लिए खामोश रहा, फिर उसने जवाब दिया–''आपके गल्ले में ही डाला था।''

''उसमे क्यों डाला ?'' सेठ ने जवाब चाहा।

''गलती से वहीं डाल दिया।'' मोहन ने जवाब दिया।

सेठ नाराजगी जाहिर करते हुए बोला–''याद रखना अब से कभी भी भिखारियों की दी हुई चिल्हर गल्ले में नहीं डालना।''

मोहन को लगा जैसे आज नया सबक मिला है। उसे क्या पता कि भिखारियों के पैसे और भले आदमियों के पैसे में भी अंतर होता है।

बोतल का जिन्न

रजनी साहू
बी–501 कल्पवृक्ष को. हा.सो., खांदा कालोनी सेक्टर–9, प्लाट–4 न्यू पनवेल (वेस्ट)नवी मुम्बई–410206
मो.–9892096034

प्रकृति की सुन्दरता को आंखों में भरते हुए मैं समुद्र के किनारे टहल रही थी। अपने ख्यालों में मग्न और दुनियादारी से पूरी तरह बेखबर थी।

तभी अचानक मेरी नजर एक अजीब से आदमी पर पड़ी। सम्मोहित सी उसके पास चली गई और पूछ बैठी–आप कौन हैं ?

जवाब आया–बोतल का जिन्न!

मैंने पूछा–आप यहां क्या कर रहे हैं ?

वह बोला–मुझे सदियों पहले मेरे आका ने तैनात किया है आती–जाती लहरों की गिनती के लिए। उसी काम को अंजाम देने में लगा हूं।

मेरे और कुछ पूछने के पहले ही वह अपनी बातें कहने लगा।

'जिन्न' ने कहा–किनारों को किनारों से हटते देख रहा हूं। मैं कई बार इस विशाल समुद्र की दुर्दशा पर रो पड़ा हूं। कितनी शक्ति है इस समुद्र में फिर भी वह मजबूर है। चारो तरफ हरे भरे पेड़ पौधे और पक्षियों की चहचहाहट थी। कितना खूबसूरत हुआ करता था वह नजारा। कितना सुकून था। आज मैं परेशान हूं यहां फैली गंदगी, शोरगुल, और बनावटी चकाचौंध को देखकर। और तो और यहां के जलचर भी अब दम तोड़ रहे हैं। सिगरेट के कश लगाते युवक–युवतियां प्रेम की सार्थकता को बदनाम करते हुए अश्लील तरीके से लिपटे पाये जाते हैं। मैं निशब्द इसका साक्षी बनता हूं और शर्म से गड़ जाता हूं।

मैं जिन्न की बातें सुनकर सन्न रह गई। काश मैं कुछ कर पाती। सबकुछ अनसुना, अनदेखा कर मैं अपने जीवन में आगे बढ़ गई। बहुत कोशिशों के बाद जिन्न की बातें मैं भूला न पाई। काफी दिन बीतने के बाद मैंने उस जिन्न से मिलने का निर्णय किया।

जिन्न उसी जगह मिला। उसने मुझे देखते ही कहा–स्वच्छता अभियान आरंभ है, प्रदूषण खत्म करते कुछ वर्ष लगेंगे। इस पर नियंत्रण हो जायेगा, पर समाज में फैली अश्लीलता, अनैतिकता, असभ्यता की गंदगी पर कैसे नियंत्रण होगा ? खुली विचारधारा का मतलब असभ्यता, छिछोरापन नहीं है, लोगों को कैसे समझाया जायेगा ?

मेरे मुंह से अनायस ही निकल गया–अध्यात्म ही हमारी संस्कृति को बचा सकता है। पंचतत्वों के इस शरीर को हम आध्यात्म के माध्यम से दूषित होने से बचा सकते हैं।

मेरी बातें सुनकर अचानक जिन्न न जाने कहां गायब हो गया।

पुरूस्कार

काव्या कालेज के द्वितीय वर्ष की छात्रा थी। उसे पढ़ने के साथ–साथ चित्रकला का भी बड़ा शौक था। बहुत चाहकर थी वह अपनी कला की रूचि के प्रति न्याय नहीं कर पा रही थी क्योंकि वह पढ़ाई में व्यस्त रहती थी।

अपने अंदर के इस हुनर को वह दीपावली की छुट्टियों में अपने आंगन पर पूरी लगन से उतार देती थी। दीपावली के समय शाम को सभी लोग अपने घर के बाहर आंगन या सड़क पर रंगोली बनाया करते थे।

एक दिन काव्या ने पत्थर पर बैठी स्त्री क चित्र रंगीन रांगोली के माध्यम से सड़क पर इतना आकर्षक बनाया कि सड़क पर चलते लोग रूक–रूककर एकबार अवश्य देखते।

दूसरे दिन फिर शाम को रंगोली बनाने आंगन में गई तो सामने रहने वाले शर्मा जी का हमउम्र लड़का सार्थक आ गया।

उसने बताया कि कल रात लगभग साढ़े ग्यारह बजे एक सरदार सड़क पर ही बैठ गया और तुम्हारी रंगोली लगभग आधे घंटे तक देखता रहा। उसे देखकर ऐसा लग रहा था कि वह दिन भर का थकाहारा है। और वह तुम्हारी कलाकारी देखकर सुकून में डूब गया। वह तरोताजा होकर चला गया। वह कई दिनों से तुम्हारी रंगोली देखने आता है।

यह सुनकर काव्या को बहुत खुशी हुई। काव्या ने सार्थक से पूछा–तुम्हें कैसे पता चला ?

सार्थक बोला–मैं भी वही करता हूं जो सरदार करता है। कभी मैं सरदार को देखता हूं कभी तुम्हारी रंगोली को। मुझे भी बहुत सुकून मिलता है।

काव्या के चेहरे पर दिव्य मुस्कान फैल गई।

नक्कारखाने की तूती

यह शीर्षक हमारे उन विचारों के लिए है जो लगातार हमारा दम घोंटते हैं परन्तु हम उन्हें आपस में ही कह सुन कर चुपचाप बैठ जाते हैं। चुप बैठने का कारण होता हैं हमारी 'अकेला' होने की सोच! इस सोच को तड़का लगता है इस बात से कि 'सिस्टम ही ऐसा है क्या किया जा सकता है, और ऐसा सोचना पागलपन है।' हर पान की दुकान, चाय की दुकान और ट्रेन के सफर में लगातार होने वाली ये हर किसी की समस्या होती है, ये चिन्ता हर किसी की होती है। और सबसे बड़ी बात कि समस्या का हल भी वहीं होता है। ऐसी समस्या और उसका हल जो दिमाग को मथ कर रख देता हैं उनका यहां स्वागत हैं। तो फिर देर किस बात की कलम उठाईये और लिख भेजिए हमें।

जैसे–जैसे वैज्ञानिक युग छाता जा रहा है एक ऐसा परिवर्तन समाज में आ रहा है जो वैज्ञानिकता से एकदम हट कर है। वो परिवर्तन है धार्मिक कट्टरता! भगवान (ईश्वर, अल्लाह, जीसस, महावीर और अब भीम) को मानते हैं लोग पर भगवान की नहीं! भगवान की फोटो लगाकर दीपक जलाना और अगरबत्ती खोंसना ही भगवान की मानना हो चुका है। ऐसे लोगों से मिलो और उन्हें बताओ ये सब, फिर देखो न तो बाल बचेंगे न ही सिर।

यहां जिस समस्या से रूबरू होंगे वह प्रतीकात्मक है यानी प्रत्येक समाज के लिए समान रूप से लागू है। जिनका उदाहरण लिया गया है वे भगवान कुछ ज्यादा ही लाइम लाइट में हैं। इनका सीधेपन का इनके भक्तों ने खूब दुरूपयोग किया है और आज भी धड़ल्ले से कर रहे हैं। चंदा मांगना, सड़क घेरना, भजन के नाम पर फिल्मी गीत बजाना, रास्ता घेर कर जुलूस निकालना, जुलूस में शक्ति प्रदर्शन करना आदि आजकल के धर्म के अध्याय हैं। इन अध्यायों के माध्यम से हम भगवान से अपनी अपेक्षा की पूर्ति चाहते हैं। भगवान को भक्तों ने आजकल खुलेआम रिश्वतखोर की तरह प्रस्तुत कर दिया है। उनके नाम पर चंदा और फिर अपना धंधा। जो त्यौहार एक दिन मनाये जाते थे उसे खींच–खांच कर कम से कम दो दिन और पंद्रह दिन तक घसीटा जा रहा है। यदि किसी के घर परिवार का कोई बीमार हो जाये तो एक रात के लिए कोई अस्पताल में सोने वाला न मिलेगा मगर धर्म और भगवान के नाम पर महीनों काम धंधा छोड़कर सड़क पर भी सोने तैयार हो जायेंगे। रिश्तेदार मर जायेगा पांच–दस हजार के लिए पर उससे संबंध ही तोड़ लेंगे और धर्म यात्रा के नाम पर लाखों खर्च कर देंगे।

इन धर्म यात्राओं में कितना पुण्य कमाते हैं इससे ही समझा जा सकता है कि जब हम मरघट जाते हैं तो वहां शादी तक तय हो जाती है, उस मरघट में जितना मजाक और हास–परिहास होता है उतना तो आप किसी की शादी में न देख पायेंगे। धर्मक्षेत्र पहुंचकर आसपास के पर्यटन स्थलों की पहले पूछताछ होगी उसके बाद खरीददारी।

खैर हमारा विषय ये नहीं है, हमारा विषय है कि हम चंदे के माध्यम से प्राप्त करोड़ों–अरबों की राशि को बरबाद करते हैं उसे जोड़ना क्यों नहीं चाहते ? हम अपनी धार्मिक आस्था को बचाने का जरा भी प्रयास नहीं करते। और कोई दूसरे ध र्म का व्यक्ति वही काम कर देता है तो हम उसकी जान तक के दुश्मन बन जाते हैं।

आज सबसे ज्यादा दुख होता है कि जहां लोग रोज कचरा फेंकते हैं, गंदगी फैलाते हैं ऐसी जगह में हम अस्थाई पूजाघर बनाकर पूजा करते हैं। स्कूल के बाजू में, अस्पताल के पास, बुजुर्गों के घर के पास ऐसे पूजाघर बनते हैं। दिन रात शोर शराबा होता है। सड़क घेर कर धार्मिक क्रिया कलाप करना ऊपर वाले को खुश करता है या नहीं पर नीचे वालों को परेशान जरूर कर देता है। शायद ही कोई होगा जो ऐसी बातों से चिढ़कर अपशब्द न कहता हो। चंदाखोर और अधार्मिक लोगों के चलते आम आदमी पाप का भागी बन जाता है क्योंकि मुंह से भगवान के नाम पर ही अपशब्द निकल जाते हैं। बुरा जरूर लग रहा होगा ये पढ़कर परन्तु हम सभी की ऐसी ही प्रतिक्रिया रहती है। हमने तो भगवान को अपना नौकर ही मान लिया है।

ऐसे अस्थाई पूजाघरों को पार्षद, सरपंच, विधायक, मेयर, सांसद, कार्यालयीन अधिकारी आदि फण्ड देते हैं अपना वोटबैंक बनाये रखने के लिए, अपनी पकड़ बनाये रखने के लिए। फिर चंदा गैंग निकलता है मुहल्ले को लूटने। पचासों बेरोजगार लोग भीड़ बनाकर आते हैं जिससे चंदा देने वाला डर कर ज्यादा से ज्यादा पैसा दे। इस भीड़ में रोज दारू पीकर दंगा करने वाले जैसे लोग भी शामिल होते हैं। जिसने भी चंदा देने में आना कानी करी, फिर भुगतो साल भर। या तो वे घर के कांच फोड़ेंगे, कार के कांच फोड़ेंगे, या घर की महिलाओं को छेड़ेंगे। दबंगई से सभी परेशान हैं, पर मजबूर हैं क्योंकि उस भीड़ में हमारे घर का भी बेरोजगार पूत होता है।

एक छोटे से छोटे पंडाल का खर्च कम से कम दो से तीन लाख होता ही है। इस राशि में वो अवैध चंदा नहीं जुड़ा है जो हम सब मिलकर साल भर चुकाते हैं जैसे बिजली का बिल, पानी का बिल, रोड के गढ्ढे भरने का बिल, पेट्रोल का पैसा (बिना कारण के दसों दिन शार्टकट छोड़कर लंबी सड़क से जाना होता है।) नाली जाम का सफाई का बिल आदि। आजकल पंडाल से सौ–सौ मीटर दूर तक सभी दिशाओं की सड़क पर बिजली की झालर, ट्यूब लाइट, हेलोजन आदि दिनरात जलाया जाता है, क्या आपको लगता है इस बिजली

का बिल कोई पटाने जाता होगा ? अगर आप को लगता है कि सच में कोई पटाने जाता है तो वाकई महान हैं।

खैर, ये जो लाखों का खर्च है इसे प्लान करके स्थाई पूजाघर बनाकर पूजा क्यों नहीं की जाती है ? हर मुहल्ले में परमानेन्ट पूजाघर बनाये जाने की योजना क्यों नहीं बनती है ? पूजाघर ही क्यों धर्मशाला बनाई जाये गरीबों के सोने की मुफ्त सोने, रूकने की व्यवस्था बनाई जाये। इस व्यवस्था में न जाने कितने ही लोगों को स्थाई रोजगार भी मिलेगा। लोग दूसरे शहर जब किसी काम से जाते हैं तो वहां होटल में रूकने में ही हालत पतली हो जाती है। टोटल बजट का आध ाा तो होटल चार्ज में ही चला जाता है।

स्थाई पूजाघर वाली व्यवस्था से व्यक्ति को वास्तव में ध ाार्मिक होना पड़ जायेगा शायद यही डर उन्हें रोक लेता है। अगर एक साल के चंदे से जमीन खरीदी जाये और अगले साल से मंदिर, धर्मशाला का निर्माण कराया जाये, सार्वजनिक नल, गरीबों के सोने की जगह बनाई जाये तो शायद भगवान, खुदा, जीसस ज्यादा प्रसन्न होंगे। हां, ये बात अलग है कि उनके चेले ये बात पढ़ सुन कर ही पगला जायें। इस टेम्परेरी व्यवस्था से उनके धंधे का क्या होगा। उनकी भक्ति (बगुला)के चलते दुनिया परेशान होती है तो होती रहे, वे तो सीधे–सीध ो मोक्ष के द्वार पहुंच रहे हैं।

आश्चर्य की बात है कि जिसे माना जाता है कि वह अंतरआत्मा की आवाज सुन लेता है और वह कहीं भी आ सकता है, उसे हम डीजे के माध्यम से याद दिलाते हैं कि देखो हम भक्ति कर रहे हैं ध्यान दो, सो मत जाना। मानलो ऊपर वाले और नीचे वाले का वास्तव में संवाद होता तो अब तक तो झगड़ा ही हो जाता।

क्या हम इतने बेवकूफ हैं कि हम इन बातों को समझ नहीं पा रहे हैं ? या फिर समझकर न समझने में अपनी भलाई जान कर न समझना बेहतर लग रहा है। ये हमारी सोच बड़ी खतरनाक है। इसके चलते हमारी विश्वसनीयता स्वयं पर से खत्म होती जा रही है। हमें तो वही होना चाहिए वही दिखना चाहिए जो हम हैं।

यदि हमारे द्वारा जमा की गई राशि से धर्मशाला बनायी जाये और उस धर्मशाला को नाममात्र शुल्क पर लोगों की सुविधा के लिए दिया जावे तो आम जनों को कितनी राहत मिलेगी, कभी हमने सोचने की जुर्रत की है ? पर्यटन उद्योग बढ़ेगा, नौकरी ढूंढने वालों को कम खर्च में रूकने की सुविध ाा मिलेगी। छोटा मोटा धंधा करने वालों को वहां रूकने मिलेगा, उनका जीवन स्तर सुधरेगा। बेमकसद की हर साल की सजावट, टेंट, लाइट में पैसों की बरबादी के अलावा क्या है ? अगर इतनी ही श्रद्धा है तो लोग अपने पैसे खर्च करें और उतने ही जोश के साथ त्यौहार का मजा लें और पुण्य कमाएं। चंदा (एक तरह की लूट और डकैती) के पैसों से मोक्ष कैसे मिलेगा ? सड़क में बैठ कर पूजा पाठ से मात्र अन्य लोगों को असुविधा ही होगी।

धर्म के नाम पर इतने सारे दिनों तक अपनी ऊर्जा की बरबादी करके क्या मिलता है पता नहीं ? उतने समय में वे अपने न जाने कितने महत्वपूर्ण काम निबटा सकते हैं। धर्म मानना और धर्म का दिखावा करना दोनों में जो अंतर है उसे ही बाजार की शक्तियां भुनाती हैं। आप देखिए आज कल बाजार में पूजा संबंधित सभी चीजें रेडिमेड मिलती हैं। जैसे कि दुर्गा पूजा के वक्त अनेक डिजाइनों में चुनरी, कांवड़ यात्रा के लिए ड्रेस व प्लास्टिक के कांवड़ सेट, लगभग हर मंदिर के आसपास प्रसाद, फूल, फोटो, गाने की सीडी की दुकानें।

लोग पूजा पाठ के चक्कर में इस कदर पड़ गये हैं कि वे कर्म की जगह भाग्य को ही मुख्य स्थान देने लगें हैं। **जबकि भाग्य यदि कुछ है तो वह भी पहले का पुरूषार्थ ही है।** आज का पुरूषार्थ कल का भाग्य माना जा सकता है।

जगह जगह मंदिर, मस्जिद बना कर हम अपनी जनता को भाग्यवादी कर्मकांडी और कट्टर रूप प्रदान कर रहे हैं। सड़कों पर हथियारों का प्रदर्शन कर हम किस तरह की देवभक्ति करते हैं ? यह तो साफ–साफ शक्तिप्रदर्शन है।

धर्म निहायत ही पर्सनल चीज है। इसलिए उसके पालन से किसी अन्य को तकलीफ नहीं होनी चाहिए। इसलिए धर्म का प्रदर्शन सड़कों पर न करके अपने अपने घरों में हो। और सामान्यजनों के बीच एक इंसानियत का गुण होना चाहिए। वृद्धों को होने वाली असुविधाओं का ख्याल रखना किसका फर्ज है ? कौन आयेगा जो उनका ध्यान रखेगा ? धर्म का ये कैसा पालन है, कैसी गलत परिभाषाओं से जकड़ दिया गया है जो दूसरों को असुविधाओं में ढकेलने वालों को मोक्ष पहुंचाता है ?

ईश्वर अपने नाम को बदनाम करने वालों को सद्बुद्धि प्रदान करे।

पत्रिका मिली

दिवान मेरा
सम्पादक–नरेन्द्रसिंह परिहार
मूल्य–20 रूपये
पता–सी004, उत्कर्ष अनुराधा, सिविल लाईन्स
नागपुर–440001
संपर्क–09561775384

अविराम साहित्यिकी
सम्पादक–डॉ.उमेश महादोषी
मूल्य–25 रूपये
पता–121इन्द्रापुरम, बीडीए कालोनी के पास, बदायूं रोड, बरेली उ.प्र.
संपर्क–09458929004

दिनकर जयंती व हिन्दी दिवस

साहित्य एवं कला समाज जगदलपुर ने लगातार बस्तर जिले में अपनी साहित्यिक गतिविधियों से साहित्यिक हलचल मचा दी है। हिन्दी पखवाड़ा एवं दिनकर जयंती के अवसर पर 25 सितम्बर को आकृति के सभागार में काव्य गोष्ठी एवं परिचर्चा आयोजित की गयी। भानपुरी से पधारीं कवियत्री श्रीमती अलका पाण्डे के मुख्य आतिथ्य व क्षेत्र के जबरदस्त गजलकार नूर जगदलपुरी की अध्यक्षता में सर्वप्रथम राष्ट्रकवि श्री रामधारी दिनकर जी को माल्यार्पण कर श्रद्धांजली दी गई।

जयचन्द्र जैन वरिष्ठ विचारक ने अपने उद्‌गारों में हिन्दी की दुर्दशा के कारणों में लार्ड मैकाले को मुख्य दोषी बताया। वहीं किशोर मनवानी शिक्षक केन्द्रीय विद्याालय ने सपरिवार उपस्थिति देकर हिन्दी के प्रति चिन्ता जाहिर की। उन्होंने बताया कि शिक्षा की नई नीति की आवश्यकता है जिसके निर्माण में शिक्षकों की भागीदारी भी हो। बी.एल.सारस्वत ने अपनी ओजमयी वाणी से हिन्दी और देश की विकट स्थितियों पर वीर रस की कविता का पाठ किया।–मातृभूमि के हमलावर यहां महिमामंडित होते हैं/वीर जवानों की लाशों पर जहां दो आंसू रो लेते हैं।

अलका पाण्डे ने अपनी कविता में कहा– इस पंथ का उद्‌देश्य नहीं शांत भवन में टिके रहना/ किन्तु चले जाना उस हद तक/ जिसके आगे राह नहीं।

बस्तर क्षेत्र के दोहाकिंग अवधकिशोर शर्मा ने अपने दोहों से महफिल को बता दिया कि दोहे उर्दू शायरी से कमतर नहीं हैं– फूलों सी मुस्कान है कलियों जैसा रूप/बेटी खुशबु चांदनी, बेटी शबनम धूप।

श्रीमती रीना जैन ने अपनी मधुर आवाज में श्रृंगार की कविता सुनाई–पिया मिलन को प्रिया अधीर है/इत उत भटके चैन कहां पाई। जे.पी.दानी संपादक सृजन संदेश ने अपनी नई कविता सुनाई–तुमसे दूर रहकर ही/अनेकों शेरों–शायरियां, ठुमरी ठप्पे रूबाईयां/गीत गजल और कवालियां/तुमसे दूर रह कर ही जानी हैं। सुरेश चितेरा, छत्तीसगढ़ी और हिन्दी के कवि ने गीत सुनाया–गांव ह भैया गांव नई ये/ भुंइयां म कखरो पांव नई ये। नवोदित कवियत्री चंद्रकांति ने अपनी नई कविता सुनाई–संकुचित कुमुद में तरूणाई/आई मुस्काती हुई। नवोदित कवियत्री चमेली कुर्रे लगातार अपने गीतों और कविताओं में पकड़ बनाती हुई अपनी उपस्थिति बना रही हैं। उनका गीत था–रणभूमि में जो शहीद हुए हैं/ऐसे वीर जवान बनो/ जो बचा ले देश की लाज को/ ऐसे सर्वशक्तिमान बनो। बड़ी दूर से आयोजन में शामिल होने आईं पूनम विश्वकर्मा ने नक्सलवाद पर चिन्ता जाहिर की– तिमेड़ के आखिरी छोर पर/इंद्रावती के बहते पानी में/मैं घुटनों तक डूबकर/महसूस कर लेती हूं/बस्तर का सारा सच। नवोदित कवि सूरज नारायण लगातार जता रहे हैं कि वे अब नवोदित नहीं रह गये हैं– मेरा मन मानने को तैयार ही नहीं/कि तुम हो इस देश के प्रधान। नरेन्द्र पाढ़ी वरिष्ठ कवि हिन्दी/हल्बी एवं रंगमंच कलाकार ने चिन्ता व्यक्त कि–अब बस्तर जल रहा है/चारों तरफ आग की लपटें हैं/कहां है मेरा बस्तर। ऋषि शर्मा ऋषि ने अपनी गजलों से मन मोह लिया–सागर और किनारे चुप हैं/जलते हुए अंगारे चुप हैं। भरत गंगादित्य हल्बी हिन्दी में कविताएं रचने वाले रंगमंच कलाकार ने अभियान गीत गाया–रात अंधेरी दूर करेंगे, दीपक जला चल रहे हम/एक दीप से दूजा जलता, ले हौसले पल रहे हम। नवोदित कवियत्री पूर्णिमा सरोज ने देश भक्ति गीत सुनाया–प्यारे भारतवर्ष पर/सर्वस्व निछावर रहे/जीवन रहे न रहे/ देश मेरा स्वतंत्र रहे। शशांक शेण्डे वरिष्ठ हास्य व व्यंग्य कवि ने रामधारी दिनकर जी चार पंक्तियां पढ़कर उन्हें श्रद्धांजली दी।

मंच संचालन कर रहे साहित्य एवं कला समाज के अध्यक्ष सनत जैन इन पंक्तियों के साथ साढ़े तीन घंटे चली गोष्ठी के समापन की घोषणा की और आभार व्यक्त किया–हिन्दी केवल भाषा नहीं बल्कि जीवन संस्कार है/हमारा प्रकृति से जुड़ जाने का बड़ा आधार है/ हिन्दी है तो पीपल है, बरगद है, आंवला है/ तुलसी है आंगन में और आम का तोरणद्वार है।

कार्यक्रम में वरिष्ठ चित्रकार व आकृति के संचालक बी.एल.विश्वकर्मा, वरिष्ठ कवियत्री मोहिनी ठाकुर, वरिष्ठ कहानीकार उर्मिला आचार्य, कवि विमल तिवारी, डॉ. राजेश थनथराटे, व्यंग्य रचनाकार डॉ. प्रकाश, बस्तर ड्रीम्स के सम्पादक कृष एवं बस्तर ड्रीम्स के ही डिजाइनर राधेश्याम व अन्य गणमान्य लोग उपस्थित थे।

स्कूल में मनाया हिन्दी दिवस

साहित्य एवं कला समाज जगदलपुर ने लगातार बस्तर जिले में अपनी साहित्यिक गतिविधियों से साहित्यिक हलचल मचा दी है। हिन्दी पखवाड़ा एवं दिनकर जयंती के अवसर पर 23 सितम्बर को हायर सेकेण्डरी स्कूल करंजी में काव्य गोष्ठी एवं परिचर्चा आयोजित की गयी। छात्रों ने अपने अद्‌भुत विचारों से उपस्थित साहित्यकारों को प्रभावित किया। स्कूल के प्राचार्य श्री रविन्द्र विश्वास ने स्कूल का भ्रमण कराया और दिखाया कि वो अपने कार्य के प्रति किस कदर समर्पित हैं। उनके स्कूल की साफ सफाई और व्यवस्था शानदार है। उनके खुद के प्रयासों से वैज्ञानिकों, साहित्यकारों, देश के समस्त प्रधानमंत्रियों व राष्ट्रपतियों, भारतरत्न प्राप्त विभूतियों की फोटो बनवा कर स्कूल के विभिन्न कक्षों में लगवाई हैं।

कवियों में जे.पी.दानी, नरेन्द्र पाढ़ी, विमल तिवारी, शशांक शेण्डे, चंद्रेश शर्मा, सनत जैन, बी.एल.सारस्वत के द्वारा काव्य पाठ किया गया। छ.ग. हिन्दी साहित्य परिषद जगदलपुर ईकाई के द्वारा समस्त छात्रों को प्रमाणपत्र भी प्रदान किये गये। सनत जैन के द्वारा स्कूल लाइब्रेरी को दो पुस्तकें भी प्रदान की गईं।

जगदलपुर के कवियों ने शमां बांधा

आओ साथ चलो/एक बार फिर, देश को सोने की चिड़िया बना दें।/भ्रष्टाचार का अचार बना कर, भ्रष्टाचारियों को खिला दें/सूदखोरों और मुनाफाखोरों को आदमखोर बन/मिट्‌टी में मिला दें।

देश भक्ति के इस जज्बे के साथ साहित्य एवं कला समाज, जगदलपुर के कवियों ने बचेली की छत्तीसगढ़ साहित्य एवं क्रीडा समिति द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन में धूम मचा दी। बचेली की इस समिति के महासचिव के.एल.वर्मा एवं समिति के अन्य सदस्यों द्वारा की गई शानदार व्यवस्था और शानदार साउण्ड सिस्टम के माध्यम से लगभग तीन घंटों तक दूर–दूर के लोगों ने कवि सम्मेलन का आनंद लिया।

युनूस भाई बचेली निवासी ने अपने कुशल मंच संचालन और ग़ज़ल प्रस्तुति से मन मोह लिया। हास्य कवि शशांक श्रीधर ने अपने चुटीले अंदाज में दहेज प्रथा पर चोट करते हुए कविता पढ़ी। तो दूसरी ओर रीना जैन ने अपने गीतों से मन मोह लिया। नरेन्द पाढ़ी ने अपनी हल्बी और हिन्दी की कविता से हंसाया। सुरेश चितेरा ने अपने गीतों से शमा बांधा और बचेली की कवियत्री शकुनतला शेण्डे ने अपनी सुरीली आवाज में कई गीत प्रस्तुत कर तालियां बटोरी। सनत जैन ने अपनी हास्य कविताओं से वहां उपस्थित जनसमुदाय को खूब हंसाया। उन्होंने अपनी देशभक्ति रचना कुछ यूं पढ़ी– आजकल खून में नहीं उबाल आ रहा है/क्योंकि पाकेट में दो नंबर का माल आ रहा है।

छत्तीसगढ़ साहित्य एवं क्रीडा समिति बचेली ने मुख्य अतिथि के बतौर मुख्य संयुक्त प्रबंधक (उत्पादन) श्री संजीव साही एवं मुख्य संयुक्त प्रबंधक (वित्त) श्री आर. मारकानी को आमंत्रित कर कार्यक्रम को गरीमामय बना दिया। सरस्वती वंदना दीप प्रज्ज्वलन एवं स्वागत अमृत लाल यदु, केतन साहू एवं के.एल.वर्मा आदि ने मुख्य अतिथियों के साथ संपन्न किया।

बस्तर पाति–साहित्य सेवा

''बस्तर पाति'' मात्र पत्रिका प्रकाशन ही नहीं है बल्कि इस क्षेत्र का साहित्यिक दस्तावेज है। हम और आप मिलकर तैयार करेंगे एक नई पीढ़ी; जो इस क्षेत्र का साहित्यिक भविष्य बनेगी। मिलजुलकर किया प्रयास सफल होगा ऐसा विश्वास है। हमें करना यह है कि लोगों के बीच जायें उनके बीच साहित्यिक रूचि रखने वाले को पहचाने और फिर लगातार संपर्क से उन्हें लिखने को प्रेरित करें। उनके लिखे को प्रकाशित करना ***''बस्तर पाति''*** का वादा है। रचनाशील समाज रचनात्मक सोच से ही बनता हैं, ये सच लोगों तक पहुंचाने के अलावा रचनाशील बनाना भी हमारा ही कर्तव्य है। लोक संस्कृति के अनछुए पहलूओं के अलावा जाने पहचाने हिस्से भी समाज के सम्मुख आने ही चाहिये। आज की आपाधापी वाली जिन्दगी में मानव बने रहने के लिए मिट्टी से जुड़ाव आवश्यक है। खेत–किसान, तीज–त्यौहार, गीत–नाटक, कला–संगीत, हवा–पानी आदि के अलावा घर–द्वार, माता–पिता से निस्वार्थ जुड़ाव की जरूरत को जानते बूझते अनदेखा करना, अपने पांवों कुल्हाड़ी मारना है, इसलिए हमारी सोच के साथ जीवन में भी साहित्य का उतरना नितांत आवश्यक है। साहित्य मात्र कुछ ही पढ़े–लिखे लोगों की बपौती नहीं है बल्कि लोक की सम्पदा है इसलिए सभी गरीब–अमीर, पढ़े–लिखे लोगों को जोड़ने की बात है। कला की प्रत्येक विधा हमें मानव जीवन सहेजने की शिक्षा देती है। हां, ये अलग बात है कि हम उसे समझना चाहते हैं या फिर समझाना नहीं चाहते हैं। लोक जीवन, लोक संस्कृति और लोक साहित्य, इन सभी में एक ही विषय समाहित है, एक ही आत्मा विराजमान है, इसलिए किसी एक पर बात करना ही हमें मिट्टी से जोड़ देता है, हमें मानव बने रहने पर मजबूर कर देता है।

मेरा निवेदन है कि हम अपने क्षेत्र के लोगों को ***''बस्तर पाति''*** से जोड़ें और उन्हें अपनी रचनात्मक भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित करें। ***''बस्तर पाति''*** के पंचवर्षीय सदस्य बनकर इस साहित्यिक आंदोलन के सक्रिय सहयोगी बनें। ***''बस्तर पाति''*** को मजबूत बनाने के लिए आर्थिक आधार का मजबूत होना आवश्यक है। इस छोटी–सी किरण को सूरज बनना है और आप से ही संभव है, इसलिए रचनात्मक सहयोग के साथ ही साथ आर्थिक सहयोग प्रदान करते हुए आज ही पंचवर्षीय सदस्य बनें। अपने मित्रों को जन्मदिन और सालगिरह पर उपहार स्वरूप पंचवर्षीय सदस्यता दें। याद रखें, ज्ञान से बड़ा उपहार हो ही नहीं सकता है। हमारा पता है–

सदस्यता फार्म

मैं ***''बस्तर पाति''*** हिन्दी त्रैमासिक का पंचवर्षीय सदस्य बनना चाहता हूं। कृपया मुझे सदस्य बनायें। मेरा नाम व पता निम्नानुसार है–

नाम–.....

पता–.....

.....

.....

.....

शिक्षा–.....**अन्य जानकारी**.....

.....

मोबाइल नं.–.....**ईमेल**.....

500/– (रूपये पांच सौ) नगद/ मनीआर्डर / अकाउंट नंबर 10456297588 एसबीआई जगदलपुर (आईएफएस कोड 00392) द्वारा भेज रहा हूं। दिनांक–

हस्ताक्षर

प्रति,

''बस्तर पाति''
साहित्य एवं कला समाज
सन्मति गली, सन्मति इलेक्ट्रीकल्स, दुर्गा चौक के पास, जगदलपुर जिला बस्तर छ.ग. पिन–494001
मो.–09425507942 ईमेल–paati.bastar@gmail.com

बस्तर पाति के लिए विज्ञापन दर

पत्रिका में स्थान (मल्टीकलर)	***दर प्रति अंक***
पिछला पेज	
पूरा	***10000/–***
आधा	***5000/–***
पिछले से पहला	
पूरा	***5000/–***
आधा	***3000/–***
मध्य के दो पेज पूरे (ब्लैक एण्ड व्हाइट)	***20000/–***
भीतर के पेज में कहीं भी	
पूरा	***2000/–***
आधा	***1000/–***
एक चौथाई	***500/–***
सभी पेज में नीचे एक लाइन की विज्ञापन पट्टी	***10000/–***

ध्यान रखिए, आपका सहयोग साहित्य एवं हिन्दी के प्रसार में उपयोग होगा।

कविता का रूप कैसे बदलता है देखें जरा। नये रचनाकार ने लिखा था, नवीन प्रयास था इसलिए कसौटी पर खरा नहीं उतरा। उसी कविता को कैसे कसौटी पर खरा उतारें–

कागज

कागज फेंके इधर उधर
कभी फाड़े, कभी मोड़कर।
जब भी मिला मौका कागज को
दो कौड़ी का साबित कर दिया।
जरा सी गलती पर
पूरी कापी बदल दी।
छपते रहे न्यूज पेपर
जाने उसमें किसने
समोसे धरे तो जलेबी बांधी।
स्कूलों में हर साल
पिछले क्लास की पुस्तकों के
चित्रों की वर्क बुक बनवाई।
आज भी घर में दादाजी की पुस्तकें हैं
जिससे पापा पढ़े थे
आज पढ़ना चाहें भी तो कैसे पढ़ें
स्कूल की दुकान कैसे चलेगी।

यही कविता कुछ अन्य पंक्तियां जोड़ने पर देखें कैसे रूप बदलकर रोमांचित करती है–

कागज

कागज फेंके इधर उधर
कभी फाड़े, कभी मोड़कर।
जब भी मिला मौका कागज को
दो कौड़ी का साबित कर दिया।
जरा सी गलती पर
पूरी कापी बदल दी।
छपते रहे न्यूज पेपर
जाने उसमें किसने
समोसे धरे तो जलेबी बांधी।
स्कूलों में हर साल
पिछले क्लास की पुस्तकों के
चित्रों की वर्क बुक बनवाई।
आज भी घर में दादाजी की पुस्तकें हैं
जिससे पापा पढ़े थे
आज पढ़ना चाहें भी तो कैसे पढ़ें
स्कूल की दुकान कैसे चलेगी।
जब रूक जायेंगी सांसें पेड़ों की
तब कौन ऑक्सीजन बेचेगा ?

23 जुलाई 2016

हर पत्ते, दरख़्त, जर्रे–जर्रे में तुझे पाता हूँ,
अहसास की ये कैसी खुशफहमी है,
कभी तस्वीर से निकलकर सामने तो आ,
देख तेरे सजदे में कैसे सर झुकाता हूँ।

खोने का डर (11 जून 2016)

एक मुद्दत हुई कलम से कागज़ पर
कोई पूरा पैराग्राफ लिखे हुए,
मुझे डर है, कहीं अपनी लिखावट न खो दूं।
जब से चला है की–बोर्ड जर्नलिज्म का दौर,
हाथों से लिखना कम हो गया है।
डायरी में नोट भी करता हूँ, तो लगता है
जैसे बस कंडक्टर ने टिकट काटा हो।
आजू–बाजू में बैठे लोग समझते हैं,
बंदा जरूर शार्ट हैण्ड में कुछ लिख रहा है,
पर अपने को पता है,
डॉक्टर का लिखा केवल
मेडिकल स्टोर वाला पढ़ सकता है,
लेकिन रिपोर्टर के लिए
पीसी में लिखी खुद की राइटिंग को
बाद में पढ़ना,
कितना मुश्किल होता है।
यह ठीक वैसा ही है,
जैसे तेज रफ़्तार दुनिया में
पैदल चलने का हुनर भूलना।

श्री शैलेन्द्र ठाकुर की वॉल से

महंगाई के छंद

डिजीटल इंडिया जरूर लाइए,
लेकिन डाटा पैक के दाम मत बढ़ाइए।
तकलीफ होती है, फेसबुक, वाट्सअप चलाने में,
प्लीज थोड़ा तो इंटरनेट को सस्ता कर दीजिए।
पेट्रोल के दाम और घटाइए,
मगर केरोसिन जरूर समय पर दिलाइए।
महंगा हो गया है चूल्हे को सुलगाए रखना,
प्लीज रसोई गैस के दाम मत बढ़ाइए।।
गरीब को भी मिले कटोरी भर दाल,
कसम है आपको महंगाई की दुकान की,
प्लीज महंगाई डायन को कुछ तो कंट्रोल में कीजिए।

बस्तर पाति को मूर्तरूप देने वाले सहयोगी

संस्थापक सदस्यः–

श्री एम.एन.सिन्हा, दल्ली राजहरा छ.ग.
श्री आशीष राय, जगदलपुर, छ.ग.
श्री अमित नामदेव, रायपुर, छ.ग.
श्री गौतम बोथरा, रायपुर, छ.ग.
श्री कमलेश दिल्लीवार, रायपुर, छ.ग.
श्री सुनील अग्रवाल, कोरबा, छ.ग.
श्री संजय जैन, भाटापारा, छ.ग.
श्रीमती ममता जैन, जगदलपुर, छ.ग.
श्री सनत जैन, जगदलपुर, छ.ग.

परम सहयोगीः–

श्रीमती उषा अग्रवाल, नागपुर
श्री शशांक श्रीधर, जगदलपुर
श्री महेन्द्र जैन, कोण्डागांव
श्री आनंद जी. सिंह, दंतेवाड़ा
श्री विमल तिवारी, जगदलपुर
श्री उमेश पानीग्राही, जगदलपुर

सदस्यः–श्रीमती जयश्री जैन, श्रीमती रचना जैन, शमीम बहार, मनीष अग्रवाल जगदलपुर, श्याम नारायण श्रीवास्तव रायगढ़, श्रीमती अशलेषा झा, नलिन श्रीवास्तव राजनादगाव, ऋषि शर्मा 'ऋषि', बीरेन्द्र कुमार मौर्य जगदलपुर, टी आर साहू दुर्ग, श्रीमती गुप्तेश्वरी पाण्डे जगदलपुर, श्रीमती बरखा भाटिया कोण्डागांव, निर्मल आनंद कोमा, राजिम, कांति अरोरा बिलासपुर, राजेन्द्र जैन भिलाई, मिश्रा जी, नूर जगदलपुरी जगदलपुर, हरेन्द्र यादव कोण्डागांव, महेन्द्र यदु कोण्डागांव, एस.पी.विश्वकर्मा कोण्डागांव, सुश्री उर्मिला आचार्य जगदलपुर, श्रीमती प्रभाती मिंज बिलासपुर, श्रीमती सोनिका कवि, जितेन्द्र भदोरिया जगदलपुर, आर.बी. तिवारी महासमुंद, मे. होटल रेनबो जगदलपुर, संजय मिश्रा रायपुर, इश्तियाक मीर जगदलपुर, सोनिया कुशवाह, श्रीमती पूर्णिमा सरोज रूपाली सेठिया, राजेश श्रीवास्तव, महेन्द्र सिंह ठाकुर, चंद्रशेखर कच्छ, में.पदमावती किराना स्टोर्स, दिलिप देव, तृप्ति परिडा, धरमचंद्र शर्मा, हेमंत बघेल जगदलपुर जी.एस. वरखड़े जबलपुर, लक्ष्मी कुडीकल जगदलपुर, अनिल कुमार जयसवाल भिलाई, वीरभान साहू रायपुर, प्रीतम कौर, मनीष महान्ती, प्रणव बनर्जी, शेफालीबाला पीटर, यशवर्धन यशोदा, शरदचंद्र गौड़, सुरेश विश्वकर्मा श्रीमती शांती तिवारी, विनित अग्रवाल, एन.आर. नायडू, श्रीमती मोहिनी ठाकुर, जयचंद जैन, कुमार प्रवीण सूर्यवंशी, भरत गंगादित्य, मिनेष कुमार जगदलपुर, शिव शंकर कुटारे नाराणपुर, सुशील कुमार दत्ता जगदलपुर, अखिल रायजादा बिलासपुर, श्रीमती दंतेश्वरी राव कोण्डागांव, पी. विश्वनाथ जगदलपुर, श्रीमती रजनी साहू मुबई, श्रीमती वंदना सहाय नागपुर, श्रीमती माधुरी राउलकर नागपुर, श्रीमती रीमा चढ्ढा नागपुर, अरविन्द अवस्थी मिर्जापुर, देव भंडारी दार्जीलिंग, जगदीशचंद्र शर्मा घोड़ाखाल नैनीताल, श्रीमती विभा रश्मि जयपुर, नुपूर शर्मा भोपाल, मो.जिलानी चंद्रपुर, डॉ.अशफॉक अहमद नागपुर, रमेश यादव मुंबई श्रीमती सुमन शेखर ठाकुरद्वारा, पालमपुर हि.प्र., श्रीमती प्रीति प्रवीण खरे भोपाल, डॉ. सूरज प्रकाश अष्ठाना भोपाल, डी.पी.सिंह रायपुर, प्राचार्य दंतेश्वरी महाविद्यालय दंतेवाडा, रोशन वर्मा कांकेर, मनोज गुप्ता रायपुर, श्रीमती कमलेश चौरसिया नागपुर, डॉ. कौशलेन्द्र जगदलपुर, पूनम विश्वकर्मा बीजापुर, अमृत कुमार पोर्ते, जगदलपुर, अविनाश ब्यौहार जबलपुर, धनेश यादव, नारायणपुर, कृष्णचंद्र महादेविया, केशरीलाल वर्मा, बचेली, संदीप सेठिया तोकापाल, श्रीमती हितप्रीता ठाकुर, परचनपाल, गोपाल पोयाम, पंण्डरीपानी, श्रीमती खुदेजा खान, जगदलपुर, श्रीमती वीना जमुआर पूना, श्रीमती रजनी त्रिवेदी, जगदलपुर श्रीमती मेहरून्निसा परवेज़, भोपाल, धरणीधर, डिमरापाल, चंद्रकांति देवांगन, जगदलपुर, श्रीमती तनुश्री महांती जगदलपुर, चंद्रमोहन किस्कू झारखण्ड, डॉ उषा शुक्ला जगदलपुर, चमेली कुर्रे जगदलपुर, क्षत्रसाल साहू दुर्गापुर, गौतम कुमार कुण्डू जगदलपुर, रीना जैन जगदलपुर, अलका पाण्डे भानपुरी, प्रहलाद श्रीमाली, चेन्नई

बस्तर पाति का कवर पेज
श्री सुरेश दलई

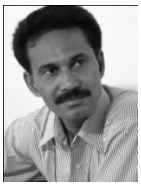

बस्तर की उर्वर धरती अपने भीतर न जाने कितने ही बीज समेटे हुए है जो कभी नजर आते ही नहीं हैं।

समय समय पर उन बीजों का पल्लवन, पुष्पन अपनी सोंधी खुशबू से इस उपवन को महका देता है। हां, एक बात और, इस धरा की इस मिट्टी की एक खासियत और है वो है स्वयं को वन के भीतर के वृक्षों पुष्पों की तरह आम जगत से अंजान रखना। सुरेश जी उसी कड़ी के संकोची कलाकार हैं जो रचते तो बहुत कुछ हैं पर स्वयं को छिपा कर रखते हैं। उनके ब्रश और कलर साथ मिलते ही एक जीवंत कलाकृति को जन्म दे देते हैं। मूलतः पानी में घुलनशील रंगों से खेलना पसंद करते हैं। कभी कभार ब्लैक एण्ड व्हाइट से भी जादू का खेल दिखाना पसंद करते हैं। उनका मिलनसार और सहयोगी स्वभाव ही है जो उन्हें सबका दोस्त बना देता है। उन्होंने कविता में भी जोर आजमाइश की है। अगले किसी अंक में उस पर भी उनकी पकड़ देखेंगे। फिलहाल कवर पेज का आनंद लें।

बात पते की

"कई ग्राहकों के शरीर से आती गंध मुझे जरा भी नहीं सुहाती है। ऐसा लगता है उल्टी हो जाएगी।" सितारा ने अपने मन की परेशानी अपनी सहेली से बताई।

"बिल्कुल पागल है तू! तू उसे सूंघती है जो तुझे नोचने–खसोटने आता है। अरी पगली हमें उस ग्राहक को कैसे नोचना है यह सोचना चाहिए।"

अखबार

अब तक वह तीन बार अपनी पत्नी को झिड़क चुका था। बैठक से किचन के बीच लगातार चलते प्रवास से पता चल रहा था कि वह किस कदर बेचैन है। तभी दरवाजे की ओर लगभग दौड़ पड़ा।

क्योंकि सामने वाले घर में अखबार पढ़कर रखा जा चुका था।

सनत जैन

बैक कवर के फोटोग्राफर सत्यजीत भट्टाचार्य

समूचे बस्तर की शान रंगकर्मी श्री सत्यजीत भट्टाचार्य का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं है। उन्होंने पूरे देश में अपने रंगकर्म से अपना और बस्तर क्षेत्र का नाम रोशन किया है। उनके कैमरे भी हमेशा कमाल दिखाते हैं। उनकी खींची हुई तस्वीर में जीवंतता हावी होती है। उनका कैमरा बोलता है, यह कहना अतिश्योक्ति न होगा। उनके द्वारा ली गई तस्वीरें भविष्य में भी हमें देखने को मिलेंगी।